सूरतुत्तौबा

तम्हीदी कलिमात

सूरतुत्तौबा कई ख़ुतबात पर मुश्तमिल है और इनमें से हर ख़ुतबा अलग पसमंज़र में नाज़िल हुआ है। जब तक इन मुख्तलिफ़ ख़ुतबात के पसमंज़र और ज़माना-ए-नुज़ूल का अलग-अलग तअय्युन दुरुस्त अंदाज़ में ना हो जाए, मुतालक़ा आयात की दुरुस्त तौजीह व तशरीह करना मुमकिन नहीं। चुनाँचे जिन लोगों ने इस सूरत की तफ़सीर करते हुए पूरी अहतियात से तहक़ीक़ नहीं की, वो ख़ुद भी मुगालतों का शिकार हुए और दूसरों को भी शुक़ूक़ व शुब्हात में मुब्तला करने का बाइस बने हैं। इस लिहाज़ से यह सूरत क़ुरान हकीम की मुश्किल तरीन सूरत है और इसकी तफ़हीम के लिये इन्तहाई मोहतात तहक़ीक़ और गहरे तदब्बुर की ज़रूरत है।

सूरतुत्तौबा और हुज़ूर ﷺ की बेअसत के दो पहलू: मुहम्मद ﷺ से क़ब्ल हर पैग़म्बर को एक ख़ास इलाक़े और ख़ास क़ौम की तरफ़ मबऊस किया गया, मगर आप ﷺ अपनी क़ौम (बनी इस्माईल) की तरफ़ भी रसूल बन कर आये और क़यामत तक के लिये पूरी दुनिया के तमाम इन्सानों की तरफ़ भी। यह फ़ज़ीलत तमाम अम्बिया व रुसुल में सिर्फ़ आप ﷺ के लिये मख़सूस है कि आप ﷺ को दो बेअसतों के साथ मबऊस फ़रमाया गया, एक बेअसते ख़ुसूसी और दूसरी बेअसते अमूमी। आप ﷺ की बेअसत के इन दोनों पहलुओं के हवाले से सूरतुल तौबा की आयात में भी एक बड़ी ख़ूबसूरत तक़सीम मिलती है। वह इस तरह कि इस सूरत के भी बुनियादी तौर पर दो हिस्से हैं। इनमें से एक हिस्सा आप ﷺ की बेअसत के ख़ुसूसी पहलु से मुताल्लिक़ है, जबकि दूसरे हिस्से का ताल्लुक़ आपकी बेअसत के अमूमी पहलु से है। चुनांचे सूरत के इन दोनों हिस्सों के मौज़ूआत व मज़ामीन को समझने के लिये ज़रूरी है कि पहले हुज़ूर ﷺ की बेअसत के इन दोनों पहलुओं के फ़लसफ़े को अच्छी तरह ज़हन नशीन कर लिया जाये।

हुज़ूर ﷺ की बेअसते ख़ुसूसी: मुहम्मद अरबी ﷺ की ख़ुसूसी बेअसत मुशरिकीने अरब या बनु इस्माईल की तरफ़ थी। आप ﷺ का ताल्लुक़ भी उसी क़ौम से था और आप ﷺ ने उन लोगों के अंदर रह कर, ख़ुद उनकी ज़बान में, अल्लाह का पैग़ाम उन तक पहुँचा दिया और उन पर आखरी हद तक इत्मामे हुज्जत भी कर दिया। इसी ज़िमन में फ़िर मुशरिकीने अरब पर अल्लाह के उस क़दीम क़ानून का निफ़ाज़ भी अमल में आया कि जब किसी क़ौम की तरफ़ कोई रसूल भेजा जाए और वह रसूल अपनी दावत के सिलसिले में उस क़ौम पर इत्मामे हुज्जत कर दे, फ़िर अगर वह क़ौम अपने रसूल की दावत को रद्द कर दे तो उस पर अज़ाबे इस्तेसाल मुसल्लत कर दिया जाता है। इस सिलसिले में मुशरिकीने अरब पर अज़ाबे इस्तेसाल की नौइयत मारौज़ी हालात के पेशे नज़र पहली क़ौमों के मुक़ाबले में मुख्तलिफ़ नज़र आती है। इस अज़ाब की पहली क़िस्त गज़वा-ए-बदर में मुशरिकीने मक्का की हज़ीमत व शिकस्त की सूरत में सामने आई जबकि दूसरी और आखरी क़िस्त का ज़िक्र इस सूरत के आग़ाज़ में किया गया है। बहरहाल अपनी बेअसते ख़ुसूसी के हवाले से हुज़ूर ﷺ ने ज़ज़ीरा नुमाए अरब में दीन को ग़ालिब कर दिया, और वहाँ आप ﷺ की हयाते मुबारका ही में अक़ामते दीन का अमली नक़शा अपनी पूरी आब व ताब के साथ जलवागर हो गया।

हुज़ूर ﷺ की बेअसते अमूमी: नबी अकरम ﷺ की बेअसते अमूमी पूरी इंसानियत की तरफ़ क़यामत तक के लिये है। इस सिलसिले में दावत का आगाज़ आप ﷺ ने सुलह हुदैबिया (6 हिजरी) के बाद फ़रमाया। इससे पहले आप ﷺ ने कोई मुबल्लिग़ या दाई अरब के बाहर नहीं भेजा, बल्कि तब तक आप ﷺ ने अपनी पूरी तवज्जो ज़ज़ीरा नुमाए अरब तक मरकूज़ रखी और अपने तमाम वसाइल उसी ख़ित्ते में दीन को ग़ालिब करने के लिये सर्फ़ किये। लेकिन ज्यों ही आप ﷺ को इस सिलसिले में ठोस कामयाबी मिली, यानि क़ुरैश ने आप ﷺ को बतौरे फ़रीक़ सानी के तस्लीम करके आप ﷺ से सुलह कर ली, (क़ुरान ने सूरतुल फ़तह की

पहली आयत में इस सुलह को "फ़तह मुबीन" क़रार दिया है) तो आप ﷺ ने अपनी बेअसते अमूमी के तहत दावत का आगाज़ करते हुए अरब से बाहर मुख्तलिफ़ सलातीन व उमरा (leaders) की तरफ़ ख़ुतूत भेजने शुरू कर दिए। इस सिलसिले में आप ﷺ ने जिन फ़रमानरवाओं को ख़ुतूत लिखे, उनमें क़ेसर-ए-रोम, ईरान के बादशाह कसरा, मिस्र के बादशाह मक़ोक़स और हब्शा के फ़रमानरवा नजाशी (यह ईसाई हुक्मरान उस नजाशी का जानशीन था जिन्होंने इस्लाम क़ुबूल कर लिया था, और जिनकी गाएबाना नमाज़े जनाज़ा हुज़ूर ﷺ ने ख़ुद पढाई थी) के नाम शामिल हैं। [नोट: माज़ी क़रीब में ये चारों ख़ुतूत असल मतन (original text) के साथ असल शक्ल में दरयाफ्त हो चुके हैं।] आप ﷺ के इन्हीं ख़ुतूत के रद्देअमल के तौर पर सल्तनते रोमा के साथ मुसलमानों के टकराव का आगाज़ हुआ, जिसका नतीजा नबी अकरम ﷺ की हयाते तैय्यबा ही में जंगे मौता और गज़वा-ए-तबूक की सूरत में निकला। बहरहाल इन तमाम हालात व वाक़िआत का ताल्लुक़ आप ﷺ की बेअसते अमूमी से है, जिसकी दावत का आगाज़ आप ﷺ की ज़िंदगी मुबारक ही में हो गया था, और फ़िर ख़ुतबा हज्जतुल विदा के मौक़े पर आप ﷺ ने वाज़ेह तौर पर यह फ़रीज़ा उम्मत के हर फ़र्द की तरफ़ मुन्तक़िल फ़रमा दिया। चुनाँचे अब ता-क़यामे-क़यामत आप ﷺ पर ईमान रखने वाला हर मुसलमान दावत व तबलीग़ और अक़ामते दीन के लिये मेहनत व कोशिश का मुक़ल्लफ़ है।

मौज़ुआत:

मज़ामीन व मौज़ुआत के हवाले से यह सूरत दो हिस्सों पर मुश्तमिल है, जिनकी तफ़सील दरजा ज़ेल है:

हिस्सा अव्वल: यह हिस्सा सूरत के पहले पाँच रुकूओं पर मुश्तमिल है और इसका ताल्लुक़ रसूल अल्लाह ﷺ की बेअसते ख़ुसूसी के तकमीली मरहले से है। आयात की तरतीब के मुताबिक़ अगरचे यह पाँच रुकूअ भी मज़ीद तीन हिस्सों में बंटे हुए हैं, मगर मौज़ू के ऐतबार से देखा जाए तो यह हिस्सा हमें दो खुतबात पर मुश्तमिल नज़र आता है, जिनका अलग-अलग तआरुफ़ ज़ेल की सूरत में दिया जा रहा है।

पहला ख़ुतबा: पहला ख़ुतबा दूसरे और तीसरे रुकूअ पर मुश्तमिल है और यह फ़तह मक्का (8 हिजरी) से पहले नाज़िल हुआ। इन आयात में मुसलमानों को फ़तह मक्का के लिये निकलने पर आमादा किया गया है। यह मसला बहुत नाज़ुक और हस्सास था। मुसलमान मुहाजरीन की मुशरिकीने मक्का के साथ बराहेरास्त क़रीबी रिश्तेदारियाँ थीं, उनके ख़ानदान और क़बीले मुश्तरक़ (common) थे, हत्ता के बहुत से मुसलमानों के अहलो अयाल मक्का में मौज़ूद थे। कुछ ग़रीब, बेसहारा मुसलमान, जो मुख्तलिफ़ वजुहात की बिना पर हिजरत नहीं कर सके थे, अभी तक मक्के में फँसे हुए थे। अब सवाल यह था कि अगर जंग होगी, मक्के पर हमला होगा तो इन सबका क्या बनेगा? क्या गन्दुम के साथ घुन भी पिस जायेगा? दूसरी तरफ़ क़ुरैशे मक्का का बज़ाहिर यह ऐज़ाज़ भी नज़र आता था कि वह बैतुल्लाह के मुतवल्ली थे और हुज्जाज की ख़िदमत करते थे। इस हवाले से कहीं सादा दिल मुसलमान अपने खद्शात का इज़हार कर रहे थे तो कहीं मुनाफ़िक़ीन इन सवालात की आड़ लेकर लगाई-बुझाई में मसरूफ़ थे। चुनाँचे इन आयात का मुताअला करते हुए यह पसमंज़र मद्देनज़र रहना चाहिये।

दूसरा ख़ुतबा: दूसरा ख़ुतबा पहले, चौथे और पाँचवें रुकूअ पर मुश्तमिल है और यह ज़ुल क़अदह 9 हिजरी के बाद नाज़िल हुआ। मौज़ू की अहमियत के पेशेनज़र इसमें से पहली छ: आयात को मुक़द्दम करके सूरत के आग़ाज़ में लाया गया है। ये वही आयात हैं जिनके साथ हुज़ूर ﷺ ने हज़रत अली रज़ि. को क़ाफ़िला-ए-हज के पीछे भेजा था। इसकी तफ़सील यूँ है कि 9 हिजरी में हुज़ूर ﷺ ख़ुद हज पर तशरीफ़ नहीं ले गये थे, उस साल आप ﷺ ने हज़रत अबुबकर सिद्दीक़ रज़ि. को अमीरे हज बना कर भेजा था। हज का यह क़ाफ़िला ज़ुल क़अदह 9 हिजरी में रवाना हुआ और इसके रवाना होने के बाद यह आयात नाज़िल हुईं। चुनाँचे नबी अकरम ﷺ ने हज़रत अली रज़ि. को भेजा कि हज के मौक़े पर अलल ऐलान यह अहकामात सबको सुना दिए जाएँ। सन 9 हिजरी के इस हज में मुशरिकीने मक्का भी शामिल थे। चुनाँचे वहाँ हज के इज्तमा में हज़रत अली रज़ि. ने यह आयात पढ़ कर सुनाईं, जिनके तहत मुशरिकीन के साथ हर क़िस्म के मुआहिदे से ऐलाने बराअत कर दिया गया और यह वाज़ेह कर दिया गया

कि आईन्दा कोई मुशरिक हज के लिये ना आये। मुशरिकीने अरब के लिये चार माह की मोहलत का ऐलान किया गया कि इस मोहलत से फ़ायदा उठाते हुए वह ईमान लाना चाहें तो ले आएँ, वरना उनका क़त्ले आम होगा।

यह आयात चूँकि क़ुरान करीम की सख्ततरीन आयात हैं, इसलिये ज़रूरी है कि इनके पसमंज़र को अच्छी तरह समझ लिया जाए। ये अहकामात दरअसल उस अज़ाबे इस्तेसाल के क़ायम मुक़ाम हैं जो क़ौमे नूह, क़ौमे हूद, क़ौमे सालेह, क़ौमे शुएब, क़ौमे लूत और आले फिरऔन पर आया था। इन तमाम क़ौमों पर अज़ाबे इस्तेसाल अल्लाह के उस अटल क़ानून के तहत आया था जिसका ज़िक्र क़ब्ल अज़ भी हो चुका है। इस क़ानून के तहत मुशरिकीने मक्का अब अज़ाबे इस्तेसाल के मुस्तहिक़ हो चुके थे, इसलिये कि हुज़ूर ﷺ ने उन्हीं की ज़बान में अल्लाह के अहकामात उन तक पहुँचा कर उन पर हुज्जत तमाम कर दी थी। इस सिलसिले में अल्लाह की मशियत के मुताबिक़ उनको जो मोहलत दी गई थी वह भी ख़त्म हो चुकी थी। चुनाँचे उन पर अज़ाबे इस्तेसाल की पहली क़िस्त मैदाने बदर में नाज़िल की गई और दूसरी और आखरी क़िस्त के तौर पर अब उन्हें अल्टीमेटम दे दिया गया कि तुम्हारे पास सोचने और फ़ैसला करने के लिये सिर्फ़ चार माह हैं। इस मुद्दत में ईमान लाना चाहो तो ले आओ वरना क़त्ल कर दिए जाओगे। इस हुकुम के अंदर उनके लिये यह आप्शन खुद-ब-खुद मौजूद था कि वह चाहें तो ज़ज़ीरा नुमाए अरब से बाहर भी जा सकते हैं, मगर अब इस ख़ित्ते के अंदर वह बहैसियते मुशरिक के नहीं रह सकते, क्योंकि अब ज़ज़ीरा नुमाए अरब को शिर्क से बिल्कुल पाक कर देने और मोहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की बेअसते ख़ुसूसी की तकमीली शान के ज़हूर का वक़्त आ पहुँचा था।

एक अश्काल की वज़ाहत: यहाँ एक अश्काल इस वजह से पैदा होता है कि आयात की मौजूदा तरतीब खुतबात की ज़मानी तरतीब के बिल्कुल बरअक्स है। जो ख़ुतबा पहले (8 हिजरी में) नाज़िल हुआ है वह सूरत में दूसरे रुकूअ से शुरू हो रहा है, जबकि बाद (9 हिजरी में) नाज़िल होने वाली आयात को मुक़द्दम करके इनसे सूरत का आगाज़ किया गया है। फिर यह दूसरा खुतबा भी आयात की तरतीब के बाइस दो हिस्सों में तक़सीम हो गया है। इसकी इब्तदाई छ: आयात पहले रुकूअ में आ गई हैं, जबकि बक़िया आयात चौथे और पाँचवें रुकूअ में हैं। दरअसल तरतीब आयात में इस पेचीदगी की वजह क़ुरान का वह ख़ास असलूब है जिसके तहत किसी इन्तहाई अहम बात को मौज़ू की मन्तक़ी और रिवायती तरतीब में से निकाल कर शहसुर्खी (हेड लाइन) के तौर पर पहले बयान कर दिया जाता है। इस असलूब को समझने के लिये सूरतुल अनफ़ाल के आग़ाज़ का अंदाज़ ज़हन में रखिये। वहाँ माले ग़नीमत का मसला इन्तहाई अहम और हस्सास नौइयत का था, जिस पर तफ़सीली बहस तो बाद में होना मक़सूद थी, लेकिन इस ज़िमन में बुनियादी उसूल सूरत की पहली आयत में बयान कर दिया गया और मसले की ख़ुसूसी अहमियत के पेशेनज़र इस मौज़ू से सूरत का आग़ाज़ फ़रमाया गया। बिल्कुल इसी अंदाज़ में इस सूरत का आगाज़ भी एक इन्तहाई अहम मसले के बयान से किया गया, अलबत्ता इस मसले की बक़िया तफ़सील बाद में चौथे और पाँचवें रुकूअ में बयान हुई।

हिस्सा दुव्वम: इस सूरत का दूसरा हिस्सा छठे रुकूअ से लेकर आखिर तक ग्यारह रुकूओं पर मुश्तमिल है और इसका ताल्लुक़ हुज़ूर ﷺ की बेअसते अमूमी से है। इसलिये कि इस हिस्से का मरकज़ी मौज़ू ग़ज़वा-ए-तबूक है और ग़ज़वा-ए-तबूक तहमीद थी, उस जद्दो-जहद की जिसका आगाज़ अक़ामते दीन के सिलसिले में ज़ज़ीरा नुमाए अरब से बाहर बैनुल अक़वामी सतह पर होने वाला था। इन ग्यारह रुकूओं में से इब्तदाई चार रुकूअ तो वह हैं जो ग़ज़वा-ए-तबूक के लिये मुसलमानों को ज़हनी तौर पर तैयार करने से मुताल्लिक़ हैं, चंद आयात वह हैं जो तबूक जाते हुए दौराने सफ़र नाज़िल हुईं, चंद आयात तबूक में क़याम के दौरान और चंद तबूक से वापसी पर रास्ते में नाज़िल हुईं, जबकि इनमें चंद आयात ऐसी भी हैं जो तबूक से वापसी के बाद नाज़िल हुईं।

आयात 1 से 6 तक

بَرَآءَةٌ مِّنَ اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖٓ اِلَى الَّذِيْنَ عٰهَدْتُّمْ مِّنَ الْمُشْرِكِيْنَ ۝١ فَسِيْحُوْا فِي الْاَرْضِ
اَرْبَعَةَ اَشْهُرٍ وَّاعْلَمُوْٓا اَنَّكُمْ غَيْرُ مُعْجِزِي اللّٰهِ ۙ وَاَنَّ اللّٰهَ مُخْزِي الْكٰفِرِيْنَ ۝٢
وَاَذَانٌ مِّنَ اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖٓ اِلَى النَّاسِ يَوْمَ الْحَجِّ الْاَكْبَرِ اَنَّ اللّٰهَ بَرِيْۗءٌ مِّنَ
الْمُشْرِكِيْنَ ۙ وَرَسُوْلُهٗ ۭ فَاِنْ تُبْتُمْ فَهُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ ۚ وَاِنْ تَوَلَّيْتُمْ فَاعْلَمُوْٓا اَنَّكُمْ غَيْرُ
مُعْجِزِي اللّٰهِ ۭ وَبَشِّرِ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا بِعَذَابٍ اَلِيْمٍ ۝٣ ۙ اِلَّا الَّذِيْنَ عٰهَدْتُّمْ مِّنَ
الْمُشْرِكِيْنَ ثُمَّ لَمْ يَنْقُصُوْكُمْ شَيْـــًٔا وَّلَمْ يُظَاهِرُوْا عَلَيْكُمْ اَحَدًا فَاَتِمُّوْٓا اِلَيْهِمْ
عَهْدَهُمْ اِلٰى مُدَّتِهِمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُتَّقِيْنَ ۝٤ فَاِذَا انْسَلَخَ الْاَشْهُرُ الْحُرُمُ
فَاقْتُلُوا الْمُشْرِكِيْنَ حَيْثُ وَجَدْتُّمُوْهُمْ وَخُذُوْهُمْ وَاحْصُرُوْهُمْ وَاقْعُدُوْا لَهُمْ
كُلَّ مَرْصَدٍ ۚ فَاِنْ تَابُوْا وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتَوُا الزَّكٰوةَ فَخَلُّوْا سَبِيْلَهُمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ
غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝٥ وَاِنْ اَحَدٌ مِّنَ الْمُشْرِكِيْنَ اسْتَجَارَكَ فَاَجِرْهُ حَتّٰى يَسْمَعَ كَلٰمَ اللّٰهِ
ثُمَّ اَبْلِغْهُ مَاْمَنَهٗ ۭ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَوْمٌ لَّا يَعْلَمُوْنَ ۝٦

आयत 1

بَرَآءَةٌ مِّنَ اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖٓ اِلَى الَّذِيْنَ عٰهَدْتُّمْ مِّنَ الْمُشْرِكِيْنَ ۝١

"ऐलाने बराअत है अल्लाह और उसके रसूल की तरफ़ से उन लोगों की जानिब जिनसे (ऐ मुसलमानों!) तुमने मुआहिदे किये थे मुशरिकीन में से।"

यह अल्लाह तआला की तरफ़ से ऐसे तमाम मुआहिदे ख़त्म करने का दो टूक अल्फ़ाज़ में ऐलान है जो मुसलमानों ने मुशरिकीन के साथ कर रखे थे। ये ऐलान चूँकि इन्तहाई अहम और हस्सास नौइयत का था और क़तई (categorical) अंदाज़ में किया गया था, इसलिये इसके साथ कुछ शराइत या इस्तशनाई शक़ौ का ज़िक्र भी किया गया जिनकी तफ़सील आईन्दा आयात में आएगी। सूरतुल तौबा के ज़िमन में एक और बात लायक़-ए-तवज्जो है कि यह क़ुरान की वाहिद सूरत है जिसके आगाज़ में "बिस्मिल्लाहिर्रहमान निर्रहीम" नहीं लिखी जाती। इसका सबब हज़रत अली रज़ि. ने यह बयान फ़रमाया है कि यह सूरत तो नंगी तलवार लेकर यानि मुशरिकीन के लिये क़त्ले आम का ऐलान लेकर नाज़िल हुई है, लिहाज़ा अल्लाह तआला की रहमानियत और रहीमियत की सिफ़ात के साथ इसके मज़ामीन की मुनासबत नहीं है।

आयत 2

فَسِيْحُوْا فِي الْاَرْضِ اَرْبَعَةَ اَشْهُرٍ

"तो घूम-फिर लो इस ज़मीन में चार माह तक"

यानि इस जज़ीरा नुमाए अरब में तुम्हें रहने और घूमने-फिरने के लिये सिर्फ़ चार महीने की मोहलत दी जा रही है।

وَّاعْلَمُوْٓا اَنَّكُمْ غَيْرُ مُعْجِزِي اللّٰهِ ۙ وَاَنَّ اللّٰهَ مُخْزِي الْكٰفِرِيْنَ ۝٢

"और जान लो कि तुम अल्लाह को आजिज़ नहीं कर सकते और यह भी कि अल्लाह काफ़िरों को रुसवा करके रहेगा।"

अब इन मुशरिकीन के लिये अल्लाह के अज़ाब की आख़री क़िस्त आकर रहेगी। ये क़तई ऐलान तो ऐसे मुआहिदों के ज़िमन में था जिनमे कोई मियाद मुअय्यन नहीं थी, जैसे आम दोस्ती के मुआहिदे, जंग ना करने के मुआहिदे वगैरह। ऐसे तमाम मुआहिदों को चार माह की पेशगी वारनिंग के साथ ख़त्म कर दिया गया। यह एक माक़ूल तरीक़ा था जो सूरतुल अनफ़ाल की आयत 58 में बयान करदा उसूल { فَانْۢبِذْ اِلَيْهِمْ عَلٰي سَوَاۗءٍ } के मुताबिक़ इख्तियार किया गया। यानि मुआहिदे को अलल ऐलान दूसरे फ़रीक़ की तरफ़ फेंक दिया गया, और फिर फ़ौरन अक़दाम भी नहीं किया गया, बल्कि चार माह की मोहलत भी दे दी गई।

आयत 3

وَاَذَانٌ مِّنَ اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖۤ اِلَى النَّاسِ يَوْمَ الْحَجِّ الْاَكْبَرِ

"और ऐलाने आम है अल्लाह और उसके रसूल की तरफ़ से लोगों के लिये हज-ए-अकबर के दिन"

उमरे को चूँकि "हज-ए-असगर" कहा जाता है इसलिये यहाँ उमरे के मुक़ाबले में हज को "हज-ए-अकबर" कहा गया है। इस सिलसिले में हमारे यहाँ अवाम में जो यह बात मशहूर है कि हज अगर जुमा के दिन हो तो वह हज-ए-अकबर होता है, एक बेबुनियाद बात है।

اَنَّ اللّٰهَ بَرِيْٓءٌ مِّنَ الْمُشْرِكِيْنَ ۙ وَرَسُوْلُهٗ ؕ

"कि अल्लाह बरी है मुशरिकीन से और उसका रसूल भी।"

यह ऐलान चूँकि हज के इज्तेमा में किया गया था और हज के लिये जज़ीरा नुमाए अरब के तमाम ऐतराफ़ व अकनाफ़ से लोग आए हुए थे, लिहाज़ा इस मौक़े पर ऐलान करने से गोया अरब के तमाम लोगों के लिये ऐलाने आम हो गया कि अब अल्लाह और उसका रसूल ﷺ मुशरिकीन से बरीउल ज़िम्मा हैं और उनके साथ किसी भी क़िस्म का कोई मुआहिदा नहीं रहा।

فَاِنْ تُبْتُمْ فَهُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ ۚ

"तो अगर तुम तौबा करलो तो तुम्हारे लिये बेहतर है।"

وَاِنْ تَوَلَّيْتُمْ فَاعْلَمُوْٓا اَنَّكُمْ غَيْرُ مُعْجِزِى اللّٰهِ ؕ

"और अगर तुम रूगरदानी करोगे तो सुन रखो कि तुम अल्लाह को आजिज़ नहीं कर सकते।"

وَبَشِّرِ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا بِعَذَابٍ اَلِيْمٍ ۙ﴿۳﴾

"और (ऐ नबी ﷺ!) बशारत दे दीजिये इन काफ़िरों को दर्दनाक अज़ाब की।"

आयत 4

اِلَّا الَّذِيْنَ عٰهَدْتُّمْ مِّنَ الْمُشْرِكِيْنَ

"सिवाय उन मुशरिकीन के जिनसे (ऐ मुसलमानों!) तुमने मुआहिदे किये थे"

ثُمَّ لَمْ يَنْقُصُوْكُمْ شَيْـًٔا وَّلَمْ يُظَاهِرُوْا عَلَيْكُمْ اَحَدًا

"फिर उन्होंने कुछ कमी नहीं की तुम्हारे साथ, और ना तुम्हारे ख़िलाफ़ मदद की किसी की भी"

यहाँ मियादी मुआहिदों के सिलसिले में इस्तशना का ऐलान किया जा रहा है। यानि मुशरिकीन के साथ मुसलमानों के ऐसे मुआहिदे जो किसी ख़ास मुद्दत तक हुए थे, उनके बारे में इरशाद हो रहा है कि अगर यह मुशरिकीन तुम्हारे साथ किये गए किसी मुआहिदे को बख़ूबी निभा रहे हैं और तमाम शरायत की पाबंदी कर रहे हैं:

فَاَتِمُّوْٓا اِلَيْهِمْ عَهْدَهُمْ اِلٰى مُدَّتِهِمْ ؕ

"तो मुकम्मल करो उनके साथ उनका मुआहिदा मुक़र्रर मुद्दत तक।"

यानि मुशरिकीन के साथ एक ख़ास मुद्दत तक तुम्हारा कोई मुआहिदा हुआ था और उनकी तरफ़ से अभी तक उसमें किसी क़िस्म की ख़िलाफ़वर्ज़ी भी नहीं हुई, तो उस मुआहिदे की जो भी मुद्दत है वह पूरी करो। इसके बाद उस मुआहिदे की तजदीद (renewal) नहीं होगी।

إِنَّ اللَّهَ يُحِبُّ الْمُتَّقِينَ ۝٤

"यक़ीनन अल्लाह तक़वा इख्तियार करने वालों को पसंद करता है।"

आयत 5

فَإِذَا انسَلَخَ الْأَشْهُرُ الْحُرُمُ

"फिर जब यह मोहतरम महीने गुज़र जाएँ"

यहाँ मोहतरम महीनों से मुराद वह चार महीने हैं जिनकी मुशरिकीन को मोहलत दी गई थी। चार महीने की यह मोहलत या अमान गैर मियादी मुआहिदों के लिये थी, जबकि मियादी मुआहिदों के बारे में फ़रमाया गया कि उनकी तयशुदा मुद्दत तक पाबंदी की जाए। लिहाज़ा जैसे-जैसे किसी गिरोह की मुद्दते अमान खत्म होती जायेगी इस लिहाज़ से उसके ख़िलाफ़ अक़दाम किया जायेगा। बहरहाल जब यह मोहलत और अमान की मुद्दत गुज़र जाये:

فَاقْتُلُوا الْمُشْرِكِينَ حَيْثُ وَجَدْتُمُوهُمْ وَخُذُوهُمْ وَاحْصُرُوهُمْ وَاقْعُدُوا لَهُمْ كُلَّ مَرْصَدٍ

"तो क़त्ल करो इन मुशरिकीन को जहाँ पाओ, और पकड़ो इनको, और घेराव करो इनका, और इनके लिये हर जगह घात लगा कर बैठो।"

इन अल्फ़ाज़ में मौजूद सख्ती को महसूस करते हुए उस मंज़र और माहौल को ज़हन में लाइये जब ये आयात बतौर ऐलाने आम पढ़ कर सुनाई जा रही थीं और अंदाज़ा कीजिये कि इनमें से एक-एक लफ्ज़ उस माहौल में किस क़दर अहम और पुर तासीर होगा। उस इज्तेमा में मुशरिकीन भी मौजूद थे और उनके लिये यह ऐलान और अल्टीमेटम यक़ीनन बहुत बड़ी ज़िल्लत व रुसवाई का बाइस था।

जब यह छ: आयात नाज़िल हुईं तो रसूल अल्लाह ﷺ ने हज़रत अली रज़ि. क़ाफ़िला-ए-हज के पीछे रवाना किया और उन्हें ताकीद की कि हज के इज्तेमा में मेरे नुमाइंदे की हैसियत से यह आयात बतौरे ऐलाने आम पढ़ कर सुना दें। इसलिये कि अरब के रिवाज के मुताबिक़ किसी बड़ी शख्सियत की तरफ़ से अगर कोई अहम ऐलान करना मक़सूद होता तो उस शख्सियत का कोई क़रीबी अज़ीज़ ही ऐसा ऐलान करता था। जब हज़रत अली रज़ि. क़ाफ़िला-ए-हज से जाकर मिले तो क़ाफ़िला पड़ाव पर था। अमीरे क़ाफ़िला हज़रत अबुबकर सिद्दीक़ी रज़ि. थे। ज्योंहि हज़रत अली रज़ि. आपसे मिले तो आपने पहला सवाल किया: अमीरुन अव मामूरुन? यानि आप अमीर बना कर भेजे गए हैं या मामूर? मुराद यह थी कि पहले मेरी और आप की हैसियत का तअय्युन कर लिया जाए। अगर आपको अमीर बना कर भेजा गया है तो मैं आपके लिये अपनी जगह खाली कर दूँ और ख़ुद आपके सामने मामूर की हैसियत से बैठूँ। इस पर हज़रत अली ने जवाब दिया कि मैं मामूर हूँ, अमीरे हज आप ही हैं, अलबत्ता हज के इज्तेमा में आयाते इलाही पर मुश्तमिल अहम ऐलान रसूल अल्लाह ﷺ की तरफ़ से मैं करूँगा। इस वाक़िये से यह ज़ाहिर होता है कि हुज़ूर ﷺ ने सहाबा किराम रज़ि. की तरबियत बहुत ख़ूबसूरत अंदाज़ में फ़रमाई थी और आप ﷺ की इसी तरबियत के बाइस उनकी जमाअती ज़िंदगी इन्तहाई मुनज्ज़म थी। और आज मुसलमानों का यह हाल है की यह दुनिया की इन्तहाई गैरमुनज्ज़म क़ौम बन कर रह गए हैं।

فَإِنْ تَابُوا وَأَقَامُوا الصَّلَاةَ وَآتَوُا الزَّكَاةَ فَخَلُّوا سَبِيلَهُمْ ۚ إِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ۝٥

"फ़िर अगर वह तौबा करलें, नमाज़ क़ायम करें और ज़कात अदा करें तो उनका रास्ता छोड़ दो। यक़ीनन अल्लाह बख्शने वाला, रहम करने वाला है।"

यानि अगर वह शिर्क से ताएब होकर मुसलमान हो जाएँ, नमाज़ क़ायम करें और ज़कात देना क़ुबूल करलें तो फिर उनसे मुआखज़ा नहीं।

आयत 6

وَاِنۡ اَحَدٌ مِّنَ الۡمُشۡرِكِيۡنَ اسۡتَجَارَكَ فَاَجِرۡهُ حَتّٰى يَسۡمَعَ كَلٰمَ اللّٰهِ

"और अगर मुशरिकीन में से कोई शख्स आप से पनाह तलब करे, तो उसे पनाह दे दो यहाँ तक कि वह अल्लाह का कलाम सुन ले"

जज़ीरा नुमाए अरब में बहुत से लोग ऐसे भी होंगे जिन्होंने अभी तक रसूल अल्लाह ﷺ की दावत को संजीदगी से सुना ही नहीं होगा। इतने बड़े अल्टीमेटम के बाद मुमकिन है उनमें से कुछ लोग सोचने पर मजबूर हुए हों कि इस दावत को समझना चाहिये। चुनाँचे इस हवाले से हुकुम दिया जा रहा है कि अगर कोई शख्स तुम लोगों से पनाह तलब करे तो ना सिर्फ़ उसे पनाह दे दी जाए, बल्कि उसे मौक़ा भी फ़राहम किया जाए कि वह क़ुरान के पैग़ाम को अच्छी तरह सुन ले। यहाँ पर "कलामुल्लाह" के अल्फ़ाज़े क़ुरानी गोया शहादत दे रहे हैं कि यह क़ुरान अल्लाह का कलाम है।

ثُمَّ اَبۡلِغۡهُ مَاۡمَنَهٗ

"फिर उसे उसकी अमन की जगह पर पहुँचा दो।"

यानि ऐसे शख्स को फ़ौरी तौर पर फ़ैसला करने पर मजबूर ना किया जाए कि इस्लाम क़ुबूल करते हो या नहीं? अगर क़ुबूल नहीं करते तो अभी तुम्हारी गरदन उड़ा दी जाएगी, बल्कि कलामुल्लाह सुनने का मौक़ा फ़राहम करने के बाद उसे समझने और सोचने के लिये मोहलत दी जाए और उसे ब-हिफ़ाज़त उसके घर तक पहुँचाने का इंतेज़ाम किया जाए।

ذٰلِكَ بِاَنَّهُمۡ قَوۡمٌ لَّا يَعۡلَمُوۡنَ ۝٦

"यह इसलिये कि ये ऐसे लोग हैं जो इल्म नहीं रखते।"

यानि यह लोग अभी तक भी ग़फ़लत का शिकार हैं। इन्होंने अभी तक संजीदगी से सोचा ही नहीं कि यह दावत है क्या!

जिस मज़मून से सूरत की इब्तदा हुई थी वह यहाँ आरज़ी तौर पर ख़त्म हो रहा है, अब दोबारा इस मज़मून का सिलसिला चौथे रुकूअ के साथ जाकर मिलेगा। इसके बाद अब दो रुकूअ (दूसरा और तीसरा) वह आयेंगे जो फ़तह मक्का से क़ब्ल नाज़िल हुए और इनमें मुसलमानों को क़ुरैशे मक्का के साथ जंग करने के लिये आमादा किया जा रहा है।

आयात 7 से 16 तक

كَيۡفَ يَكُوۡنُ لِلۡمُشۡرِكِيۡنَ عَهۡدٌ عِنۡدَ اللّٰهِ وَعِنۡدَ رَسُوۡلِهٖۤ اِلَّا الَّذِيۡنَ عٰهَدۡتُّمۡ عِنۡدَ الۡمَسۡجِدِ الۡحَرَامِ‌ۚ فَمَا اسۡتَقَامُوۡا لَـكُمۡ فَاسۡتَقِيۡمُوۡا لَهُمۡ‌ؕ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الۡمُتَّقِيۡنَ ۝٧ كَيۡفَ وَاِنۡ يَّظۡهَرُوۡا عَلَيۡكُمۡ لَا يَرۡقُبُوۡا فِيۡكُمۡ اِلًّا وَّلَا ذِمَّةً‌ؕ يُرۡضُوۡنَكُمۡ بِاَفۡوَاهِهِمۡ وَتَاۡبٰى قُلُوۡبُهُمۡ‌ۚ وَاَكۡثَرُهُمۡ فٰسِقُوۡنَ ۝٨ اِشۡتَرَوۡا بِاٰيٰتِ اللّٰهِ ثَمَنًا قَلِيۡلًا فَصَدُّوۡا عَنۡ سَبِيۡلِهٖ‌ؕ اِنَّهُمۡ سَآءَ مَا كَانُوۡا يَعۡمَلُوۡنَ ۝٩ لَا يَرۡقُبُوۡنَ فِىۡ مُؤۡمِنٍ اِلًّا وَّلَا ذِمَّةً‌ؕ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الۡمُعۡتَدُوۡنَ ۝١٠ فَاِنۡ تَابُوۡا وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتَوُا الزَّكٰوةَ فَاِخۡوَانُكُمۡ فِى الدِّيۡنِ‌ؕ وَنُفَصِّلُ الۡاٰيٰتِ لِقَوۡمٍ يَّعۡلَمُوۡنَ ۝١١ وَاِنۡ نَّكَثُوۡۤا اَيۡمَانَهُمۡ مِّنۡۢ بَعۡدِ عَهۡدِهِمۡ وَطَعَنُوۡا فِىۡ دِيۡنِكُمۡ فَقَاتِلُوۡۤا اَئِمَّةَ الۡكُفۡرِ‌ۙ اِنَّهُمۡ لَاۤ اَيۡمَانَ لَهُمۡ لَعَلَّهُمۡ يَنۡتَهُوۡنَ ۝١٢ اَلَا تُقَاتِلُوۡنَ قَوۡمًا نَّكَثُوۡۤا اَيۡمَانَهُمۡ وَهَمُّوۡا بِاِخۡرَاجِ الرَّسُوۡلِ وَهُمۡ بَدَءُوۡكُمۡ اَوَّلَ مَرَّةٍ‌ؕ اَتَخۡشَوۡنَهُمۡ‌ۚ فَاللّٰهُ اَحَقُّ اَنۡ تَخۡشَوۡهُ اِنۡ كُنۡتُمۡ مُّؤۡمِنِيۡنَ ۝١٣ قَاتِلُوۡهُمۡ يُعَذِّبۡهُمُ اللّٰهُ بِاَيۡدِيۡكُمۡ وَيُخۡزِهِمۡ وَيَنۡصُرۡكُمۡ عَلَيۡهِمۡ وَيَشۡفِ صُدُوۡرَ قَوۡمٍ مُّؤۡمِنِيۡنَ ۝١٤ وَيُذۡهِبۡ غَيۡظَ قُلُوۡبِهِمۡ‌ؕ وَيَتُوۡبُ اللّٰهُ عَلٰى مَنۡ يَّشَآءُ‌ؕ وَاللّٰهُ عَلِيۡمٌ حَكِيۡمٌ ۝١٥ اَمۡ حَسِبۡتُمۡ اَنۡ تُتۡرَكُوۡا وَلَمَّا يَعۡلَمِ اللّٰهُ الَّذِيۡنَ جٰهَدُوۡا مِنۡكُمۡ وَلَمۡ يَتَّخِذُوۡا مِنۡ دُوۡنِ اللّٰهِ وَلَا رَسُوۡلِهٖ وَلَا الۡمُؤۡمِنِيۡنَ وَلِيۡجَةً‌ؕ وَاللّٰهُ خَبِيۡرٌۢ بِمَا تَعۡمَلُوۡنَ ۝١٦

फ़तह मक्का के क़ब्ल सूरते हाल ऐसी थी कि मक्का मुकर्रमा पर हमला करने के सिलसिले में बहुत से लोग़ तज़बज़ुब और उलझन का शिकार थे। बाज़ मुसलमानों के बीवी-बच्चे और बहुत से कमज़ोर मुसलमान जो हिजरत नहीं कर पाए थे, अभी तक मक्का में फँसे हुए थे। अक्सर लोगों को खदशा था कि अगर मक्का पर हमला हुआ तो बहुत खून ख़राबा होगा और मक्का में मौजूद तमाम मुसलमान इसकी ज़द में आ जाएँगे। अगरचे बाद में बिलफ़अल जंग की नौबत ना आई मगर मुख्तलिफ़ ज़हनों में ऐसे अंदेशे बहरहाल मौजूद थे। इस सिलसिले में ज़्यादा बैचेनी मुनाफिक़ीन ने फ़ैलाई हुई थी। चुनाँचे इन आयात में मुसलमानों को मक्का पर हमला करने के लिये आमादा किया जा रहा है।

आयत 7

كَيْفَ يَكُوْنُ لِلْمُشْرِكِيْنَ عَهْدٌ عِنْدَ اللّٰهِ وَعِنْدَ رَسُوْلِهٖٓ

"कैसे हो सकता है मुशरिकीन के लिये कोई अहद अल्लाह और उसके रसूल के नज़दीक?"

यहाँ पर उस पसमंज़र को ज़हन में ताज़ा करने की ज़रूरत है जिसमें यह आयात नाज़िल हुईं। इससे क़ब्ल मुसलमानों और मुशरिकीने मक्का के दरमियान सुलह हुदैबिया हो चुकी थी, लेकिन उस मुआहिदे को खुद क़ुरैश के एक क़बीले ने तोड़ दिया। बाद में जब क़ुरैश को अपनी गलती और मामले की संजीदगी का अहसास हुआ तो उन्होंने अपने सरदार अबुसूफ़ियान को तजदीदे सुलह की दरख्वास्त के लिये रसूल अल्लाह ﷺ की ख़िदमत में भेजा। मदीना पहुँच कर अबुसूफ़ियान सिफारिश के लिये हज़रत अली रज़ि. और अपनी बेटी हज़रत उम्मे हबीबा रज़ि. (उम्मुल मोमिनीन) से मिले। इन दोनों शख्सियात की तरफ़ से उनकी सिरे से कोई हौसला अफज़ाई नहीं की गई। बल्कि हज़रत उम्मे हबीबा रज़ि. के यहाँ तो अबुसूफ़ियान को अजीब वाक़िया पेश आया। वह जब अपनी बेटी के यहाँ गए तो हुज़ूर ﷺ का बिस्तर बिछा हुआ था, वह बिस्तर पर बैठने लगे तो उम्मे हबीबा रज़ि. ने फ़रमाया कि अब्बा जान ज़रा ठहरिये! इस पर वह खड़े के खड़े रह गए। बेटी ने बिस्तर तह कर दिया और फ़रमाया कि हाँ अब्बाजान अब बैठ जाइये। अबु सूफ़ियान के लिये यह कोई मामूली बात नहीं थी, वह क़ुरैश के सबसे बड़े सरदार और रईस थे और बिस्तर तह करने वाली उनकी अपनी बेटी थी। चुनाँचे उन्होंने पूछा: बेटी! क्या यह बिस्तर मेरे लायक़ नहीं था या मैं इस बिस्तर के लायक़ नहीं? बेटी ने जवाब दिया: अब्बाजान! आप इस बिस्तर के लायक़ नहीं। यह अल्लाह के नबी ﷺ का बिस्तर है और आप मुशरिक हैं! चुनाँचे अबु सूफ़ियान अब कहें तो क्या कहें! वह तो आये थे बेटी से सिफारिश करवाने के लिये और यहाँ तो मामला ही बिल्कुल उलट हो गया। चुनाँचे मतलब की बात के लिये तो ज़बान भी ना खुल सकी होगी।

बरहाल अबुसूफ़ियान ने रसूल अल्लाह ﷺ से मिल कर तजदीद सुलह की दरख्वास्त की मगर हुज़ूर ﷺ ने क़ुबूल नहीं फ़रमाई। इन हालात में मुमकिन है कि कुछ लोगों ने चमिगोइयां की हों कि देखें जी क़ुरैश का सरदार खुद चल कर आया था, सुलह की भीख माँग रहा था, सुलह बेहतर होती है, हुज़ूर ﷺ क्यों सुलह नहीं कर रहे, वगैरह-वगैरह। चुनाँचे इस पसमंज़र में फ़रमाया जा रहा है कि अल्लाह और उसके रसूल ﷺ के नज़दीक इन मुशरिकीन के लिये अब कोई मुआहिदा कैसे क़ायम रह सकता है? यानि इनके किसी अहद की ज़िम्मेदारी अल्लाह और उसके रसूल ﷺ पर किस तरह बाक़ी रह सकती है?

اِلَّا الَّذِيْنَ عٰهَدْتُّمْ عِنْدَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ ۚ

"सिवाय उन लोगों के जिनके साथ तुमने मुआहिदा किया था मस्जिदे हराम के पास।"

इस मुआहिदे से मुराद सुलह हुदैबिया है।

فَمَا اسْتَقَامُوْا لَكُمْ فَاسْتَقِيْمُوْا لَهُمْ ؕ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُتَّقِيْنَ ۝۷

"तो जब तक वह तुम्हारे लिये (इस पर) क़ायम रहें तुम भी उनके लिये (मुआहिदे पर) क़ायम रहो। बेशक अल्लाह मुत्तक़ीन को पसंद करता है।"

यानि जब तक मुशरिकीन सुलह के इस मुआहिदे पर क़ायम रहे, तुम लोगों ने भी इसकी पूरी-पूरी पाबंदी की, मगर अब जबकि वह खुद ही इसे तोड़ चुके हैं तो अब तुम्हारे ऊपर इस सिलसिले में कोई अखलाक़ी दबाव नहीं है कि लाज़िमन इस मुआहिदे की तजदीद की जाय। रसूल अल्लाह ﷺ को मालूम था कि अब इन मुशरिकीन में इतना दम नहीं है कि वह मुक़ाबला कर सकें। इन हालात में मुआहिदे की तजदीद का मतलब तो यह था कि कुफ़्र और शिर्क को अपनी मज़मूम सरगर्मियों (enjoyment) के लिये फिर से खुली छुट्टी (fresh lease of existence) मिल जाय। इसलिये हुज़ूर ﷺ ने मुआहिदे तजदीद क़ुबूल नहीं फरमाई।

आयत 8

كَيْفَ وَاِنْ يَّظْهَرُوْا عَلَيْكُمْ لَا يَرْقُبُوْا فِيْكُمْ اِلًّا وَّلَا ذِمَّةً ؕ

"कैसे (कोई मुआहिदा क़ायम रह सकता है उनसे!) जबकि अगर वह तुम पर ग़ालिब आ जाएँ तो हरगिज़ लिहाज़ नहीं करेंगे तुम्हारे बारे में किसी क़राबत का और ना अहद का।"

ऐसे लोगों से आख़िर कोई मुआहिदा क्यों कर क़ायम रह सकता है जिनका किरदार यह हो कि अगर वह तुम पर गलबा हासिल कर लें तो फिर ना क़राबतदारी का लिहाज़ करें और ना मुआहिदे के तक़द्दुस का पास।

يُرْضُوْنَكُمْ بِاَفْوَاهِهِمْ

"राज़ी करना चाहते हैं तुम लोगों को अपने मुँह (की बातों) से"

अब वह सुलह की तजदीद की ख़ातिर आए हैं तो इसके लिये बज़ाहिर ख़ुशामद और चापलूसी कर रहे हैं। वह चाहते हैं कि इस तरह आप लोगों को राज़ी कर लें।

وَتَاْبٰى قُلُوْبُهُمْ وَاَكْثَرُهُمْ فٰسِقُوْنَ ۝۸

"जबकि इनके दिल (अब भी) इन्कारी हैं, और इनकी अक्सरियत फ़ासिक़ीन पर मुश्तमिल है।"

जो बाते वह ज़बान से कर रहे हैं वह उनके दिल की आवाज़ नहीं है। दिल से वह अभी भी नेक नियती के साथ सुलह पर आमादा नहीं हैं।

आयत 9

اِشْتَرَوْا بِاٰيٰتِ اللّٰهِ ثَمَنًا قَلِيْلًا

"इन्होंने अल्लाह की आयात को फ़रोख्त किया हक़ीर सी क़ीमत के ऐवज़"

इन्होंने अल्लाह तआला की आयात की क़दर नहीं की और इनके बदले में हक़ीर सा दुनियावी फ़ायदा हासिल कर लिया। इन्होंने मोहम्मद ﷺ को अल्लाह का रसूल जानते हुए और हक़ को पहचानते हुए सिर्फ़ इसलिये रद्द कर दिया है कि इनकी चौधराहटें क़ायम रहें, लेकिन इन्हें बहुत जल्द मालूम हो जायेगा कि इन्होंने बहुत घाटे का सौदा किया है।

فَصَدُّوْا عَنْ سَبِيْلِهٖ ؕ اِنَّهُمْ سَآءَ مَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ۝۹

"पस वह लोगों को रोकते रहे अल्लाह के रास्ते से (और खुद भी रुकते रहे) यक़ीनन बहुत ही बुरा है जो कुछ ये कर रहे हैं।"

صَدَّ, يَصُدُّ, صَدًّا, इस फ़अल के अंदर रुकने और रोकने, दोनों के मायने पाए जाते हैं।

आयत 10

لَا يَرْقُبُوْنَ فِيْ مُؤْمِنٍ اِلًّا وَّلَا ذِمَّةً ؕ

"नहीं लिहाज़ करते किसी मोमिन के हक़ में ना किसी क़राबत का और ना किसी में मुआहिदे का।"

وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُعْتَدُوْنَ ۝١٠

"और यही लोग हैं जो हद से तज़ावुज करने वाले हैं।"

आयत 11

فَاِنْ تَابُوْا وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتَوُا الزَّكٰوةَ فَاِخْوَانُكُمْ فِي الدِّيْنِ ؕ

"फिर भी अगर वह तौबा कर लें, और नमाज़ क़ायम करें और ज़कात दें तो वह तुम्हारे दीनी भाई हैं।"

अल्लाह ने उनके लिये अब भी तौबा का दरवाज़ा खुला रखा हुआ है। अब भी अगर वह इस्लाम क़ुबूल कर लें और शआरे दीनी को अपना लें तो वह तुम्हारी दीनी बिरादरी में शामिल हो सकते हैं।

وَنُفَصِّلُ الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ يَّعْلَمُوْنَ ۝١١

"और हम अपनी आयात की तफ़सील बयान कर रहे हैं उन लोगों के लिये जो इल्म रखते हैं।"

आयत 12

وَاِنْ نَّكَثُوْٓا اَيْمَانَهُمْ مِّنْۢ بَعْدِ عَهْدِهِمْ وَطَعَنُوْا فِيْ دِيْنِكُمْ

"और अगर वह तोड़ डालें अपने क़ौल व क़रार को अहद करने के बाद और ऐब लगाएँ तुम्हारे दीन में"

فَقَاتِلُوْٓا اَئِمَّةَ الْكُفْرِ ۙ اِنَّهُمْ لَآ اَيْمَانَ لَهُمْ

"तो तुम जंग करो कुफ़्र के इन इमामों से, इनकी क़समों का कोई ऐतबार नहीं"

यह बहुत अहम और क़ाबिले तवज्जो नुक्ता है। ज़ज़ीरा नुमाए अरब के अंदर काफ़िर और मुशरिक तो बहुत थे मगर यहाँ ख़ुसूसी तौर पर कुफ़्र और शिर्क के पेशवाओं से जंग करने का हुक्म दिया जा रह है। ये " اَئِمَّةَ الْكُفْرِ " (कुफ़्र के ईमाम) क़ुरैश थे। वह काबा के मुतवल्ली और तमाम क़बाइल के बुतों के मुजावर थे। दूसरी तरफ़ सियासी, मआशरती और मआशी लिहाज़ से मक्का को "उम्मुल क़ुरा" की हैसियत हासिल थी और वह उनके ज़ेरे तसल्लुत था। उस वक़्त अगरचे ज़ज़ीरा नुमाए अरब में ना कोई मरकज़ी हुकूमत थी और ना ही कोई बाक़ायदा मरकज़ी दारुल हुकूमत था, मगर फ़िर भी इस पूरे ख़ित्ते का मरकज़ी शहर और मअनवी सदर मुक़ाम मक्का ही था, और इस मरकज़ी शहर और उम्मुल क़ुरा में वाक़ेअ अल्लाह के घर को क़ुरैश ने शिर्क का अड्डा बनाया हुआ था। इसलिये जब तक उनको शिकस्त देकर मक्का को कुफ़्र और शिर्क से पाक ना कर दिया जाता, ज़ज़ीरा नुमाए अरब के अंदर दीन के गलबे का तसव्वुर नहीं किया जा सकता था। इसलिये यहाँ { فَقَاتِلُوْٓا اَئِمَّةَ الْكُفْرِ } का वाज़ेह हुकुम दिया गया है, कि जब तक कुफ़्र के इन सरगनों का सिर नहीं कुचला जाएगा और शिर्क के इस मरकज़ी अड्डे को ख़त्म नहीं किया जाएगा उस वक़्त तक सरज़मीने अरब में दीन के कुल्ली गलबे की राह हमवार नहीं होगी।

لَعَلَّهُمْ يَنْتَهُوْنَ ۝١٢

"शायेद कि (इस तरह) वह बाज़ आ जाएँ।"

यानि इन पर सख्ती की जाएगी तो शायद बाज़ आ जाएँगे, नरमी से यह मानने वाले नहीं हैं।

आयत 13

"तुम्हे क्या हो गया है कि तुम जंग नहीं करना चाहते ऐसी क़ौम से जिन्होंने अपने क़ौल व क़रार तोड़ दिए और रसूल को जिलावतन करने का क़सद किया"

اَلَا تُقَاتِلُوْنَ قَوْمًا نَّكَثُوْٓا اَيْمَانَهُمْ وَهَمُّوْا بِاِخْرَاجِ الرَّسُوْلِ

ऐ मुसलमानों! मुशरिकीने मक्का ने सुलह हुदैबिया को ख़ुद तोड़ा है, जबकि तुम्हारी तरफ़ से इस मुआहिदे की कोई ख़िलाफ़वरज़ी नहीं हुई थी, और ये वही लोग तो हैं जिन्होंने अल्लाह के रसूल ﷺ को मक्का से जिलावतनी पर मजबूर किया था। तो आख़िर क्या वजह है कि अब जब इनसे जंग करने का हुकुम दिया जा रहा है तो तुम में से कुछ लोग तज़बज़ुब (कशमकश) का शिकार हो रहे हैं।

"और इन्होंने ही आग़ाज़ किया था तुम्हारे साथ पहली मरतबा।"

وَهُمْ بَدَءُوْكُمْ اَوَّلَ مَرَّةٍ

यानि मक्का के अंदर मुसलमानों को सताने और तकलीफें पहुँचाने की कारस्तानियाँ हों या गज़वा-ए-बदर में जंग छेड़ने का मामला हो या सुलह हुदैबिया के तोड़ने का वाक़िया, तुम्हारे साथ हर ज़्यादती और बेअसूली की पहल हमेशा इन लोगों ही की तरफ़ से होती रही है।

"क्या तुम इनसे डर रहे हो?"

اَتَخْشَوْنَهُمْ ۚ

ये मुतजस्साना सवाल (searching question) का अंदाज़ है कि ज़रा अपने गिरेबानों में झाँको, अपने दिलों को टटोलो, क्या वाक़ई तुम इनसे डर रहे हो? क्या तुम पर कोई बुज़दिली तारी हो गई है? आख़िर तुम क़ुरैश के ख़िलाफ़ इक़दाम से क्यों घबरा रहे हो?

"अल्लाह ज़्यादा हक़दार है कि तुम उससे डरो अगर तुम मोमिन हो।"

فَاللّٰهُ اَحَقُّ اَنْ تَخْشَوْهُ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ۝١٣

अब इसके बाद इक़दाम करने का आखरी हुकुम क़तई अंदाज़ में दिया जा रहा है।

आयत 14

"तुम इनसे जंग करो, अल्लाह इन्हें अज़ाब देगा तुम्हारे हाथों, और इनको रुसवा करेगा, और तुम्हारी मदद करेगा इनके मुक़ाबले में और बहुत से अहले ईमान के सीनों को ठंडक अता फ़रमाएगा।"

قَاتِلُوْهُمْ يُعَذِّبْهُمُ اللّٰهُ بِاَيْدِيْكُمْ وَيُخْزِهِمْ وَيَنْصُرْكُمْ عَلَيْهِمْ وَيَشْفِ صُدُوْرَ قَوْمٍ مُّؤْمِنِيْنَ ۝١٤

आयत 15

"और उनके दिलों के गुस्से को निकाल देगा।"

وَيُذْهِبْ غَيْظَ قُلُوْبِهِمْ ۭ

अल्लाह तआला इस इक़दाम के नतीजे के तौर पर मुसलमानों के सीनों की जलन को दूर करेगा और उन्हें ठंडक अता फ़रमाएगा। मक्का में अभी भी ऐसे लोग मौजूद थे जिनको क़ुरैश की तरफ़ से तकलीफ़ें पहुँचाई जा रही थी। अभी भी मुसलमान बच्चों, औरतों और ज़ईफ़ों पर मज़ालिम ढाये जा रहे थे। चुनाँचे जब तुम्हारे हमले के नतीजे में इन ज़ालिमों की दुरगत बनेगी तो मज़लूम मुसलमानों के सीनों की जलन भी कुछ कम होगी।

وَيَتُوْبُ اللّٰهُ عَلٰى مَنْ يَّشَآءُ ؕ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ۝١٥

"और अल्लाह जिसको चाहेगा तौबा की तौफ़ीक़ देगा। अल्लाह जानने वाला, हिकमत वाला है।"

अब जो आयत "اَمْ حَسِبْتُمْ" के अल्फ़ाज़ से शुरू हो रही है वह अपने ख़ास अंदाज़ और लहज़े के साथ क़ुरान में तीन मरतबा आई है। दो मरतबा इससे पहले और तीसरी मरतबा यहाँ। सूरतुल बक़रह की आयत 214 में फ़रमाया: { اَمْ حَسِبْتُمْ اَنْ تَدْخُلُوا الْجَنَّةَ وَلَمَّا يَاْتِكُمْ مَّثَلُ الَّذِيْنَ خَلَوْا مِنْ قَبْلِكُمْ ؕ } सूरह आले इमरान की आयत 142 में फ़रमाया: { اَمْ حَسِبْتُمْ اَنْ تَدْخُلُوا الْجَنَّةَ وَلَمَّا يَعْلَمِ اللّٰهُ الَّذِيْنَ جٰهَدُوْا مِنْكُمْ } और यहाँ फ़रमाया: { اَمْ حَسِبْتُمْ اَنْ تُتْرَكُوْا وَلَمَّا يَعْلَمِ اللّٰهُ الَّذِيْنَ جٰهَدُوْا مِنْكُمْ } (इसी सूरत की आयत 16)।

एक ही मौज़ू की हामिल इन तीनों आयात के ना सिर्फ़ अल्फ़ाज़ आपस में मिलते हैं, बल्कि इनमें एक अजीबो-ग़रीब मुशाबिहत यह भी है कि हर आयत के नंबर के हिंद्सों का हासिल जमा 7 आता है।

اَمْ حَسِبْتُمْ اَنْ تُتْرَكُوْا وَلَمَّا يَعْلَمِ اللّٰهُ الَّذِيْنَ جٰهَدُوْا مِنْكُمْ

"क्या तुमने गुमान कर लिया है कि तुम यूँ ही छोड़ दिए जाओगे, हालांकि अभी तो अल्लाह ने यह देखा ही नहीं कि तुम में से कौन वह लोग हैं जो जिहाद करने वाले है"

दूसरी क़ौमों के ख़िलाफ़ बरसर पैकार होना और बात है, तुम्हें अब अपनी क़ौम के ख़िलाफ़ जिहाद करने के लिये जाना है। गोया इस हुकुम के अंदर निस्बतन सख्त इम्तिहान है। चुनाँचे अल्लाह तुम्हारा यह इम्तिहान भी लेना चाहता है।

وَلَمْ يَتَّخِذُوْا مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ وَلَا رَسُوْلِهٖ وَلَا الْمُؤْمِنِيْنَ وَلِيْجَةً ؕ

"और जो नहीं रखते अल्लाह, उसके रसूल और अहले ईमान के अलावा किसी के साथ क़ल्बी दोस्ती का कोई ताल्लुक़।"

ये दुनियावी रिश्तों के खुशनुमा बंधन जब तक ईमान की तलवार से कटेंगे नहीं, उस वक़्त तक अल्लाह और दीन के साथ तुम्हारा ख़ुलूस कैसे साबित होगा!

وَاللّٰهُ خَبِيْرٌۢ بِمَا تَعْمَلُوْنَ ۝١٦

"और जो कुछ तुम कर रहे हो अल्लाह उससे बाख़बर है।"

आयात 17 से 24 तक

مَا كَانَ لِلْمُشْرِكِيْنَ اَنْ يَّعْمُرُوْا مَسٰجِدَ اللّٰهِ شٰهِدِيْنَ عَلٰٓى اَنْفُسِهِمْ بِالْكُفْرِ ؕ اُولٰٓئِكَ حَبِطَتْ اَعْمَالُهُمْ ۖ وَفِي النَّارِ هُمْ خٰلِدُوْنَ ۝١٧ اِنَّمَا يَعْمُرُ مَسٰجِدَ اللّٰهِ مَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَاَقَامَ الصَّلٰوةَ وَاٰتَى الزَّكٰوةَ وَلَمْ يَخْشَ اِلَّا اللّٰهَ فَعَسٰٓى اُولٰٓئِكَ اَنْ يَّكُوْنُوْا مِنَ الْمُهْتَدِيْنَ ۝١٨ اَجَعَلْتُمْ سِقَايَةَ الْحَآجِّ وَعِمَارَةَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ كَمَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَجٰهَدَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ؕ لَا يَسْتَوٗنَ عِنْدَ اللّٰهِ ؕ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظّٰلِمِيْنَ ۝١٩ اَلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَهَاجَرُوْا وَجٰهَدُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ ۙ اَعْظَمُ دَرَجَةً عِنْدَ اللّٰهِ ؕ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْفَآئِزُوْنَ ۝٢٠ يُبَشِّرُهُمْ رَبُّهُمْ بِرَحْمَةٍ مِّنْهُ وَرِضْوَانٍ وَّجَنّٰتٍ لَّهُمْ فِيْهَا نَعِيْمٌ مُّقِيْمٌ ۝٢١ خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ اَبَدًا ؕ اِنَّ اللّٰهَ عِنْدَهٗٓ اَجْرٌ عَظِيْمٌ ۝٢٢ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوْٓا اٰبَآءَكُمْ وَاِخْوَانَكُمْ اَوْلِيَآءَ اِنِ اسْتَحَبُّوا الْكُفْرَ عَلَى الْاِيْمَانِ ؕ وَمَنْ يَّتَوَلَّهُمْ مِّنْكُمْ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ ۝٢٣ قُلْ اِنْ كَانَ اٰبَآؤُكُمْ وَاَبْنَآؤُكُمْ وَاِخْوَانُكُمْ وَاَزْوَاجُكُمْ وَعَشِيْرَتُكُمْ وَاَمْوَالُ ِۨ اقْتَرَفْتُمُوْهَا وَتِجَارَةٌ تَخْشَوْنَ كَسَادَهَا وَمَسٰكِنُ تَرْضَوْنَهَآ اَحَبَّ اِلَيْكُمْ مِّنَ اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ وَجِهَادٍ فِيْ سَبِيْلِهٖ فَتَرَبَّصُوْا حَتّٰى يَاْتِيَ اللّٰهُ بِاَمْرِهٖ ؕ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْفٰسِقِيْنَ ۝٢٤

आयत 17

"मुशरिकों का यह हक़ नहीं है कि वह आबाद करें अल्लाह की मस्जिदों को अपने ऊपर कुफ़्र की गवाही देते हुए।"

مَا كَانَ لِلْمُشْرِكِيْنَ اَنْ يَّعْمُرُوْا مَسٰجِدَ اللّٰهِ شٰهِدِيْنَ عَلٰٓى اَنْفُسِهِمْ بِالْكُفْرِ ؕ

ये मस्जिदें तो अल्लाह के घर हैं, यह काबा अल्लाह का घर और तौहीद का मरकज़ है, जबकि क़ुरैश अलल ऐलान कुफ़्र पर डटे हुए हैं और अल्लाह के घर के मुतवल्ली भी बने बैठे हैं। ऐसा क्यों कर मुमकिन है? अल्लाह के इन दुश्मनों का इसकी मसाजिद के ऊपर कोई हक़ कैसे हो सकता है?

"ये वह लोग हैं जिनके सारे आमाल ज़ाया हो गए हैं, और आग ही में वह रहेंगे हमेशा-हमेशा।"

اُولٰٓئِكَ حَبِطَتْ اَعْمَالُهُمْ ۖ وَفِى النَّارِ هُمْ خٰلِدُوْنَ ۝١٧

बैतुल्लाह की देखभाल और हाजियों की ख़िदमत जैसे वह आमाल जिन पर मुशरिकीने मक्का फूले नहीं समाते, ईमान के बगैर अल्लाह के नज़दीक उनके इन आमाल की कोई हैसियत नहीं है। उनके कुफ़्र के सबब अल्लाह ने उनके तमाम आमाल ज़ाया कर दिए हैं।

आयत 18

"यक़ीनन अल्लाह की मस्जिदों को तो वह लोग आबाद करते हैं जो ईमान लाये अल्लाह पर और यौमे आखिरत पर, नमाज़ क़ायम करें, ज़कात अदा करें, और ना डरे किसी से सिवाय अल्लाह के"

اِنَّمَا يَعْمُرُ مَسٰجِدَ اللّٰهِ مَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَاَقَامَ الصَّلٰوةَ وَاٰتَى الزَّكٰوةَ وَلَمْ يَخْشَ اِلَّا اللّٰهَ

"तो उम्मीद है कि यही लोग राहयाब होंगे।"

فَعَسٰٓى اُولٰٓئِكَ اَنْ يَّكُوْنُوْا مِنَ الْمُهْتَدِيْنَ ۝١٨

आयत 19

"क्या तुमने हाजियों को पानी पिलाने और मस्जिदे हराम को आबाद रखने को बराबर कर दिया है उस शख्स (के आमाल) के जो ईमान लाया अल्लाह पर और यौमे आखिरत पर और उसने जिहाद किया अल्लाह की राह में?"

اَجَعَلْتُمْ سِقَايَةَ الْحَآجِّ وَعِمَارَةَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ كَمَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَجٰهَدَ فِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ؕ

मुशरिकीने मक्का इस बात पर बहुत नाज़ां (गौरवान्वित) हैं कि उन्होंने बैतुल्लाह को आबाद रखा हुआ है और वह हाजियों को पानी पिलाने जैसा कारे-खैर सरअंजाम देते हैं, तो क्या उनके ये अमूर (काम) ईमान बिल्लाह, ईमान बिलआखिरत और जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह के बराबर हो जाएँगे?

"ये बराबर नहीं हो सकते अल्लाह के नज़दीक। और अल्लाह ऐसे ज़ालिमों को हिदायत नहीं देता।"

لَا يَسْتَوٗنَ عِنْدَ اللّٰهِ ؕ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِى الْقَوْمَ الظّٰلِمِيْنَ ۝١٩

आयत 20

"वह लोग जो ईमान लाए, जिन्होंने हिजरत की और जिहाद किया अल्लाह की राह में अपने मालों और अपनी जानों के साथ, उनका बहुत अज़ीम रुतबा है अल्लाह के नज़दीक।"

اَلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَهَاجَرُوْا وَجٰهَدُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ ۙ اَعْظَمُ دَرَجَةً عِنْدَ اللّٰهِ ؕ

"और वही लोग हैं कामयाब होने वाले।"

وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْفَآئِزُوْنَ ۝٢٠

आयत 21

"उन्हें बशारत देता है उनका रब अपनी रहमते ख़ास और रज़ामंदी की और उन बाग़ात की जिनके अंदर उनके लिये हमेशा रहने वाली नेअमतें होंगी।"

يُبَشِّرُهُمْ رَبُّهُمْ بِرَحْمَةٍ مِّنْهُ وَرِضْوَانٍ وَّجَنّٰتٍ لَّهُمْ فِيْهَا نَعِيْمٌ مُّقِيْمٌ ۝٢١

आयत 22

"जिनमें वह रहेंगे हमेशा-हमेश। यक़ीनन अल्लाह ही के पास है बहुत बड़ा अज्र।"

خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ اَبَدًا ؕ اِنَّ اللّٰهَ عِنْدَهٗٓ اَجْرٌ عَظِيْمٌ ۝٢٢

अगली दो आयात अपने मौज़ू और फ़लसफा-ए-दीन के ऐतबार से बहुत अहम हैं। जैसा कि इससे पहले भी ज़िक्र हो चुका है, मक्का पर चढ़ाई के सिलसिले में बाज़ मुसलमानों में तज़बज़ुब पाया जाता था। इसकी एक बहुत ही अहम वज़ह यह थी कि मुशरिकीने मक्का में से अक्सर के साथ मुहाजरीन की बहुत क़रीबी अज़ीज़ दारियाँ थीं। अभी तक तो कुछ उम्मीद थी कि शायद वह लोग ईमान ले आयेंगे, मगर अब साफ़ नज़र आ रहा था कि मक्का पर चढ़ाई की सूरत में अपने क़रीबी अज़ीज़ों के ख़िलाफ़ लड़ना होगा, अपने भाईयों, बेटों और बापों के गले काटना होंगे। इंसानी सतह पर ये कोई आसान काम नहीं था, मगर अल्लाह तआला को अभी मुसलमानों का ये मुश्किलतरीन इम्तिहान लेना भी मक़सूद था। लिहाज़ा ये आयात इस ज़िमन में अल्लाह की मरज़ी और दीने हक़ का असूल बहुत वाज़ेह और दो टूक अल्फ़ाज़ में बयान कर रही हैं।

आयत 23

"ऐ अहले ईमान! अपने बापों और भाईयों को दिली दोस्त और हिमायती मत बनाओ अगर इन्होंने ईमान के मुक़ाबले में कुफ़्र को पसंद किया है।"

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوْٓا اٰبَآءَكُمْ وَاِخْوَانَكُمْ اَوْلِيَآءَ اِنِ اسْتَحَبُّوا الْكُفْرَ عَلَى الْاِيْمَانِ ؕ

अगर अब भी तुम्हारे दिलों में अपने काफ़िर अक़रबा (क़रीब वालों) के लिये मोहब्बत मौजूद है तो इसका मतलब यह है कि फ़िर ईमान के साथ तुम्हारा रिश्ता मज़बूत नहीं है। अल्लाह, उसके दीन और तौहीद के लिये तुम्हारे जज़्बात में गैरत व हमियत नहीं है।

"और तुम में से जो कोई भी उनके साथ विलायत (दोस्ती) का ताल्लुक़ रखेंगे तो ऐसे लोग (खुद भी) ज़ालिम ठहरेंगे।"

وَمَنْ يَّتَوَلَّهُمْ مِّنْكُمْ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ ۝٢٣

अब वह आयत आ रही है जो इस मौज़ू पर क़ुरान करीम की अहम तरीन आयत है।

आयत 24

قُلْ اِنْ كَانَ اٰبَآؤُكُمْ وَاَبْنَآؤُكُمْ
وَاِخْوَانُكُمْ وَاَزْوَاجُكُمْ وَعَشِيْرَتُكُمْ
وَاَمْوَالُ ِۨاقْتَرَفْتُمُوْهَا وَتِجَارَةٌ تَخْشَوْنَ
كَسَادَهَا وَمَسٰكِنُ تَرْضَوْنَهَآ اَحَبَّ
اِلَيْكُمْ مِّنَ اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ وَجِهَادٍ فِيْ
سَبِيْلِهٖ فَتَرَبَّصُوْا حَتّٰى يَاْتِيَ اللّٰهُ بِاَمْرِهٖ

"(ऐ नबी ﷺ! इनसे) कह दीजिये कि अगर तुम्हारे बाप, तुम्हारे बेटे, तुम्हारे भाई, तुम्हारी बीवियाँ (और बीवियों के लिए शौहर), तुम्हारे रिश्तेदार और वह माल जो तुमने बहुत मेहनत से कमाए हैं, और वह तिजारत जिसके मंदे का तुम्हें बहुत ख़तरा रहता है, और वह मकानात जो तुम्हें बहुत पसंद हैं, (अगर ये सब चीज़ें) तुम्हें महबूब तर हैं अल्लाह, उसके रसूल और उसके रस्ते में जिहाद से, तो इंतेज़ार करो यहाँ तक कि अल्लाह अपना फ़ैसला सुना दे।"

وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْفٰسِقِيْنَ ﴿٢٤﴾

"और अल्लाह ऐसे फ़ासिकों को राहयाब नहीं करता।"

यहाँ आठ चीज़ें गिनवा दी गई हैं कि अगर इन आठ चीज़ों की मोहब्बतों में से किसी एक या सब मोहब्बतों का जज़्बा अल्लाह, उसके रसूल और उसके रस्ते में जिहाद की मोहब्बतों के जज़्बे के मुक़ाबले में ज़्यादा है तो फ़िर अल्लाह के फ़ैसले का इंतेज़ार करो। यह बहुत सख्त और रौंगटे खड़े कर देने वाला लहज़ा और अंदाज़ है। हम में से हर शख्स को चाहिये कि अपने बातिन में एक तराज़ू नसब करे। उसके एक पलड़े में ये आठ मोहब्बतें डालें और दूसरे में अल्लाह, उसके रसूल और जिहाद की तीन मोहब्बतें डालें और फ़िर अपना जायज़ा ले कि मैं कहाँ खड़ा हूँ! चूँकि इंसान खुद अपने नफ्स से खूब वाक़िफ़ है {بَلِ الْاِنْسَانُ عَلٰي نَفْسِهٖ بَصِيْرَةٌ} (सूरह क़ियामा, आयत 14) इसलिये उसे अपने बातिन की सही सूरतेहाल मालूम हो जायेगी। बरहाल इस सिलसिले में हर मुस्लमान को मालूम होना चाहिये कि अगर तो उसकी सारी ख्वाहिशें, मोहब्बतें और हुक़ूक़ (बीवी, औलाद, नफ्स वगैरह के हुक़ूक़) इन तीन मोहब्बतों के ताबेअ हैं तो उसके मामलाते ईमान दुरुस्त हैं, लेकिन अगर मज़कूरा आठ चीज़ों में से किसी एक भी चीज़ की मोहब्बत का ग्राफ़ ऊपर चला गया तो बस यूँ समझें कि वहाँ तौहीद ख़त्म है और शिर्क शुरू! इसी फ़लसफ़े को अल्लामा इक़बाल ने अपने इस शेअर में इस तरह पेश किया है:

ये माल व दौलते दुनिया, ये रिश्ता व पेवंद
बुताने वहम व गुमाँ, ला इलाहा इल्लल्लाह!

आयत ज़ेरे नज़र में जो आठ चीज़ें गिनवाई गई हैं उनमें पहली पाँच "रिश्ता व पेवंद" के ज़ुमरे में आती हैं जबकी आखरी तीन "माल व दौलते दुनिया" की मुख्तलिफ़ शक्लें हैं। अल्लामा इक़बाल फ़रमाते हैं कि इन चीज़ों की असल में कोई हक़ीक़त नहीं है, यह हमारे वहम और तवाह्हुम के बनाए हुए बुत हैं। जब तक ला ईलाहा इल्लल्लाह की शमशीर से इन बुतों को तोड़ा नहीं जायेगा, बंदा-ए-मोमिन के नहां ख़ाना-ए-दिल में तौहीद का अलम (झंडा) बुलंद नहीं होगा।

दूसरे और तीसरे रुकूअ पर मुश्तमिल वह ख़ुत्बा जो रमज़ान 8 हिजरी से क़ब्ल नाज़िल हुआ था यहाँ ख़त्म हुआ। अब चौथे रुकूअ के आग़ाज़ से सिलसिला-ए-कलाम फिर से सूरत की इब्तदाई छ: आयात के साथ जोड़ा जा रहा है।

आयात 25 से 29 तक

لَقَدْ نَصَرَكُمُ اللّٰهُ فِيْ مَوَاطِنَ كَثِيْرَةٍ ۙ وَّيَوْمَ حُنَيْنٍ ۙ اِذْ اَعْجَبَتْكُمْ كَثْرَتُكُمْ فَلَمْ
تُغْنِ عَنْكُمْ شَيْـًٔا وَّضَاقَتْ عَلَيْكُمُ الْاَرْضُ بِمَا رَحُبَتْ ثُمَّ وَلَّيْتُمْ مُّدْبِرِيْنَ ﴿٢٥﴾
ثُمَّ اَنْزَلَ اللّٰهُ سَكِيْنَتَهٗ عَلٰى رَسُوْلِهٖ وَعَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ وَاَنْزَلَ جُنُوْدًا لَّمْ تَرَوْهَا ۚ
وَعَذَّبَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا ۭ وَذٰلِكَ جَزَآءُ الْكٰفِرِيْنَ ﴿٢٦﴾ ثُمَّ يَتُوْبُ اللّٰهُ مِنْۢ بَعْدِ ذٰلِكَ
عَلٰى مَنْ يَّشَاۗءُ ۭ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ﴿٢٧﴾ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِنَّمَا الْمُشْرِكُوْنَ نَجَسٌ
فَلَا يَقْرَبُوا الْمَسْجِدَ الْحَرَامَ بَعْدَ عَامِهِمْ هٰذَا ۚ وَاِنْ خِفْتُمْ عَيْلَةً فَسَوْفَ يُغْنِيْكُمُ

اللّٰهُ مِنۡ فَضۡلِهٖۤ اِنۡ شَآءَ ؕ اِنَّ اللّٰهَ عَلِيۡمٌ حَكِيۡمٌ ﴿۲۸﴾ قَاتِلُوا الَّذِيۡنَ لَا يُؤۡمِنُوۡنَ بِاللّٰهِ
وَلَا بِالۡيَوۡمِ الۡاٰخِرِ وَلَا يُحَرِّمُوۡنَ مَا حَرَّمَ اللّٰهُ وَرَسُوۡلُهٗ وَلَا يَدِيۡنُوۡنَ دِيۡنَ الۡحَقِّ
مِنَ الَّذِيۡنَ اُوۡتُوا الۡكِتٰبَ حَتّٰى يُعۡطُوا الۡجِزۡيَةَ عَنۡ يَّدٍ وَّهُمۡ صٰغِرُوۡنَ ﴿۲۹﴾

आयत 25

لَقَدۡ نَصَرَكُمُ اللّٰهُ فِىۡ مَوَاطِنَ كَثِيۡرَةٍ ۙ وَّيَوۡمَ حُنَيۡنٍ ۙ

"(ऐ मुसलमानों!) अल्लाह ने तुम्हारी मदद की है बहुत से मौक़ों पर और (ख़ास तौर पर) हुनैन के दिन"

जैसा कि क़ब्ल अज़ बयान हो चुका है, पहले, चौथे और पाँचवें रुकूअ पर मुश्तमिल ये ख़ुतबा ज़ुल क़ाअदा 9 हिजरी में नाज़िल हुआ था, जबकि इससे पहले गज़वा-ए-हुनैन शवाल 8 हिजरी में वक़ूअ पज़ीर हो चुका था।

اِذۡ اَعۡجَبَتۡكُمۡ كَثۡرَتُكُمۡ

"जब तुम्हे अपनी कसरत पर नाज़ हो गया था"

मामला यूँ नहीं था कि लश्कर में शामिल तमाम मुसलमानों को अपनी कसरत पर नाज़ और फ़ख्र महसूस हो रहा था। गज़वा-ए-हुनैन में मुसलमानों की तादाद बाराह हज़ार थी, जो इससे पहले कभी किसी गज़वा में इकट्ठी नहीं हुई थी। इनमें से दस हज़ार मुसलमान तो वह थे जो फ़तह मक्का के वक़्त हुज़ूर ﷺ के हमराह थे, और दो हज़ार लोग मक्का से शामिल हुए थे। मक्का से शामिल होने वालो में अक्सरियत उन नौमुस्लिमों की थी जो मक्का फ़तह हो जाने के बाद ईमान लाये थे। यह भी मुमकिन है कि उनमें कुछ मुशरिक भी हों जो अब मुसलमानों की रिआया होने के बाइस मआवनीन व खादमीन की हैसियत से लश्कर में शामिल हो गए हों। मुसलमानों की यह लश्कर कशी हवाज़िन और शक़ीफ़ के क़बाइल के ख़िलाफ़ थी जो ताइफ़ और उसके इर्द-गिर्द की शादाब वादियों में आबाद थे। मुसलमान इससे क़ब्ल बार-हा (कई बार) क़लील तादाद और मामूली अस्लाह से कुफ्फ़ार की बड़ी-बड़ी फ़ौजों को शिकस्त दे चुके थे। चुनाँचे बाज़ मुसलमानों की ज़बान से अपनी कसरत के ज़अम में ये अल्फ़ाज़ निकल गए कि "आज मुसलमानों पर कौन ग़ालिब आ सकता है!" दूसरी तरफ़ हवाज़न और शक़ीफ़ के क़बाइल ने पहले से अपने तीरअंदाज़ दस्ते पहाड़ियों और घाटियों पर तैनात कर रखे थे और मौज़ों मक़ामात पर सफ़ आराई कर ली थी। ये लोग बड़े माहिर तीरअंदाज़ थे। मुसलमानों का लश्कर जब वादी-ए-हुनैन में पहुँचा तो पहाड़ियों पर मौजूद तीरअंदाज़ों ने तीरों की बौछार कर दी। लश्कर नशेब में था, तीर बुलंदी से आ रहे थे और दोनों तरफ़ से आ रहे थे। इससे लश्कर में भगदड मच गई और बाराह हज़ार का लश्कर ज़रार तितर-बितर हो गया। जब हरावल दस्ते (घुड़सवार) से लोग अज़तरारी कैफ़ियत में पलट कर भागे तो रेले की सूरत में बहुत से दूसरे लोगों को भी अपने साथ धकेलते चले गए। बाज़ रिवायात में आता है कि रसूल अल्लाह ﷺ के साथ सिर्फ़ 30 या 40 आदमी रह गए थे। अल्लामा शिबली रहि. ने "सीरतुलनबी ﷺ" में यही लिखा है कि 30, 40 आदमी रह गए थे, लेकिन सैय्यद सुलेमान नदवी रहमतुल्लाह ने बाद में अपने उस्ताद की राय पर इख्तलाफ़ी नोट लिखा कि तीन सौ या चार सौ आदमी आप ﷺ के साथ रह गए थे। लेकिन बाराह हज़ार के लश्कर में से तीन या चार सौ आदमियों का रह जाना भी कोई मामूली वाक़िया नही था। इस सूरतेहाल में हुज़ूर ﷺ अपनी सवारी से नीचे उतर आये, आप ﷺ ने अलम (झंडा) खुद अपने हाथ में लिया और बाआवाज़-ए-बुलंद रजज़ पढ़ा: اَنَا النَّبِیُّ لا کَذِب اَنَا ابْنُ عَبْدِ المُطَّلِب कि मैं नबी हूँ इसमें कोई शक नहीं! (यानि मैं यक़ीनन नबी हूँ, चाहे ये बाराह हज़ार लोग मेरा साथ दे तब भी, और अगर कोई भी साथ ना दे तब भी)। और मैं अब्दुल मुतल्लिब का बेटा हूँ, यानि मैं अब्दुल मुतल्लिब का पोता मैदाने जंग में ब-नफ्से नफ़ीस मौजूद हूँ। फिर आप ﷺ ने लोगों को पुकारा اِلَیَّ یَاعِبَاد اللہ "अल्लाह के बन्दों, मेरी तरफ़ आओ!" इसके बाद आप ﷺ ने क़रीब ही मौजूद अपने चचा हज़रत अब्बास रज़ि. को, जिनकी आवाज़ काफ़ी बुलंद थी, हुकुम दिया कि अंसार व मुहाजरीन को पुकारे। उन्होंने बुलन्द आवाज़ से पुकारा: असहाबे बदर

कहाँ हो? असहाबे शजरह (बैअत रिज़वान वालों) कहाँ हो? इस पर लोग रसूल अल्लाह ﷺ की तरफ़ पलटना शुरू हुए और लश्कर फिर से इकट्ठा हुआ। इसके बाद एक भरपूर जंग लड़ने के बाद मुसलमानो को फ़तह हासिल हुई। आयत ज़ेरे नज़र का इशारा इस पूरे वाक़िये की तरफ़ है।

فَلَمْ تُغْنِ عَنْكُمْ شَيْـًٔا وَّضَاقَتْ عَلَيْكُمُ الْاَرْضُ بِمَا رَحُبَتْ ثُمَّ وَلَّيْتُمْ مُّدْبِرِيْنَ ۝٢٥

"तो वह (कसरत) तुम्हारे कुछ काम ना आ सकी और ज़मीन पूरी फ़राखी के बावजूद तुम पर तंग हो गई, फिर तुम पीठ मोड़ कर भाग खड़े हुए।"

आयत 26

ثُمَّ اَنْزَلَ اللّٰهُ سَكِيْنَتَهٗ عَلٰى رَسُوْلِهٖ وَعَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ وَاَنْزَلَ جُنُوْدًا لَّمْ تَرَوْهَا ۚ

"फ़िर अल्लाह ने नाज़िल फ़रमाई (अपनी तरफ़ से) तस्कीन अपने रसूल और अहले ईमान पर और (उस वक़्त भी) ऐसे लश्कर उतारे जिन्हें तुमने नहीं देखा"

وَعَذَّبَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا ۭ وَذٰلِكَ جَزَاۗءُ الْكٰفِرِيْنَ ۝٢٦

"और अज़ाब दिया काफ़िरों को। और यक़ीनन काफ़िरों का बदला यही है।"

आयत 27

ثُمَّ يَتُوْبُ اللّٰهُ مِنْۢ بَعْدِ ذٰلِكَ عَلٰي مَنْ يَّشَاۗءُ ۭ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝٢٧

"फ़िर इसके बाद (भी) अल्लाह तौबा नसीब फ़रमायेगा अपने बन्दों में से जिसको चाहेगा। और अल्लाह बख़्शने वाला, रहम करने वाला है।"

आयत 28

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِنَّمَا الْمُشْرِكُوْنَ نَجَسٌ فَلَا يَقْرَبُوا الْمَسْجِدَ الْحَرَامَ بَعْدَ عَامِهِمْ هٰذَا ۚ

"ऐ अहले ईमान! ये मुशरिक यक़ीनन नापाक हैं, लिहाज़ा इस साल के बाद ये मस्जिदे हराम के क़रीब ना फटकने पाएँ।"

यानि इस साल (9 हिजरी) के हज में तो मुशरिकीन भी शामिल हैं, मगर आईन्दा कभी कोई मुशरिक हज के लिये नहीं आ सकेगा और ना किसी मुशरिक को बैतुल्लाह या मस्जिदे हराम के क़रीब आने की इजाज़त होगी।

وَاِنْ خِفْتُمْ عَيْلَةً

"और अगर तुम्हें अंदेशा हो फ़क़र (गरीबी) का"

فَسَوْفَ يُغْنِيْكُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖٓ اِنْ شَاۗءَ ۭ اِنَّ اللّٰهَ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ۝٢٨

"तो अनक़रीब अल्लाह तुम्हें गनी कर देगा अपने फ़ज़्ल से अगर वह चाहेगा। यक़ीनन अल्लाह सब कुछ सुनने वाला, हिकमत वाला है।"

अगर किसी के ज़हन में यह ख्याल आये कि इस हुकुम के बाद हाजियों की तादाद कम हो जाएगी और उनके नज़रानों और क़ुर्बानियों से होने वाली आमदानी में भी कमी आ जाएगी, तो उसे अल्लाह की ज़ात पर पूरा-पूरा भरोसा रखना चाहिये। अनक़रीब इस क़दर दुनियावी दौलत तुम लोगों को मिलेगी कि तुम संभाल नहीं सकोगे। चुनाँचे रसूल अल्लाह ﷺ के विसाल

के बाद चंद सालों के अंदर-अंदर हालात यक्सर तबदील हो गए। सलतनते फ़ारस और सलतनते रोमा की फ़तूहात के बाद माले ग़नीमत का गोया सैलाब उमड़ आया और इस क़दर माल मुसलमानों के लिये संभालना वाक़ई मुश्किल हो गया। यही सूरते हाल थी जिसके बारे में हुज़ूर ﷺ ने अपनी ज़िंदगी के आख़री अय्याम (दिनों) में फ़रमाया था:

فَوَاللهِ لَا الْفَقْرُ اَخْشٰى عَلَيْكُمْ ، وَلٰكِنْ اَخْشٰى عَلَيْكُمْ اَنْ تُبْسَطَ عَلَيْكُمُ الدُّنْيَا كَمَا بُسِطَتْ عَلٰى مَنْ كَانَ قَبْلَكُمْ ، فَتَنَافَسُوْهَا كَمَا تَنَافَسُوْهَا ، وَتُهْلِكَكُمْ كَمَا اَهْلَكَتْهُمْ

"पस अल्लाह की क़सम (ऐ मुसलमानों!) मुझे तुम पर फ़क़र व अहतियाज का कोई अंदेशा नहीं है, बल्कि मुझे तुम पर इस बात का अंदेशा है कि तुम पर दुनिया कुशादा कर दी जाएगी (तुम्हारे क़दमों में माल व दौलत के अम्बार लग जाएँगे) जैसे कि तुमसे पहले लोगों पर कुशादा की गई, फ़िर तुम इसके लिये एक-दूसरे से आगे बढ़ने की कोशिश करोगे जैसे कि वो लोग करते रहे, फ़िर ये तुम्हें तबाह व बरबाद करके रख देगी जैसे कि इसने उन लोगों को तबाह व बरबाद कर दिया।"(20)

आयत 29

قَاتِلُوا الَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَلَا بِالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَلَا يُحَرِّمُوْنَ مَا حَرَّمَ اللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗ وَلَا يَدِيْنُوْنَ دِيْنَ الْحَقِّ مِنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ حَتّٰى يُعْطُوا الْجِزْيَةَ عَنْ يَّدٍ وَّهُمْ صٰغِرُوْنَ ﴿٢٩﴾

"जंग करो तुम इन लोगों से जो ना अल्लाह पर ईमान रखते हैं, ना यौमे आख़िरत पर और ना हराम ठहराते हैं अल्लाह और उसके रसूल की हराम करदा चीज़ों को, और ना क़बूल करते हैं दीने हक़ की ताबेदारी को, उन लोगों में से जिनको किताब दी गई थी, यहाँ तक कि वह अपने हाथ से जिज़्या पेश करें और छोटे (ताबेअ) बन कर रहें।"

इस आयत में भी दीन का बहुत अहम फ़लसफ़ा बयान हुआ है। इस हुकुम में मुशरिकीने अरब और नस्ले इंसानी के बाक़ी लोगों के दरमियान फर्क़ किया गया है। सूरतुत्तौबा की आयत 5 की रू से मुशरिकीने अरब को जो मोहलत या अमान दी गई थी उस मुद्दत के गुज़रने के बाद उनके लिये तो कोई और रास्ता (option) इसके अलावा नहीं था कि या वह ईमान ले आएँ या उन्हें क़त्ल कर दिया जाएगा, या वह ज़ज़ीरा नुमाए अरब छोड़ कर चले जाएँ। उनका मामला तो इसलिये ख़ुसूसी था कि मोहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ ने अल्लाह के रसूल की हैसियत से उन पर आखरी दर्जे में इत्मामे हुज्जत कर दिया था, और आप ﷺ का इन्कार करके वह लोग अज़ाबे इस्तेसाल के हक़दार हो चुके थे। मगर यहूद व नसारा और बाक़ी पूरी नौए इन्सानी के लिये इस ज़िमन में क़ानून मुख्तलिफ़ है। ज़ज़ीरा नुमाए अरब से बाहर के लोगों के लिये और क़यामत तक तमाम दुनिया के इंसानों के लिये वह चैलेंज नहीं कि ईमान लाओ वरना क़त्ल कर दिए जाओगे। क्योंकि इसके बाद अब हुज़ूर ﷺ बहैसियते रसूल मअनवी तौर पर तो मौजूद हैं मगर ब-नफ्से नफ़ीस मौजूद नहीं, कि बराहेरास्त कोई क़ौम आप ﷺ की दावत को रद्द करके अज़ाबे इस्तेसाल की मुस्तहिक़ हो जाए। चुनाँचे बाक़ी तमाम नौए इंसानी के अफ़राद का मामला यह है कि उनसे क़िताल किया जाएगा यहाँ तक कि वो दीन की बालादस्ती को बहैसियत एक निज़ाम के क़ुबूल कर लें, मगर इन्फ़रादी तौर पर किसी को क़ुबूले इस्लाम के लिये मजबूर नहीं किया जाएगा। हर कोई अपने मज़हब पर कारबंद रहते हुए इस्लामी रियासत के एक शहरी के तौर पर रह सकता है, मगर ऐसी सूरतेहाल में गैर मुस्लिमों को जिज़्या देना होगा। इसी फ़लसफ़े के तहत खिलाफ़ते राशदा के दौर में किसी भी मुल्क पर लश्कर कशी करने से पहले तीन शराइत पेश की जाती थी। पहली ये कि ईमान ले आओ, ऐसी सूरत में तुम हमारे बराबर के शहरी होंगे। अगर ये क़ुबूल ना हो तो अल्लाह के दीन की बालादस्ती क़ुबूल करके इस्लामी रियासत के फ़रमाबरदार शहरी बन कर रहना और जिज़्या देना क़ुबूल कर लो। ऐसी सूरत में तुम लोगों को आज़ादी होगी कि तुम यहूदी, ईसाई, मजूसी, हिन्दू वगैरह जो चाहो बन कर रहो। लेकिन अगर यह भी क़ाबिले क़ुबूल ना हो

और तुम लोग इस ज़मीन पर बातिल का निज़ाम क़ायम रखना चाहो तो फ़िर इसका फ़ैसला जंग से होगा।

आयात 30 से 35 तक

وَقَالَتِ الْيَهُوْدُ عُزَيْرُ ۨ ابْنُ اللّٰهِ وَقَالَتِ النَّصٰرَى الْمَسِيْحُ ابْنُ اللّٰهِ ؕ ذٰلِكَ قَوْلُهُمْ
بِاَفْوَاهِهِمْ ۚ يُضَاهِـُٔوْنَ قَوْلَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْ قَبْلُ ؕ قٰتَلَهُمُ اللّٰهُ ۚ اَنّٰى يُؤْفَكُوْنَ ۝٣٠
اِتَّخَذُوْۤا اَحْبَارَهُمْ وَرُهْبَانَهُمْ اَرْبَابًا مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ وَالْمَسِيْحَ ابْنَ مَرْيَمَ ۚ وَمَاۤ
اُمِرُوْۤا اِلَّا لِيَعْبُدُوْۤا اِلٰهًا وَّاحِدًا ۚ لَاۤ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ؕ سُبْحٰنَهٗ عَمَّا يُشْرِكُوْنَ ۝٣١ يُرِيْدُوْنَ
اَنْ يُّطْفِـُٔوْا نُوْرَ اللّٰهِ بِاَفْوَاهِهِمْ وَيَاْبَى اللّٰهُ اِلَّاۤ اَنْ يُّتِمَّ نُوْرَهٗ وَلَوْ كَرِهَ الْكٰفِرُوْنَ ۝٣٢
هُوَ الَّذِىْۤ اَرْسَلَ رَسُوْلَهٗ بِالْهُدٰى وَدِيْنِ الْحَقِّ لِيُظْهِرَهٗ عَلَى الدِّيْنِ كُلِّهٖ ۙ وَلَوْ كَرِهَ
الْمُشْرِكُوْنَ ۝٣٣ يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْۤا اِنَّ كَثِيْرًا مِّنَ الْاَحْبَارِ وَالرُّهْبَانِ لَيَاْكُلُوْنَ
اَمْوَالَ النَّاسِ بِالْبَاطِلِ وَيَصُدُّوْنَ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ؕ وَالَّذِيْنَ يَكْنِزُوْنَ الذَّهَبَ
وَالْفِضَّةَ وَلَا يُنْفِقُوْنَهَا فِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ۙ فَبَشِّرْهُمْ بِعَذَابٍ اَلِيْمٍ ۝٣٤ يَّوْمَ يُحْمٰى
عَلَيْهَا فِىْ نَارِ جَهَنَّمَ فَتُكْوٰى بِهَا جِبَاهُهُمْ وَجُنُوْبُهُمْ وَظُهُوْرُهُمْ ؕ هٰذَا مَا كَنَزْتُمْ
لِاَنْفُسِكُمْ فَذُوْقُوْا مَا كُنْتُمْ تَكْنِزُوْنَ ۝٣٥

आयत 30

وَقَالَتِ الْيَهُوْدُ عُزَيْرُ ۨ ابْنُ اللّٰهِ وَقَالَتِ
النَّصٰرَى الْمَسِيْحُ ابْنُ اللّٰهِ ؕ

"और यहूद ने कहा (अक़ीदा गढ़ लिया) कि उज़ैर अलै० अल्लाह का बेटा है और नसारा ने कहा (अक़ीदा गढ़ लिया) कि मसीह अलै० अल्लाह का बेटा है।"

ذٰلِكَ قَوْلُهُمْ بِاَفْوَاهِهِمْ ۚ يُضَاهِـُٔوْنَ قَوْلَ
الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْ قَبْلُ ؕ

"ये इनके मुहँ की बातें हैं। ये नक़ल कर रहे हैं उन लोगों की बातों की जिन्होंने कुफ़्र किया था इनसे पहले।"

इनकी इन बातों या मनगढ़त अक़ीदों की कोई हक़ीकत नहीं है, बल्कि ये लोग अपने से पहले वाले मुशरिकीन के अक़ाइद की नक़ल कर रहे हैं। "मिथ्राज़िम" एक क़दीम मज़हब था जिसका मरकज़ मिस्र था। इस मज़हब में पहले से ये तसलीस मौजूद थी: "God the Father, Horus the Son of God Isis the Mother Goddess." यानि ख़ुदा, ख़ुदा का बेटा और उसकी माँ आईसिस देवी। ये पहली तसलीस थी जो मिस्र में बनी। फिर जब सेंट पॉल ने ईसाईयत की तबलीग़ शुरू की और उसका दायरा गैर इस्राइलियों (gentiles) तक वसीअ कर दिया तो अहले मिस्र की नक्क़ाली में तसलीस जैसे नज़रियात ईसाइयत में शामिल कर लिए गए ताकि इन नए लोगों को ईसाइयत इख्तियार करने में आसानी हो। चुनाँचे ईसाइयत में जो पहली तसलीस शामिल की गई वह यही थी कि "ख़ुदा, ख़ुदा का बेटा यशु और मरियम मुक़द्दस।" तो उन्होंने क़दीम मज़ाहिब की नक्क़ाली में ये तसलीस ईजाद की थी।

قٰتَلَهُمُ اللّٰهُ ۚ اَنّٰى يُؤْفَكُوْنَ ۝٣٠

"अल्लाह इन्हें हलाक करे, ये कहाँ से बिचलाये गए हैं!"

आयत 31

اِتَّخَذُوْۤا اَحْبَارَهُمْ وَرُهْبَانَهُمْ اَرْبَابًا مِّنْ
دُوْنِ اللّٰهِ وَالْمَسِيْحَ ابْنَ مَرْيَمَ ۚ

"इन्होंने अपने अहबार व रहबान को रब बना लिया अल्लाह के सिवा और मसीह इब्ने मरियम को भी।"

ईसाईयों में दूसरी बड़ी गुमराही ये पैदा हुई थी कि उन्होंने अपने उलमा व मशाइख और हज़रत ईसा अलै० को भी अलुहियत में हिस्सेदार बना लिया था। हज़रत ईसा अलै० तो उनके यहाँ बाक़ायदा तीन ख़ुदाओं में से एक थे और इस हैसियत में वह आपकी परस्तिश भी करते थे, मगर अहबार व रहबान को रब मानने की कैफ़ियत ज़रा मुख्तलिफ़ थी। हज़रत अदि बिन हातिम रज़ि. (जिन्होंने ईसाईयत से इस्लाम क़ुबूल किया था) हुज़ूर ﷺ की ख़िदमत में हाज़िर हुए और इस आयत के बारे में वज़ाहत की दरख्वास्त की तो आप ﷺ ने फ़रमाया:

اَمَا اِنَّهُمْ لَمْ يَكُوْنُوْا يَعْبُدُوْنَهُمْ وَلٰكِنَّهُمْ كَانُوْا اِذَا اَحَلُّوْا شَيْءًا اسْتَحَلُّوْهُ وَاِذَا حَرَّمُوْا عَلَيْهِمْ شَيْءًا حَرَّمُوْهُ

"वह उन (अहबार व रहबान) की इबादत तो नहीं करते थे, लेकिन जब वह किसी शय को हलाल क़रार देते तो ये उसे हलाल मान लेते और जब किसी शय को हराम क़रार देते तो उसे हराम मान लेते।"(21)

यानि हलाल व हराम के बारे में क़ानूनसाज़ी का हक़ सिर्फ़ अल्लाह ताअला को हासिल है, और अगर कोई दूसरा इस हक़ को इस्तेमाल करता है तो गोया वह अल्लाह की अलुहियत में हिस्सेदार बन रहा है, और जो कोई अल्लाह के अलावा किसी का यह हक़ तसलीम करता है वह गोया उसे अल्लाह के सिवा अपना रब तस्लीम कर रहा है।

आज भी पॉप को पूरा इख्तियार हासिल है कि वह जो चाहे फ़ैसला करे। जैसा कि उसने एक फ़रमान के ज़रिये से यहूदियों को दो हज़ार साल पुराने इस इल्ज़ाम से बरी कर दिया, कि उन्होंने हज़रत मसीह अलै० को सूली पर चढ़ाया था। गोया उसे तारीख तक को बदल देने का इख्तियार है, इसी तरह वह किसी हराम चीज़ को हलाल और हलाल को हराम क़रार दे सकता है। इस तरह के तसव्वुरात हमारे यहाँ इस्माईलियों में भी पाए जाते हैं। उनका ईमामे हाज़िर मासूम होता है और उसे इख्तियार हासिल है कि वह जिस चीज़ को चाहे हलाल कर दे और जिस चीज़ को चाहे हराम कर दे। इस तरह उन्होंने शरीअत को साक़ित (void) कर दिया है। ताहम ये मामला बिलखुसूस गुजरात (इन्डिया) के इलाक़े में बसने वाले इस्माईलियों का है, जबकी हन्ज़ह में जो इस्माईली आबाद हैं उनके यहाँ शरीअत मौजूद है, क्योंकि ये पुराने इस्माईली हैं जो बाहर से आकर यहाँ आबाद हुए थे। गुज़रात (इन्डिया) के इलाक़े में इस्माईलियों ने जब मक़ामी आबादी में अपने नज़रियात की तबलीग़ शुरू की तो उन्होंने वही किया जो सेंट पॉल ने किया था। उन्होंने शरीअत को साक़ित कर दिया और हिन्दुओं के अक़ीदे के मुताबिक़ अवतार का अक़ीदा अपना लिया। मक़ामी हिन्दू आबादी में अपने नज़रियात की आसान तरवीज़ के लिये उन्होंने हज़रत अली रज़ि. को दसवें अवतार के रूप में पेश किया (हिन्दुओं के यहाँ नौ अवतार का अक़ीदा राइज़ था)। लिहाज़ा "दशतम अवतार" का अक़ीदा मुस्तक़िल तौर पर उनके यहाँ राइज़ हो गया। इसके अलावा उनके हाज़िर ईमाम को मुकम्मल इख्तियार है कि वह शरीअत के जिस हुकुम को चाहे मंसूख कर दे, किसी हलाल चीज़ को हराम कर दे या किसी हराम को हलाल कर दे।

وَمَآ اُمِرُوْٓا اِلَّا لِيَعْبُدُوْٓا اِلٰهًا وَّاحِدًا ۚ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ۭ سُبْحٰنَهٗ عَمَّا يُشْرِكُوْنَ ۝۳۱

"उन्हें नहीं हुकुम दिया गया था मगर इसी बात का कि वह पूजें सिर्फ़ एक इलाह को, नहीं है कोई मअबूद उसके सिवा। वह पाक है उससे जो शिर्क ये लोग कर रहे हैं।"

आयत 32

يُرِيْدُوْنَ اَنْ يُّطْفِـــُٔوْا نُوْرَ اللّٰهِ بِاَفْوَاهِهِمْ

"ये चाहते हैं कि अल्लाह के नूर को बुझा दें अपने मुहँ (की फूंकों) से"

وَيَاْبَى اللّٰهُ اِلَّآ اَنْ يُّتِمَّ نُوْرَهٗ وَلَوْ كَرِهَ الْكٰفِرُوْنَ ۝۳۲

"और अल्लाह को हरगिज़ मंज़ूर नहीं है मगर यह कि वह अपने नूर का इत्माम

फ़रमा कर रहे, चाहे ये काफ़िरों को
कितना ही नागवार गुज़रे।"

इस असलूब में यहूदियों पर एक तरह का तंज़ है कि वह ख़ुफ़िया साज़िशों के ज़रिये से इस दीन को नीचा दिखाने की कोशिश करते हैं और कभी अलल ऐलान मैदान में आकर मुक़ाबला करने की जुर्रात नहीं करते। इस आयत की तर्जुमानी मौलाना ज़फ़र अली खान ने अपने एक शेअर में इस तरह की है:

नूरे ख़ुदा है कुफ़्र की हरकत पे खंदा ज़न
फूंकों से ये चिराग बुझाया ना जायेगा!

आयत 33

هُوَ الَّذِیۡۤ اَرۡسَلَ رَسُوۡلَهٗ بِالۡهُدٰی وَدِیۡنِ الۡحَقِّ لِیُظۡهِرَهٗ عَلَی الدِّیۡنِ کُلِّهٖ ؕ وَلَوۡ کَرِهَ الۡمُشۡرِکُوۡنَ ﴿۳۳﴾

"वही तो है जिसने भेजा है अपने रसूल को अलहुदा और दीने हक़ देकर ताकि ग़ालिब कर दे इसे कुल के कुल दीन (निज़ामे ज़िन्दगी) पर, ख्वाह यह मुशरिकों को कितना ही नागवार गुज़रे।"

यह आयत बहुत वाज़ेह अंदाज़ में मोहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की रिसालत की इम्तियाज़ी या तकमीली शान का मज़हर है। जैसे कि पहले भी ज़िक्र हो चुका है, हुज़ूर ﷺ की रिसालत का बुनियादी मक़सद तो दूसरे अम्बिया व रुसुल की तरह तबशीर, इन्ज़ार, तज़कीर, दावत और तबलीग़ है, जिसका तज़किरा सूरतुन्निसा की आयत नम्बर 165 में बा-अल्फ़ाज़ मौजूद है: {رُسُلًا مُّبَشِّرِیۡنَ وَمُنۡذِرِیۡنَ لِئَلَّا یَکُوۡنَ لِلنَّاسِ عَلَی اللّٰهِ حُجَّةٌۢ بَعۡدَ الرُّسُلِ ۚ} लेकिन इसके अलावा हुज़ूर ﷺ की बेअसत का एक इम्तियाज़ी और ख़ुसूसी मक़सद भी है और वह है तकमीले रिसालत, यानि दीन को बिलफ़अल क़ायम और ग़ालिब करना। इन दो आयात में आप ﷺ की रिसालत की इसी तकमीली शान का ज़िक्र है। आयत का यह जोड़ा बिल्कुल इसी तरतीब से सूरतुस्सफ़ (आयत 8 और 9) में भी आया है। इनमें से पहली आयत सूरतुस्सफ़ में थोड़े से फ़र्क़ के साथ आयी है: {یُرِیۡدُوۡنَ لِیُطۡفِـُٔوۡا نُوۡرَ اللّٰهِ بِاَفۡوَاهِهِمۡ وَاللّٰهُ مُتِمُّ نُوۡرِهٖ وَلَوۡ کَرِهَ الۡکٰفِرُوۡنَ} जबकि दूसरी आयत ज्यों कि त्यों है, उसमें और सूरतुत्तौबा की इस आयत में बिल्कुल कोई फ़र्क़ नहीं है। मैंने इस आयत पर चौबीस सफ़हात पर मुश्तमिल एक मक़ाला लिखा था जो "नबी अकरम ﷺ का मक़सदे बेअसत" के उन्वान से शाया होता है। इस किताब में यह साबित किया गया है कि हुज़ूर ﷺ की बेअसत के ख़ुसूसी या इम्तियाज़ी मक़सद की कुल्ली अंदाज़ में तकमील यानि दुनिया में दीन को क़ायम और ग़ालिब करने की जद्दो-जहद हम सब पर हुज़ूर ﷺ के उम्मती होने की हैसियत से फ़र्ज़ है। अगरचे बहुत से लोगों ने इस फ़र्ज़ से जान छुड़ाने के लिये भी दलाइल दिए हैं कि दीन को हम इंसानों ने नहीं बल्कि अल्लाह ने ग़ालिब करना है, लेकिन इस किताब के मुताअले से आप पर वाज़ेह होगा कि इस फ़र्ज़ से फ़रार का कोई रास्ता नहीं है।

आयत 34

یٰۤاَیُّهَا الَّذِیۡنَ اٰمَنُوۡۤا اِنَّ کَثِیۡرًا مِّنَ الۡاَحۡبَارِ وَالرُّهۡبَانِ لَیَاۡکُلُوۡنَ اَمۡوَالَ النَّاسِ بِالۡبَاطِلِ

"ऐ अहले ईमान, यक़ीनन बहुत से उलमा और दरवेश हड़प करते हैं लोगों के माल बातिल तरीक़े से"

मुख्तलिफ़ मुसलमान उम्मतों में मज़हबी पेशवाओं के लिये मुख्तलिफ़ नाम और अलक़ाब राइज रहे हैं। बनी इसराइल के यहाँ उन्हें अहबार और रहबान कहा जाता था। आयत ज़ेरे नज़र के मुताबिक़ इस तबक़े में अक्सरियत ऐसे लोगों की रही है जो बातिल और नाज़ायज़ ज़राए से माल व दौलत जमा करने और जायदाद बनाने के मकरूह धंधे में मुलव्विस रहे हैं। एक आम दुनियादार आदमी ज़ायज़ तरीक़े से माल व दौलत कमाता है या जायदाद बनाता है तो इसमें कोई क़बाहत नहीं। मगर एक ऐसा शख्स

जो दीन की ख़िदमत में मसरुफ़ है और इसी हक़ीक़त से जाना पहचाना जाता है, अगर वह भी माल व दौलत जमा करने और जायदाद बनाने में मशगूल हो जाए, और मज़ीद यह कि दीन को इस्तेमाल करते हुए और अपनी दीनी हैसियत को नीलाम करते हुए लोगों के माल हड़प करने लगे और माल व दौलत जमा करने ही को अपना मक़सदे ज़िन्दगी बना ले, तो ऐसा इंसान आसमान की छत के नीचे बदतरीन इंसान होगा। अपनी उम्मत के उलमा के बारे में हुज़ूर ﷺ की एक बहुत इबरत अंगेज़ हदीस है:

عَنْ عَلِيٍّ قَالَ قَالَ رَسُوْلُ اللهِ (صلى الله عليه وآله وسلم) : (يُوْشِكُ اَنْ يَأْتِيَ عَلَى النَّاسِ زَمَانٌ لَا يَبْقٰى مِنَ الْاِسْلَامِ الاَّ اسْمُهٗ ، وَلَا يَبْقٰى مِنَ الْقُرْاٰنِ الاَّ رَسْمُهٗ ، مَسَاجِدُهُمْ عَامِرَةٌ وَهِيَ خَرَابٌ مِنَ الْهُدٰى ، عُلَمَاؤُهُمْ شَرُّ مَنْ تَحْتَ اَدِيْمِ السَّمَاءِ ، مِنْ عِنْدِهِمْ تَخْرُجُ الْفِتْنَةُ وَفِيْهِمْ تَعُوْدُ

हज़रत अली रज़ि. रिवायत करते हैं कि रसूल अल्लाह ﷺ ने फ़रमाया: "मुझे अंदेशा है कि लोगों पर एक वक़्त ऐसा आयेगा जब इस्लाम में से इसके नाम के सिवा कुछ नहीं बचेगा और क़ुरान में से इसके रस्मुल ख़त के सिवा कुछ बाक़ी नहीं रहेगा। उनकी मस्जिदे बहुत आबाद (और शानदार) होंगी मगर वह हिदायत से खाली होंगी। उनके उलमा आसमान की छत के नीचे बदतरीन मख्लूक़ होंगे, फ़ितना उन्हीं में से बरामद होगा और उन्हीं में लौट जायेगा।"(22)

وَيَصُدُّوْنَ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ؕ

"और रोकते हैं लोगों को अल्लाह के रास्ते से।"

जब कोई दीनी तहरीक उठती है, कोई अल्लाह का मुख्लिस बंदा लोगों को दीन की तरफ़ बुलाता है, तो इन मज़हबी पेशवाओं को अपनी मसनदें ख़तरे में नज़र आती हैं। वह नहीं चाहते कि उनके अक़ीदतमंद उन्हें छोड़ कर किसी दूसरी दावत की तरफ़ मुतवज्जह हों, क्योंकि उन्हीं अक़ीदतमंदों के नज़रानों ही से तो उनके दौलत के अंबारों में इज़ाफ़ा हो रहा होता है और उनकी जायदादें बन रही होती हैं। वह आख़िर क्योंकर चाहेंगे कि उनके नाम लेवा किसी दूसरी दावत पर लब्बैक कहें।

وَالَّذِيْنَ يَكْنِزُوْنَ الذَّهَبَ وَالْفِضَّةَ وَلَا يُنْفِقُوْنَهَا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ۙ فَبَشِّرْهُمْ بِعَذَابٍ اَلِيْمٍ ۙ﴿۳۴﴾

"और वह लोग जो जमा करते हैं अपने पास सोना और चांदी और ख़र्च नहीं करते उसको अल्लाह की राह में, तो उनको बशारत दे दीजिये दर्दनाक अज़ाब की।"

इस आयत के हवाले से अबुज़र गफ्फ़ारी रज़ि. की ज़ाती राय यह थी कि सोना और चाँदी अपने पास रखना मुतल्लक़न हराम है। मगर दूसरे सहाबा किराम रज़ि., हज़रत अबुज़र गफ्फ़ारी की इस राय से मुत्तफ़िक़ नहीं थे। चुनाँचे दीन का आम क़ानून इस सिलसिले में यही है कि अगर किसी ने कोई माल जायज़ तरीक़े से कमाया हो और वह उसमें से ज़कात भी अदा करता हो तो इस माल को वह अपने पास रख सकता है, चाहे इसकी मिक़दार कितनी ही ज़्यादा हो और चाहे वह सोने या चांदी ही की शक्ल में हो। ऐसा माल एक शख्स की मौत के बाद उसके वुरसाअ (वारिसों) को जायज़ माल के तौर पर क़ानूने विरासत के मुताबिक़ मुन्तक़िल भी होगा। चुनाँचे अल्लाह ताअला का नाज़िल करदा क़ानूने विरासत खुद इस बात पर दलील है कि माल व दौलत को अपनी मिल्कियत में रखना नाजायज़ नहीं है, क्योंकि अगर माल जमा नहीं होगा तो विरासत किस चीज़ की होगी और क़ानूने विरासत का अमलन क्या मक़सद रह जाएगा? इस लिहाज़ से क़ुरान के वह अहकाम रूहानी और अख्लाक़ी तालीम के ज़ुमरे में आते हैं जिनमें बार-बार माल खर्च करने की तरगीब दी गई है और इस सिलसिले में (قُلِ الْعَفْوَ) (अल बक़रह 219) के अल्फ़ाज़ भी मौजूद हैं। यानि जो भी ज़ायद अज़ ज़रूरत हो उसे अल्लाह की राह में खर्च कर दिया जाए। चुनाँचे हज़रत उस्मान रज़ि. के दौरे खिलाफ़त में हज़रत अबुज़र गफ्फारी रज़ि. की मुखालफ़त के बावजूद क़ानूनी नुक़ता-ए-नज़र से यही फ़ैसला हुआ था कि सोना-चाँदी अपने पास रखना मुतलक़न हराम नहीं है, मगर हज़रत अबुज़र गफ्फारी रज़ि. अपनी राय में किसी क़िस्म की लचक पैदा करने पर आमादा ना हुए। चूँकि आपके इख्तलाफ़ की शिद्दत के बाइस मदीना के माहौल में एक इज़तराबी कैफ़ियत पैदा हो रही थी, इसलिये

हज़रत उस्मान रज़ि. ने आप को हुकुम दिया कि वह मदीने से बाहर चले जाएँ। इस पर आप रज़ि. मदीने से निकल गए और सहरा में एक झोपड़ी बना कर उसमें रहने लगे।

मेरे नज़दीक इस आयत का हुक्म अहबार और रहबान यानि मज़हबी पेशवाओं के साथ मखसूस है। इसमें वह सब लोग शामिल हैं जिन्होंने अपना वक़्त और अपनी सलाहियतें दीन की ख़िदमत के लिये वक़्फ़ कर रखी हैं और उनका अपना कोई ज़रिया-ए-आमदनी नहीं है। ऐसे मज़हबी पेशवाओं को लोग हदिये देते हैं और उनकी माली मआवनत करते हैं ताकि वह अपनी ज़रूरियाते ज़िन्दगी को पूरा कर सकें। जैसे हुज़ूर ﷺ खुद बैतुलमाल से अपनी ज़रूरियात पूरी करते थे, अज़वाजे मुताहरात रज़ि. को नान नफक़ा भी देते थे और अपने अज़ीज़ व अक़ारब के साथ हुस्ने सुलूक भी करते थे, मगर बैतुलमाल से कुछ मयस्सर ना होने की सूरत में फ़ाक़े भी करते थे। इसी तरह खुलफ़ा-ए-राशिदीन रज़ि. की मिसाल भी है। चुनाँचे ऐसे मज़हबी पेशवाओं पर भी लाज़िम है कि वह दूसरों के हदिये और वताइफ़ (तोहफें) सिर्फ़ मारूफ़ अंदाज़ में अपनी और अपने ज़ेरे किफ़ालत अफ़राद की ज़रूरियाते ज़िंदगी पूरी करने के लिये इस्तेमाल में लाएँ। लेकिन अगर ये लोग अपनी मज़कूरह हैसियत से फ़ायदा उठाते हुए दौलत इकठ्ठी करना और जायदादें बनाना शुरू कर दें, और फ़िर ये जायदादें क़ानूने विरासत के तहत उनके वुरसाअ को मुन्तक़िल हों तो ऐसी सूरत में इन लोगों पर इस आयत के अहकाम का हरफ़ ब हरफ़ इन्तबाक़ होगा। चुनाँचे आज भी अगर आप उलमा-ए-हक़ और उलमा-ए-सू के बारे में मालूम करना चाहें तो मेरे नज़दीक ये आयत इसके लिये एक तरह का लिटमस टेस्ट (litmus test) है। अगर कोई मज़हबी पेशवा या आलिम अपने दीनी कैरियर के नतीजे में जायदाद बना कर और अपने पीछे दौलत छोड़ कर मरा हो तो वह बिला शक व शुबह उलमा-ए-सू में से है।

आयत 35

يَّوْمَ يُحْمٰى عَلَيْهَا فِيْ نَارِ جَهَنَّمَ فَتُكْوٰى بِهَا جِبَاهُهُمْ وَجُنُوْبُهُمْ وَظُهُوْرُهُمْ ؕ

"जिस दिन इन (सोने और चांदी) को तपाया जाएगा जहन्नम की आग में और फ़िर दागा जाएगा इनसे इनकी पेशानियों, इनके पहलुओं और इनकी पीठों को।""

هٰذَا مَا كَنَزْتُمْ لِاَنْفُسِكُمْ فَذُوْقُوْا مَا كُنْتُمْ تَكْنِزُوْنَ ۝٣٥

"(और साथ कहा जाएगा) ये है जो तुमने अपने लिए इकठ्ठा किया था, तो अब चखो मज़ा इसका जो कुछ तुम जमा करते थे।"

आयात 36, 37

اِنَّ عِدَّةَ الشُّهُوْرِ عِنْدَ اللّٰهِ اثْنَا عَشَرَ شَهْرًا فِيْ كِتٰبِ اللّٰهِ يَوْمَ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ مِنْهَآ اَرْبَعَةٌ حُرُمٌ ؕ ذٰلِكَ الدِّيْنُ الْقَيِّمُ ۙ فَلَا تَظْلِمُوْا فِيْهِنَّ اَنْفُسَكُمْ وَقَاتِلُوا الْمُشْرِكِيْنَ كَآفَّةً كَمَا يُقَاتِلُوْنَكُمْ كَآفَّةً ؕ وَاعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ مَعَ الْمُتَّقِيْنَ ۝٣٦
اِنَّمَا النَّسِيْٓءُ زِيَادَةٌ فِي الْكُفْرِ يُضَلُّ بِهِ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا يُحِلُّوْنَهٗ عَامًا وَّيُحَرِّمُوْنَهٗ عَامًا لِّيُوَاطِـُٔوْا عِدَّةَ مَا حَرَّمَ اللّٰهُ فَيُحِلُّوْا مَا حَرَّمَ اللّٰهُ ؕ زُيِّنَ لَهُمْ سُوْٓءُ اَعْمَالِهِمْ ؕ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْكٰفِرِيْنَ ۝٣٧

आयत 36

“बेशक अल्लाह के यहाँ महीनों की तादाद बारह है, अल्लाह के क़ानून में, जिस दिन से उसने पैदा किया आसमानों और ज़मीन को”

اِنَّ عِدَّةَ الشُّهُوْرِ عِنْدَ اللّٰهِ اثْنَا عَشَرَ شَهْرًا فِيْ كِتٰبِ اللّٰهِ يَوْمَ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ

अल्लाह के क़ायम करदा तकवीनी निज़ाम और तशरीई क़ानून के तहत महीनों की तादाद बारह मुक़र्रर की गई है।

“इनमें से चार महीने मोहतरम हैं।”

مِنْهَآ اَرْبَعَةٌ حُرُمٌ

इन चार महीनों (ज़िलक़अद, ज़िलहिज्जा, मोहर्रम और रजब) को “अशहरे हुरुम” कहते हैं और इनमें जंग वगैरह जायज़ नहीं।

“यही है सीधा दीन, तो इनके मामले में अपने ऊपर ज़ुल्म ना करो”

ذٰلِكَ الدِّيْنُ الْقَيِّمُ فَلَا تَظْلِمُوْا فِيْهِنَّ اَنْفُسَكُمْ

क़ानूने खुदावन्दी के मुताबिक़ ये चार महीने शुरू से मोहतरम हैं, लिहाज़ा तुम लोग इन महीनों के बारे में अपने ऊपर ज़ुल्म ना करो। इसमें क़ुरैश के उस रिवाज की तरफ़ इशारा है जिसके तहत वह मोहतरम महीनों को अपनी मरज़ी से बदलते रहते थे। किसी मुहिम या लड़ाई के दौरान में अगर कोई माहे हराम आ जाता तो उस महीने के अहतराम में जंग व जिदाल बंद करने के बजाय वह ऐलान कर देते कि इस साल इस महीने के बजाय फ़लां महीना माहे हराम के तौर पर मनाया जाएगा। इस तरह उन्होंने पूरा कैलेन्डर गडमड कर रखा था। लेकिन महीनों के अदल-बदल और उलट-फेर से गुज़रते हुए क़ुदरते खुदावन्दी से 10 हिजरी में कैलेन्डर वापस अपनी असली हालत पर पहुँच गया था। इसलिये रसूल अल्लाह ﷺ ने अपने खुतबा-ए-हज्जतुल विदा में फ़रमाया था: ((اِنَّ الزَّمَانَ قَدِ اسْتَدَارَ كَهَيْئَتِهٖ يَوْمَ خَلَقَ اللّٰهُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ))[23] यानि ज़माने की ये तक़वीम (कैलेन्डर) पूरा चक्कर लगा कर सारी गलतियों और तरामीम में से गुज़रते हुए अब ठीक उसी जगह पर पहुँच गई है जिस पर अल्लाह ने आसमानों और ज़मीन को पैदा किया था।

“और मुशरिकिन से सब मिल कर जंग करो जैसे वह सब इकट्ठे होकर तुमसे जंग करते हैं, और जान लो कि अल्लाह परहेज़गारों के साथ है।”

وَقَاتِلُوا الْمُشْرِكِيْنَ كَاۗفَّةً كَمَا يُقَاتِلُوْنَكُمْ كَاۗفَّةً ۭ وَاعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ مَعَ الْمُتَّقِيْنَ ۝۳۶

आयत 37

“ये महीनों को हटा कर आगे-पीछे कर लेना तो कुफ़्र में एक इज़ाफ़ा है, जिसके ज़रिये से गुमराही में मुबतला किये जाते हैं वह लोग जिन्होंने कुफ़्र किया”

اِنَّمَا النَّسِيْۗءُ زِيَادَةٌ فِي الْكُفْرِ يُضَلُّ بِهِ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا

यानि अमन के महीनों को अपनी जगह से हटा कर आगे-पीछे कर देना कुफ़्र में मज़ीद एक काफ़िराना हरकत है।

“एक साल हलाल कर लेते हैं इस (महीने) को और एक साल उसे हराम क़रार देते हैं, ताकि तादाद पूरी कर लें उसकी जो अल्लाह ने हराम ठहराए हैं”

يُحِلُّوْنَهٗ عَامًا وَّيُحَرِّمُوْنَهٗ عَامًا لِّيُوَاطِـُٔـوْا عِدَّةَ مَا حَرَّمَ اللّٰهُ

“और (इस तरह) हलाल कर लेते हैं वह (महीना) जो अल्लाह ने हराम किया है।”

فَيُحِلُّوْا مَا حَرَّمَ اللّٰهُ

यानि इस तरह उलट-फेर करके वह इन महीनों को हलाल कर लेते जो असल में अल्लाह ने हराम ठहराए हैं। मुशरिकीने अरब भी बारह महीनों में से चार महीनों को मोहतरम मानते थे मगर अपनी मरज़ी से इन महीनों को आगे-पीछे करते रहते और साल के आख़िर तक इनकी तादाद पूरी कर देते।

زُيِّنَ لَهُمْ سُوْٓءُ اَعْمَالِهِمْ ۭ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْكٰفِرِيْنَ ۝۳۷

"(इसी तरह) इनके लिये मुज़य्यन कर दिये गए उनके बुरे आमाल। और अल्लाह काफ़िरों को हिदायत नहीं देता।"

यहाँ वह पाँच रुकूअ ख़त्म हुए जिनका ताल्लुक़ नबी अकरम ﷺ की बेअसते ख़ुसूसी से है। इन आयात में इस सिलसिले में तकमीली और आख़री अहकाम दे दिए गए हैं। अब छठे रुकूअ से गज़वा-ए-तबूक के मौज़ू का आग़ाज़ हो रहा है। इसके पसमंज़र के ज़िमन में चंद बातें फिर से ज़हन में ताज़ा कर लें।

सन 6 हिजरी में सुलह हुदैबिया के फ़ौरन बाद रसूल अल्लाह ﷺ ने अरब से बाहर मुख्तलिफ़ फ़रमाँरवाओं की तरफ़ अपने ख़तूत और ऐलची भेजने शुरू किए। इस सिलसिले में आप ﷺ का नामा-ए-मुबारक बसरा (शाम) के रईस शरहबील बिन अम्र की तरफ़ भी भेजा गया। यह शख्स रोमन एम्पायर का बाज़गुज़ार था। इसके पास हुज़ूर ﷺ का नामा-ए-मुबारक हज़रत हारिस बिन उमैर अज़दी रज़ि. लेकर गए थे। शरहबील ने तमाम अखलाक़ी व सिफ़ारती आदाब को बालाए ताक़ रखते हुए हज़रत हारिस रज़ि. को शहीद करा दिया। लिहाज़ा सफ़ीर के क़त्ल को ऐलाने जंग समझते हुए हुज़ूर ﷺ ने तीन हज़ार साहबा रज़ि. पर मुश्तमिल एक लश्कर तैयार करके हज़रत ज़ैद बिन हारसा रज़ि. की ज़ेरे क़यादत शाम की तरफ़ भेजा। जब ये लश्कर मौता पहुँचा तो इन्होंने एक लाख़ रोमियों का लश्कर अपने ख़िलाफ़ सफ़ आरा पाया। मुखालिफ़ लश्कर की तादाद का अंदाज़ा करने के बाद मुसलमानों में मुक़ाबला करने या ना करने के बारे में मशवरा हुआ। चुनाँचे शौक़े शहादत में इन्होंने मुक़ाबला करने का फ़ैसला किया।

शहादत है मतलूब व मक़सूदे मोमीन,
ना माले ग़नीमत ना किशवर कशाई! (इक़बाल)

जमादुलऊला 8 हिजरी को इन दोनों लश्करों के दरमियान मौता के मुक़ाम पर जंग हुई। मुसलमान लश्कर के लिये रसूल अल्लाह ﷺ ने हज़रत ज़ैद बिन हारसा रज़ि. के अलावा ख़ुसूसी तौर पर दो मज़ीद कमान्डर भी मुक़र्रर फ़रमाए थे। आप ﷺ ने फ़रमाया था कि अगर ज़ैद रज़ि. शहीद हो जाएँ तो ज़ाफर बिन अबी तालिब रज़ि. (ज़ाफर तयार रज़ि) कमान संभालेंगे, और अगर वह भी शहीद हो जाएँ तो अब्दुल्लाह बिन रवाह अंसारी रज़ि. लश्कर के अमीर होंगे। चुनाँचे आप ﷺ के मुक़र्रर करदा तीनों कमान्डर इसी तरतीब से एक के बाद दीगर शहीद हो गए। हज़रत अब्दुल्लाह बिन रवाह रज़ि. की शहादत के बाद हज़रत खालिद बिन वलीद रज़ि. ने अज़ खुद लश्कर की कमान संभाली, और कामयाब हिकमते अम्ली के तहत अपने लश्कर को रोमियों के नरगे से निकालने में कामयाब हो गए।

जंगे मौता से पैदा होने वाली सूरतेहाल में हुज़ूर ﷺ ने ऐलाने आम फ़रमाया कि रोमियों के मुक़ाबले के लिये तमाम मुम्किना वसाइल बरवेकार लाते हुए एक बड़ा लश्कर तबूक के लिये रवाना किया जाए। इस मरतबा आप ﷺ ने ख़ुद लश्कर के साथ जाने का फ़ैसला फ़रमाया। तबूक मदीने से शिमाल की जानिब तक़रीबन साड़े तीन सौ मील की मुसाफ़त पर हिजाज़ का आखरी शहर है। ये वह इलाक़ा था जहाँ से आगे उस ज़माने में रोमन एम्पायर की सरहद शुरू होती थी। गज़वा-ए-तबूक में शिरकत के लिये आप ﷺ ने ऐलाने आम फ़रमाया था। यानि जंग के क़ाबिल हर साहिबे ईमान शख्स के लिये फ़र्ज़ था कि वह इस मुहिम में शरीक हो। यह अहले ईमान के लिए सख्त इम्तिहान और आज़माइश का वक़्त था। क़हत का ज़माना, शदीद गरमी का मौसम, तवील सहराई सफ़र, वक़्त की सुपर पावर से मुक़ाबला और सब पर मुसतज़ाद यह कि फ़सल संभालने का मौसम सर पर खड़ा था। गोया एक से बढ कर एक मसला था और एक से बढ कर एक इम्तिहान! मदीने के बेशतर लोगों की साल भर की मईशत का

दारोमदार ख़जूर की फ़सल पर था, जो उस वक़्त पक कर तैयार खड़ी थी। मुहिम पर निकलने का मतलब यह था कि पकी हुई खजूरों को दरख्तों पर ही छोड़ कर जाना होगा। औरतें चूँकि खजूरों को दरख्तों से उतारने का मुश्किल काम नहीं कर सकती थीं, इसलिये पकी पकाई फ़सल ज़ाया जाती साफ़ नज़र आ रही थी।

दूसरी तरफ़ इस मुहिम का ऐलान मुनाफ़िक़ीन पर बहुत भारी साबित हुआ और उनकी सारी खबासतें इसकी वजह से तशत अज़बाम हो गईं। चुनाँचे आईन्दा ग्यारह रुकुओं की आयात अपने अन्दर इस सिलसिले के छोटे-बड़े बहुत से मौज़ुआत समेटे हुए हैं, मगर दूसरे मज़ामीन के दरमियान में एक मज़मून जो मुसलसल चल रहा है वह मुनाफ़िक़ीन का तज़किरा है। गोया यह मज़मून एक धागा है जिसमें दूसरे मज़ामीन मोतियों की तरह पिरोए हुए हैं। अगरचे इससे पहले सूरतुन्निसा में मुनाफ़िक़ीन का ज़िक्र बड़ी तफ़सील से आ चुका है, लेकिन आईन्दा ग्यारह रुकुअ इस मौज़ू पर क़ुरान के ज़रवा-ए-सनाम का दर्जा रखते हैं।

बरहाल रसूल अल्लाह ﷺ तीस हज़ार का लश्कर लेकर तबूक तशरीफ़ ले गए। मुक़ाबले में अगरचे हरक़ुल (क़ैसरे रोम) ब-नफ्से नफ़ीस मौजूद था, लेकिन शायद वह पहचान चुका था कि आप ﷺ अल्लाह के रसूल हैं, चुनाँचे वह मुक़ाबले में आने की जुर्रात ना कर सका। हुज़ूर ﷺ ने कुछ अरसा तबूक में क़याम फ़रमाया। इस दौरान में इर्द-गिर्द के बहुत से क़बाइल ने आकर आप ﷺ से मुआहिदे किए। इस मुहिम में अगरचे जंग की नौबत ना आई मगर मुसलमान लश्कर का मदीने से तबूक जाकर रोमन एम्पायर की सरहदों पर दस्तक देना और हरक़ुल का मुक़ाबल करने की बजाए कन्नी कतरा जाना, कोई मामूली वाक़िया नहीं था। चुनाँचे ना सिर्फ़ उस इलाक़े में मुसलमानों की धाक बैठ गई बल्कि इस्लामी रियासत की सरहदें अम्ली तौर पर तबूक तक वसीअ हो गईं। दूसरी तरफ़ जंगे मौता की वजह से मुसलमानों की साख को जो नुक़सान पहुँचा था उसकी भरपूर अंदाज़ में तलाफ़ी हो गई। सलतनते रोम के साथ छेड़छाड़ का यह सिलसिला जो गज़वा-ए-तबूक की सूरत में शुरू हुआ, इसमें मज़ीद पेशरफ्त दौरे सिद्दीक़ी रज़ि. में हुई। हुज़ूर ﷺ के विसाल के फ़ौरन बाद मदीने से लश्करे ओसामा रज़ि. की रवानगी भी इस सिलसिले की अहम कड़ी थी।

आयात 38 से 42 तक

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مَا لَكُمْ اِذَا قِيْلَ لَكُمُ انْفِرُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ اثَّاقَلْتُمْ اِلَى
الْاَرْضِ ؕ اَرَضِيْتُمْ بِالْحَيٰوةِ الدُّنْيَا مِنَ الْاٰخِرَةِ ۚ فَمَا مَتَاعُ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا فِي
الْاٰخِرَةِ اِلَّا قَلِيْلٌ ﴿٣٨﴾ اِلَّا تَنْفِرُوْا يُعَذِّبْكُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا ۙ وَّيَسْتَبْدِلْ قَوْمًا غَيْرَكُمْ
وَلَا تَضُرُّوْهُ شَيْـًٔا ؕ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ﴿٣٩﴾ اِلَّا تَنْصُرُوْهُ فَقَدْ نَصَرَهُ اللّٰهُ اِذْ
اَخْرَجَهُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا ثَانِيَ اثْنَيْنِ اِذْ هُمَا فِي الْغَارِ اِذْ يَقُوْلُ لِصَاحِبِهٖ لَا تَحْزَنْ اِنَّ
اللّٰهَ مَعَنَا ۚ فَاَنْزَلَ اللّٰهُ سَكِيْنَتَهٗ عَلَيْهِ وَاَيَّدَهٗ بِجُنُوْدٍ لَّمْ تَرَوْهَا وَجَعَلَ كَلِمَةَ
الَّذِيْنَ كَفَرُوا السُّفْلٰى ؕ وَكَلِمَةُ اللّٰهِ هِيَ الْعُلْيَا ؕ وَاللّٰهُ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ﴿٤٠﴾ اِنْفِرُوْا خِفَافًا
وَّثِقَالًا وَّجَاهِدُوْا بِاَمْوَالِكُمْ وَاَنْفُسِكُمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ؕ ذٰلِكُمْ خَيْرٌ لَّكُمْ اِنْ كُنْتُمْ
تَعْلَمُوْنَ ﴿٤١﴾ لَوْ كَانَ عَرَضًا قَرِيْبًا وَّسَفَرًا قَاصِدًا لَّاتَّبَعُوْكَ وَلٰكِنْۢ بَعُدَتْ
عَلَيْهِمُ الشُّقَّةُ ؕ وَسَيَحْلِفُوْنَ بِاللّٰهِ لَوِ اسْتَطَعْنَا لَخَرَجْنَا مَعَكُمْ ۚ يُهْلِكُوْنَ
اَنْفُسَهُمْ ۚ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ اِنَّهُمْ لَكٰذِبُوْنَ ﴿٤٢﴾

आयत 38

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مَا لَكُمْ اِذَا قِيْلَ لَكُمُ
انْفِرُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ اثَّاقَلْتُمْ اِلَى
الْاَرْضِ ؕ

"ऐ ईमान के दावेदारों! तुम्हें क्या हो गया है कि जब तुमसे कहा जाता है कि निकलो अल्लाह की राह में तो तुम धँसे जाते हो ज़मीन की तरफ़।"

अगरचे यह वज़ाहत सूरतुन्निसा में भी हो चुकी है मगर इस नुक्ते को दोबारा ज़हननशीन कर लें कि क़ुरान करीम में मुनाफ़िक़ीन से ख़िताब " يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا" के सीगे में ही होता है, क्योंकि ईमान का दावा तो वह भी करते थे और क़ानूनी और ज़ाहिरी तौर पर वह भी मुस्लमान थे।

اَرَضِيْتُمْ بِالْحَيٰوةِ الدُّنْيَا مِنَ الْاٰخِرَةِ ۚ

"(सोचो!) क्या तुमने आख़िअत के बजाए दुनिया की ज़िंदगी को क़ुबूल कर लिया है?"

यह भी एक मुतजस्साना सवाल (searching question) है। यानि तुम दावेदार तो हो ईमान बिलआख़िरत के, लेकिन अगर तुम अल्लाह की राह में जंग के लिये निकलने को तैयार नहीं हो तो इसका मतलब यह है कि तुम आख़िरत हाथ से देकर दुनिया के ख़रीदार बनने जा रहे हो। तुम आख़िरत की नेअमतों को छोड़ कर दुनिया की ज़िंदगी पर ख़ुश हो बैठे हो।

فَمَا مَتَاعُ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا فِى الْاٰخِرَةِ اِلَّا قَلِيْلٌ ۝٣٨

"तो (जान लो कि) दुनिया की ज़िंदगी का साज़ो सामान आख़िरत के मुक़ाबले में बहुत क़लील है।"

आयत 39

اِلَّا تَنْفِرُوْا يُعَذِّبْكُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا ۙ وَّيَسْتَبْدِلْ قَوْمًا غَيْرَكُمْ وَلَا تَضُرُّوْهُ شَيْـًٔا ۗ

"अगर तुम नहीं निकलोगे (अल्लाह की राह में तो) वह तुम्हें अज़ाब देगा दर्दनाक अज़ाब और तुम्हें हटा कर किसी और क़ौम को ले आएगा, और तुम उसका कुछ भी नुक़सान नहीं कर सकोगे।"

अल्लाह को तो अपने दीन का झंडा उठवाना है, अगर तुम नहीं उठाओगे तो तुम्हें हटा कर इस मक़सद के लिये किसी और क़ौम को आगे ले आएगा।

وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَىْءٍ قَدِيْرٌ ۝٣٩

"और अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर है।"

आयत 40

اِلَّا تَنْصُرُوْهُ فَقَدْ نَصَرَهُ اللّٰهُ

"अगर तुम इन (रसूल ﷺ) की मदद नहीं करोगे तो (कुछ परवाह नहीं) अल्लाह ने तो उस वक़्त उनकी मदद की थी"

اِذْ اَخْرَجَهُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا ثَانِىَ اثْنَيْنِ اِذْ هُمَا فِى الْغَارِ

"जब काफ़िरों ने उनको (मक्का से) निकाल दिया था (इस हाल में कि) आप ﷺ दो में से दूसरे थे, जबकि वह दोनों ग़ार में थे"

यानि वह सिर्फ़ दो अश्खास थे, मोहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ ख़ुद और अबुबकर सिद्दीक़ रज़ि.।

اِذْ يَقُوْلُ لِصَاحِبِهٖ لَا تَحْزَنْ اِنَّ اللّٰهَ مَعَنَا ۚ

"जबकि वह अपने साथी से कह रहे थे कि गम ना करो, अल्लाह हमारे साथ है।"

जब हज़रत अबुबकर रज़ि. ने कहा था कि हुज़ूर ये लोग तो ग़ार के दहाने तक पहुँच गए हैं, अगर किसी ने ज़रा भी नीचे झाँक कर देख लिया तो हम नज़र आ जाएँगे, तो हुज़ूर ﷺ ने फ़रमाया था कि गम और फ़िक्र मत करें, अल्लाह हमारे साथ है।

فَاَنْزَلَ اللّٰهُ سَكِيْنَتَهٗ عَلَيْهِ وَاَيَّدَهٗ بِجُنُوْدٍ لَّمْ تَرَوْهَا

"तो अल्लाह ने अपनी सकीनत नाज़िल फ़रमाई उन पर और उनकी मदद फ़रमाई उन लश्करों से जिन्हें तुम नहीं देखते"

وَجَعَلَ كَلِمَةَ الَّذِيْنَ كَفَرُوا السُّفْلٰى ؕ

"और काफ़िरों की बात को पस्त कर दिया।"

इस वाक़िये का नतीजा ये निकला कि बिलआख़िर काफ़िर ज़ेर हो गए और पूरे ज़ज़ीरा नुमाए अरब के अन्दर अल्लाह का दीन ग़ालिब हो गया।

وَكَلِمَةُ اللّٰهِ هِيَ الْعُلْيَا ؕ وَاللّٰهُ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ۝۴۰

"और अल्लाह ही का कलिमा सबसे ऊँचा है, और अल्लाह ज़बरदस्त है, हिकमत वाला है।"

आयत 41

اِنْفِرُوْا خِفَافًا وَّثِقَالًا

"निकलो ख्वाह हल्के हो या बोझल"

ये जो हल्के और बोझल के अल्फ़ाज़ इस्तेमाल हुए हैं इससे इन लोगों की कैफ़ियत मुराद है, और इस कैफ़ियत के दो पहलु हो सकते हैं। एक पहलु तो दाख़ली है, यानि बोझल दिल के साथ निकलो या आमादगी के साथ, अब निकलना तो पड़ेगा, क्योंकि अब बात सिर्फ़ तहरीज़ व तरगीब तक नहीं रही, बल्कि जिहाद के लिये नफ़ीरे आम हो चुकी है, लिहाज़ा अब अल्लाह के रस्ते में निकलना फ़र्ज़े ऐयन हो चुका है। इसका दूसरा पहलु खारज़ी है और इस पहलु से मफ़हूम ये होगा कि चाहे तुम्हारे पास साज़ो सामान और अस्लाह वगैरह काफ़ी है तब भी निकलो और अगर साज़ो सामान कम है तब भी।

وَّجَاهِدُوْا بِاَمْوَالِكُمْ وَاَنْفُسِكُمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ؕ ذٰلِكُمْ خَيْرٌ لَّكُمْ اِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ ۝۴۱

"और जिहाद करो अल्लाह की राह में अपने अमवाल से और अपनी जानों से। यही तुम्हारे लिये बेहतर है अगर तुम इल्म रखते हो।"

आयत 42

لَوْ كَانَ عَرَضًا قَرِيْبًا وَّسَفَرًا قَاصِدًا لَّاتَّبَعُوْكَ وَلٰكِنْۢ بَعُدَتْ عَلَيْهِمُ الشُّقَّةُ

"अगर माले ग़नीमत क़रीब होता और सफ़र भी छोटा होता तो (ऐ नबी ﷺ) ये आपकी पैरवी करते, लेकिन इनको तो बड़ी भारी पड़ रही है दूर की मुसाफ़त।"

अगर इन मुनाफ़िक़ीन को तवक्को होती कि माले ग़नीमत आसानी से मिल जाएगा और हदफ़ भी कहीं क़रीब होता तो ये लोग़ ज़रूर आप का साथ देते, मगर अब तो हालत ये है कि तबूक की मुसाफ़त का सुन कर इनके दिल बैठे जा रहे हैं।

रसूल अल्लाह ﷺ की आदते मुबारका थी कि आप किसी भी मुहिम के हदफ़ वगैरह को हमेशा सीगा राज़ में रखते थे। जंग या मुहिम के लिये निकलना होता तो तैयारी का हुक्म दे दिया जाता, मगर यह ना बताया जाता कि कहाँ जाना है और मंसूबा क्या है। इसी तरह फ़तह मक्का के मंसूबे को भी आख़री वक़्त तक ख़ुफ़िया रखा गया था। मगर गज़वा-ए-तबूक की तैयारी के हुक्म के साथ ही आप ﷺ ने तमाम तफ़सीलात भी अलल ऐलान सबको बता दी थीं कि लश्कर की मंज़िले मक़सूद तबूक है और हमारा टकराव सलतनते रोमा से है, ताकि हर शख्स हर लिहाज़ से अपना जायज़ा ले ले और दाखली व खारजी दोनों पहलुओं से तैयारी कर ले। साज़ो सामान भी मुहैय्या कर ले और अपने हौसले की भी जाँच-परख कर ले।

وَسَيَحْلِفُوْنَ بِاللّٰهِ لَوِ اسْتَطَعْنَا لَخَرَجْنَا مَعَكُمْ ۚ

"और अनक़रीब ये लोग क़समें खायेंगे अल्लाह की कि अगर हमारे अन्दर इस्तताअत होती तो हम ज़रूर निकलते तुम लोगों के साथ।"

यानि क़समें खा-खा कर बहाने बनाएँगे और अपनी फ़रज़ी मजबूरियों का रोना रोयेंगे।

تُقْبَلَ مِنْهُمْ نَفَقٰتُهُمْ اِلَّآ اَنَّهُمْ كَفَرُوْا بِاللّٰهِ وَبِرَسُوْلِهٖ وَلَا يَاْتُوْنَ الصَّلٰوةَ اِلَّا
وَهُمْ كُسَالٰى وَلَا يُنْفِقُوْنَ اِلَّا وَهُمْ كٰرِهُوْنَ ۝٥٤ فَلَا تُعْجِبْكَ اَمْوَالُهُمْ وَلَآ
اَوْلَادُهُمْ ۭ اِنَّمَا يُرِيْدُ اللّٰهُ لِيُعَذِّبَهُمْ بِهَا فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَتَزْهَقَ اَنْفُسُهُمْ وَهُمْ
كٰفِرُوْنَ ۝٥٥ وَيَحْلِفُوْنَ بِاللّٰهِ اِنَّهُمْ لَمِنْكُمْ ۭ وَمَا هُمْ مِّنْكُمْ وَلٰكِنَّهُمْ قَوْمٌ
يَّفْرَقُوْنَ ۝٥٦ لَوْ يَجِدُوْنَ مَلْجَاً اَوْ مَغٰرٰتٍ اَوْ مُدَّخَلًا لَّوَلَّوْا اِلَيْهِ وَهُمْ
يَجْمَحُوْنَ ۝٥٧ وَمِنْهُمْ مَّنْ يَّلْمِزُكَ فِي الصَّدَقٰتِ ۚ فَاِنْ اُعْطُوْا مِنْهَا رَضُوْا وَاِنْ لَّمْ
يُعْطَوْا مِنْهَآ اِذَا هُمْ يَسْخَطُوْنَ ۝٥٨ وَلَوْ اَنَّهُمْ رَضُوْا مَآ اٰتٰىهُمُ اللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗ ۙ
وَقَالُوْا حَسْبُنَا اللّٰهُ سَيُؤْتِيْنَا اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ وَرَسُوْلُهٗٓ ۙ اِنَّآ اِلَى اللّٰهِ رٰغِبُوْنَ ۝٥٩
اِنَّمَا الصَّدَقٰتُ لِلْفُقَرَاۗءِ وَالْمَسٰكِيْنِ وَالْعٰمِلِيْنَ عَلَيْهَا وَالْمُؤَلَّفَةِ قُلُوْبُهُمْ وَفِي
الرِّقَابِ وَالْغٰرِمِيْنَ وَفِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَابْنِ السَّبِيْلِ ۭ فَرِيْضَةً مِّنَ اللّٰهِ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ
حَكِيْمٌ ۝٦٠

आयत 43

عَفَا اللّٰهُ عَنْكَ ۚ لِمَ اَذِنْتَ لَهُمْ

"(ऐ नबी ﷺ!) अल्लाह आपको माफ़ फ़रमाए (या अल्लाह ने आपको माफ़ फ़रमा दिया) आपने इन्हें क्यों इजाज़त दे दी?"

यानि आप ﷺ के पास कोई मुनाफ़िक़ आया और अपनी किसी मजबूरी का बहाना बना कर जिहाद से रुख़्सत चाही तो आप ﷺ ने अपनी नर्म मिज़ाजी की वजह से उसे इजाज़त दे दी। अब उस शख़्स को तो गोया सनद मिल गई कि मैंने हुज़ूर ﷺ से रुख़्सत ली है। जिहाद के लिये निकलने का इसका इरादा तो उसका था ही नहीं, मगर इजाज़त मिल जाने से उसकी

يُهْلِكُوْنَ اَنْفُسَهُمْ ۚ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ اِنَّهُمْ
لَكٰذِبُوْنَ ۝٤٢

"ये लोग अपने आप को हलाक कर रहे हैं, और अल्लाह को मालूम है कि ये बिल्कुल झूठे हैं।"

आयात 43 से 60 तक

عَفَا اللّٰهُ عَنْكَ ۚ لِمَ اَذِنْتَ لَهُمْ حَتّٰى يَتَبَيَّنَ لَكَ الَّذِيْنَ صَدَقُوْا وَتَعْلَمَ
الْكٰذِبِيْنَ ۝٤٣ لَا يَسْتَاْذِنُكَ الَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ اَنْ يُّجَاهِدُوْا
بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌۢ بِالْمُتَّقِيْنَ ۝٤٤ اِنَّمَا يَسْتَاْذِنُكَ الَّذِيْنَ لَا
يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَارْتَابَتْ قُلُوْبُهُمْ فَهُمْ فِيْ رَيْبِهِمْ يَتَرَدَّدُوْنَ ۝٤٥
وَلَوْ اَرَادُوا الْخُرُوْجَ لَاَعَدُّوْا لَهٗ عُدَّةً وَّلٰكِنْ كَرِهَ اللّٰهُ انْۢبِعَاثَهُمْ فَثَبَّطَهُمْ وَقِيْلَ
اقْعُدُوْا مَعَ الْقٰعِدِيْنَ ۝٤٦ لَوْ خَرَجُوْا فِيْكُمْ مَّا زَادُوْكُمْ اِلَّا خَبَالًا وَّلَاَوْضَعُوْا
خِلٰلَكُمْ يَبْغُوْنَكُمُ الْفِتْنَةَ ۚ وَفِيْكُمْ سَمّٰعُوْنَ لَهُمْ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌۢ بِالظّٰلِمِيْنَ ۝٤٧ لَقَدِ
ابْتَغَوُا الْفِتْنَةَ مِنْ قَبْلُ وَقَلَّبُوْا لَكَ الْاُمُوْرَ حَتّٰى جَاۗءَ الْحَقُّ وَظَهَرَ اَمْرُ اللّٰهِ وَهُمْ
كٰرِهُوْنَ ۝٤٨ وَمِنْهُمْ مَّنْ يَّقُوْلُ ائْذَنْ لِّيْ وَلَا تَفْتِنِّيْ ۭ اَلَا فِي الْفِتْنَةِ سَقَطُوْا ۭ وَاِنَّ
جَهَنَّمَ لَمُحِيْطَةٌۢ بِالْكٰفِرِيْنَ ۝٤٩ اِنْ تُصِبْكَ حَسَنَةٌ تَسُؤْهُمْ ۚ وَاِنْ تُصِبْكَ مُصِيْبَةٌ
يَّقُوْلُوْا قَدْ اَخَذْنَآ اَمْرَنَا مِنْ قَبْلُ وَيَتَوَلَّوْا وَّهُمْ فَرِحُوْنَ ۝٥٠ قُلْ لَّنْ يُّصِيْبَنَآ اِلَّا
مَا كَتَبَ اللّٰهُ لَنَا ۚ هُوَ مَوْلٰىنَا ۚ وَعَلَى اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُوْنَ ۝٥١ قُلْ هَلْ
تَرَبَّصُوْنَ بِنَآ اِلَّآ اِحْدَى الْحُسْنَيَيْنِ ۭ وَنَحْنُ نَتَرَبَّصُ بِكُمْ اَنْ يُّصِيْبَكُمُ اللّٰهُ
بِعَذَابٍ مِّنْ عِنْدِهٖٓ اَوْ بِاَيْدِيْنَا ۚ فَتَرَبَّصُوْٓا اِنَّا مَعَكُمْ مُّتَرَبِّصُوْنَ ۝٥٢ قُلْ اَنْفِقُوْا
طَوْعًا اَوْ كَرْهًا لَّنْ يُّتَقَبَّلَ مِنْكُمْ ۭ اِنَّكُمْ كُنْتُمْ قَوْمًا فٰسِقِيْنَ ۝٥٣ وَمَا مَنَعَهُمْ اَنْ

मुनाफ़क़त का परदा चाक नहीं हुआ। इजाज़त ना मिलती तो वाज़ेह तौर पर मालूम हो जाता कि उसने हुज़ूर ﷺ के हुक्म की नाफ़रमानी की है। इस तरह कई मुनाफ़िक़ीन आए और अपनी मजबूरियों का बहाना बना कर आप ﷺ से रुख्सत ले गए।

حَتّٰى يَتَبَيَّنَ لَكَ الَّذِيْنَ صَدَقُوْا وَتَعْلَمَ الْكٰذِبِيْنَ ﴿٤٣﴾

"यहाँ तक कि आप के लिये वाज़ेह हो जाता कि कौन लोग सच्चे हैं और आप (ये भी) जान लेते कि कौन झूठे हैं।"

आयत 44

لَا يَسْتَاْذِنُكَ الَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ اَنْ يُّجَاهِدُوْا بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ ؕ

"वह लोग जो अल्लाह पर और यौमे आखिरत पर ईमान रखते हैं वह आपसे इजाज़त के तालिब हो ही नहीं सकते कि वह जिहाद ना करें अपने अमवाल और अपनी जानों के साथ।"

सच्चे मोमिन ऐसी सूरतेहाल में ऐसा कभी नहीं कर सकते कि वह जिहाद से माफ़ी के लिये दरख्वास्त करें, क्योंकि वह जानते हैं कि जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह ईमान का लाज़मी तक़ाज़ा है। क़ब्ल अज़ बयान हो चुका है कि सूरतुल हुजरात की आयत 15 में ईमान की जो तारीफ़ (definition) की गई है उसमें तसदीक़ क़ल्बी और जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह को ईमान के अरकान क़रार दिया गया है। इस आयत का ज़िक्र सूरतुल अन्फ़ाल की आयत 12 और आयत 74 के ज़िमन में भी गुज़र चुका है। इसमें जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह को वाज़ेह तौर पर ईमान की लाज़मी शर्त क़रार दिया गया है।

وَاللّٰهُ عَلِيْمٌۢ بِالْمُتَّقِيْنَ ﴿٤٤﴾

"और अल्लाह मुत्तक़ी बन्दों से ख़ूब वाक़िफ़ है।"

आयत 45

اِنَّمَا يَسْتَاْذِنُكَ الَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَارْتَابَتْ قُلُوْبُهُمْ

"आपसे रुख्सत तो वही माँग रहे हैं जो अल्लाह और यौमे आखिरत पर ईमान नहीं रखते, और उनके दिल शकूक में पड़ गए हैं"

यहाँ सूरतुल हुजरात की मज़कूरा आयात के अल्फ़ाज़ "ثُمَّ لَمْ يَرْتَابُوْا" ज़हन में दोबारा ताज़ा कर लीजिये कि मोमिन तो वही हैं जो ईमान लाने के बाद शक में ना पड़ें, और यहाँ "وَارْتَابَتْ قُلُوْبُهُمْ" के अल्फ़ाज़ से वाज़ेह फ़रमा दिया कि इन मुनाफ़िक़ीन के दिलों के अन्दर तो शकूक व शुबहात मुस्तक़िल तौर पर डेरे डाल चुके हैं।

فَهُمْ فِيْ رَيْبِهِمْ يَتَرَدَّدُوْنَ ﴿٤٥﴾

"और वह अपने इसी शक व शुबह के अन्दर मुतरद्दिद (सिमित) हैं।"

अपने ईमान के अन्दर पैदा होने वाले शकूक व शुबहात की वजह से वह तज़बज़ुब में पड़े हुए हैं और जिहाद के लिये निकलने के बारे में फ़ैसला नहीं कर पा रहे। कभी उनको मुसलमानों के साथ चलने में मसलहत नज़र आती कि ना जाने से ईमान का ज़ाहिरी भरम भी जाता रहेगा, मगर फिर फ़ौरन ही मुसाफ़त की मशक्क़त के तस्सवुर से दिल बैठ जाता, दुनियावी मफ़ादात का तस्सवुर पाँव की बेड़ी बन जाता और फिर से झूठे बहाने बनने शुरू हो जाते।

आयत 46

وَلَوْ اَرَادُوا الْخُرُوْجَ لَاَعَدُّوْا لَهٗ عُدَّةً

"और अगर इन्होंने निकलने का इरादा किया होता तो इसके लिये साज़ो सामान फ़राहम करते"

ऐसे तवील और कठिन सफ़र के लिये भरपूर तैयारी की ज़रूरत थी, बहुत सा साज़ो सामान दरकार था, मगर इसके लिये उनका कुछ भी तैयारी ना करना और हाथ पर हाथ धरे बैठे रहना खुद ही साबित करता है कि इन्होंने जाने का इरादा तक नहीं किया।

وَّلٰكِنْ كَرِهَ اللّٰهُ انْۢبِعَاثَهُمْ فَثَبَّطَهُمْ وَقِيْلَ اقْعُدُوْا مَعَ الْقٰعِدِيْنَ ﴿۴۶﴾

"लेकिन (हक़ीक़त यह है कि) अल्लाह ने पसंद ही नहीं किया उनका उठना (और निकलना) तो इनको रोक दिय और कह दिया गया कि बैठे रहो तुम भी बैठे रहने वालों के साथ।"

इस फ़रमान में जो हिकमत थी उसकी तफ़सील इस तरह बयान फ़रमाई गई:

आयत 47

لَوْ خَرَجُوْا فِيْكُمْ مَّا زَادُوْكُمْ اِلَّا خَبَالًا

"अगर ये निकलते (ऐ मुसलमानों!) तुम्हारे साथ तो हरगिज़ इज़ाफ़ा ना करते तुम्हारे लिये मगर खराबी ही का"

उनके दिलों में चूँकि रोग था, इसलिये लश्कर के साथ जाकर भी ये लोग फ़ितने ही उठाते, लड़ाई-झगड़ा कराने की कोशिश करते और साज़िशें करते। लिहाज़ा इनके बैठे रहने और सफ़र में आप लोगों के साथ ना जाने में भी बेहतरी पोशीदा थी। गोया बंदा-ए-मोमिन के लिये अल्लाह तआला की तरफ़ से हर तरह खैर ही खैर है, जबकि मुनाफ़िक़ के लिये हर हालत में शर ही शर है।

وَّلَاْاَوْضَعُوْا خِلٰلَكُمْ يَبْغُوْنَكُمُ الْفِتْنَةَ ۚ

"और घोड़े दौड़ाते तुम्हारे माबैन, फ़ितना पैदा करने के लिये।"

وَفِيْكُمْ سَمّٰعُوْنَ لَهُمْ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌۢ بِالظّٰلِمِيْنَ ﴿۴۷﴾

"और तुम्हारे अन्दर इनके जासूस भी हैं। और अल्लाह ज़ालिमों से ख़ूब वाक़िफ़ है।"

इसका दूसरा तर्जुमा यह है कि "तुम्हारे दरमियान इनकी बातें सुनने वाले भी हैं।" यानि तुम्हारे दरमियान ऐसे नेक दिल और सादा लोह मुसलमान भी हैं जो इन मुनाफ़िक़ीन के बारे में हुस्ने ज़न रखते हैं। ऐसे मुसलामानों के इन मुनाफ़िक़ीन के साथ दोस्ताना मरासिम भी हैं और वह इनकी बातों को बड़ी तवज्जो से सुनते हैं। चुनाँचे अगर यह मुनाफ़िक़ीन तुम्हारे साथ लश्कर में मौजूद होते और कोई फ़ितना उठाते तो ऐन मुमकिन था कि तुम्हारे वह साथी अपनी सादा लोही के बाइस इनके उठाये हुए फ़ितने का शिकार हो जाते।

आयत 48

لَقَدِ ابْتَغَوُا الْفِتْنَةَ مِنْ قَبْلُ

"ये पहले भी फ़ितना उठाते रहे हैं"

याद रहे कि यही लफ्ज़ "फ़ितना" उस हदीस में भी आया है जिसका ज़िक्र उलमा-ए-सू के किरदार के सिलसिले में क़ब्ल अज़ आयत 34 के ज़िमन में हो चुका है: ((عُلَمَاؤُهُمْ شَرٌّ مَنْ تَحْتَ اَدِيْمِ السَّمَاءِ ' مِنْ عِنْدِهِمْ تَخْرُجُ الْفِتْنَةُ وَفِيْهِمْ تَعُوْدُ)) यानि उनके उलमा आसमान के नीचे बदतरीन लोग होंगे, फ़ितना उन्हीं में से बरामद होगा और उन्हीं में पलट जाएगा।" यानि वह आपस में लड़ाई-झगड़ों, फ़तवा परदाज़ियों और तिफ़रक़ा बाज़ियों में मसरूफ़ होंगे।

وَقَلَّبُوْا لَكَ الْاُمُوْرَ

"और (ऐ नबी ﷺ!) आपके लिये मामलात को उलट-पलट करने की कोशिश करते रहे हैं"

ये लोग अपनी इम्कानी हद तक कोशिश करते रहे हैं कि आप ﷺ के ममलात को तलपट कर दें।

حَتّٰى جَآءَ الْحَقُّ وَظَهَرَ اَمْرُ اللّٰهِ وَهُمْ كٰرِهُوْنَ ﴿٤٨﴾

"यहाँ तक कि हक़ आ गया और अल्लाह का अम्र ग़ालिब हो गया और इन्हें ये पसंद नहीं था।"

यानि ज़ज़ीरा नुमाए अरब की हद तक इन लोगों की ख्वाहिशों और कोशिशों के अलल रग़म अल्लाह का दीन ग़ालिब हो गया।

आयत 49

وَمِنْهُمْ مَّنْ يَّقُوْلُ ائْذَنْ لِّيْ وَلَا تَفْتِنِّيْ ؕ

"और इनमें से वह भी है जो कहता है कि मुझे रुख्सत दे दीजिये और मुझे फ़ितने में ना डालिये।"

ये मुनाफ़िक़ और मरदूद शख्स जुद बिन क़ैस था (लानतुल्लाह अलैय)। जब रसूल अल्लाह ﷺ ने गज़वा-ए-तबूक के लिये तैयारी का ऐलान फ़रमाया तो यह शख्स आप ﷺ के पास हाज़िर हुआ और अजीब इस्तहज़ाईया अंदाज़ में आप ﷺ से रुख्सत चाही कि हुज़ूर मुझे तो रहने ही दें, क्योंकि मैं हुस्न परस्त क़िस्म का इंसान हूँ और लश्कर जा रहा है शाम के इलाक़े की तरफ़, जहाँ की औरतें बहुत हसीन होती हैं। मैं वहाँ की ख़ूबसूरत औरतों को देख कर खुद पर क़ाबू नहीं रख सकूँगा और फ़ितने में मुब्तला हो जाऊँगा, लिहाज़ा आप मुझे इस फ़ितने में मत डालें और मुझे पीछे ही रहने दें।

اَلَا فِي الْفِتْنَةِ سَقَطُوْا ؕ

"आगाह हो जाओ फ़ितने में तो ये लोग पड़ चुके।"

यानि यह शख्स और इसके दूसरे साथी तो पहले ही बदतरीन फ़ितने का शिकार हो चुके हैं जो इस तरह के बहाने तराशने की जसारत कर रहे हैं। इनका यह रवैया जिस सोच की ग़माज़ी (अफ़सोस) कर रहा है इससे मज़ीद बड़ा फ़ितना और कौनसा होगा!

وَاِنَّ جَهَنَّمَ لَمُحِيْطَةٌ ۢ بِالْكٰفِرِيْنَ ﴿٤٩﴾

"और यक़ीनन जहन्नुम इन काफ़िरों का इहाता किये हुए है।"

आयत 50

اِنْ تُصِبْكَ حَسَنَةٌ تَسُؤْهُمْ ۚ

"(ऐ नबी ﷺ) अगर आपको कोई अच्छी बात पहुँचती है तो इन्हें वह बुरी लगती है।"

अगर आप ﷺ को कहीं से कोई कामयाबी मिलती है, कोई अच्छी ख़बर आपके लिये आती है तो इन्हें यह सब कुछ नागवार लगता है।

وَاِنْ تُصِبْكَ مُصِيْبَةٌ يَّقُوْلُوْا قَدْ اَخَذْنَاۤ اَمْرَنَا مِنْ قَبْلُ

"और अगर आपको कोई तकलीफ़ आ जाती है तो कहते हैं कि हमने तो अपना ममला पहले ही दुरुस्त कर लिया था"

कि हम कोई इन लोगों की तरह बेवक़ूफ़ थोड़े हैं, हमने तो पहले ही इन बुरे हालात से अपनी हिफ़ाज़त का बंदोबस्त कर लिया था।

"और वह लौट जाते हैं ख़ुशिया मनाते हुए।" وَيَتَوَلَّوْا وَّهُمْ فَرِحُوْنَ ۝٥٠

वह इस सूरतेहाल में बड़े शादाँ व फ़रहां फ़िरते हैं कि मुसलमानों पर मुसीबत आ गई और हम बच गए।

अगली दो आयात मआरका-ए-हक़ व बातिल में एक बंदा-ए-मोमिन के लिये बहुत बड़ा हथियार हैं। इसलिये हर मुसलमान को ये दोनों आयात ज़बानी याद कर लेनी चाहियें।

आयत 51

"आप कह दीजिए कि हम पर कोई मुसीबत नहीं आ सकती सिवाय इसके जो अल्लाह ने हमारे लिये लिख दी हो। वही हमारा मौला है।" قُلْ لَّنْ يُّصِيْبَنَآ اِلَّا مَا كَتَبَ اللّٰهُ لَنَا ۚ هُوَ مَوْلٰىنَا ۚ

हम पर जो भी मुसीबत आती है वह अल्लाह ही की मरज़ी और इजाज़त से आती है। उसके इज़्न के बगैर कायनात में एक पत्ता भी नहीं हिल सकता। वह हमारा कारसाज़ और परवरदिगार है। अगर उसकी मशियत हो कि हमें कोई तकलीफ़ आए तो सर आँखों पर "सरे तस्लीम ख़म है जो मिज़ाजे यार में आए।" जो उसकी रज़ा हो हम भी उसी पर राज़ी हैं। अगर उसकी तरफ़ से कोई तकलीफ़ आ जाए तो इसमें भी हमारे लिए खैर है "हरचे साक़ी मा रेख्त ऐयन अल्ताफ़ अस्त" (हमारा साक़ी हमारे प्याले में जो भी डाल दे उसका लुत्फ़ व करम ही है)। महबूब की शमशीर से ज़िबह होना यक़ीनन बहुत बड़े ऐज़ाज़ की बात है और ये ऐज़ाज़ किसी गैर के नसीब में क्यों हो, जबकि हमारी गरदने हर वक़्त इस सआदत के लिये हाज़िर हैं:

ना शोद नसीबे दुश्मन कि शोद हलाके तैगत
सरे दोस्तां सलामत कि तू खंज़र आज़माई!

"और अल्लाह ही पर तवक्कुल करना चाहिये अहले ईमान को।" وَعَلَى اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُوْنَ ۝٥١

आयत 52

"(इनसे) कहिये कि तुम हमारे बारे में किस शय का इन्तेज़ार कर सकते हो सिवाय दो निहायत उम्दा चीज़ों में से किसी एक के!" قُلْ هَلْ تَرَبَّصُوْنَ بِنَآ اِلَّآ اِحْدَى الْحُسْنَيَيْنِ ۭ

"अल हुसनैन" अल्हुस्ना की तस्निया (द्विवचन) है, जो अहसन की मोअन्नस (स्त्रीलिंग) है। यह अफ़अल अलतफ़ज़ील का सीगा है। चुनाँचे अल हुसनैन के मायने हैं दो निहायत अहसन सूरतें। जब कोई बंदा-ए-मोमिन अल्लाह के रास्ते में किसी मुहिम पर निकलता है तो उसके लिये तो दोनों इम्कानी सूरतें ही अहसन हैं, अल्लाह की राह में शहीद हो जाए तो वह भी अहसन:

शहादत है मतलूब व मक़सूदे मोमिन
ना माले गनीमत ना किशवर कशाई!

और अगर कामयाब होकर आ जाए तो भी अहसन। दोनों सूरतों में कामयाबी ही कामयाबी है। तीसरी कोई सूरत तो है ही नहीं। लिहाज़ा एक बंदा-ए-मोमिन को खौफ़ काहे का?

जो हक़ की ख़ातिर जीते हैं मरने से कहीं डरते हैं जिगर
जब वक़्ते शहादत आता है दिल सीनों में रक़सा होते हैं!

"और (ऐ मुनाफ़िक़ों!) हम मुंतज़िर हैं तुम्हारे बारे में कि अल्लाह तुम्हें पहुँचाये कोई अज़ाब अपने पास से या हमारे हाथों" وَنَحْنُ نَتَرَبَّصُ بِكُمْ اَنْ يُّصِيْبَكُمُ اللّٰهُ بِعَذَابٍ مِّنْ عِنْدِهٖٓ اَوْ بِاَيْدِيْنَا ۚ

हमें भी तुम्हारे बारे में इंतेज़ार है कि तुम्हारे करतूतों के सबब अल्लाह तआला तुम पर ख़ुद कोई अज़ाब नाज़िल कर दे या ऐयन मुमकिन है कि कभी हमें इजाज़त दे दी जाए और हम तुम्हारी गरदने उड़ायें।

"तो तुम भी इंतेज़ार करो, हम भी तुम्हारे साथ इंतेज़ार कर रहे हैं।"

فَتَرَبَّصُوۡۤا اِنَّا مَعَكُمۡ مُّتَرَبِّصُوۡنَ ﴿۵۲﴾

आयत 53

"कह दीजिये कि चाहे ख़ुशी से खर्च करो या मजबूरी से, तुमसे क़ुबूल नहीं किया जाएगा। इसलिये कि तुम नाफ़रमान लोग हो।"

قُلۡ اَنۡفِقُوۡا طَوۡعًا اَوۡ كَرۡهًا لَّنۡ يُّتَقَبَّلَ مِنۡكُمۡ ؕ اِنَّكُمۡ كُنۡتُمۡ قَوۡمًا فٰسِقِيۡنَ ﴿۵۳﴾

यहाँ मुनाफ़िक़ीन के एक दूसरे हरबे का ज़िक्र है कि कुछ माल असबाब चंदे के तौर पर ले आए और बहाना बनाया कि मुझे फ़लां-फ़लां मजबूरी है, मैं ख़ुद तो जाने से माज़ूर हूँ, मुझे रुख्सत दे दें और ये साज़ो-सामान क़ुबूल कर लें। ऐसी सूरतेहाल के जवाब में फ़रमाया जा रहा है कि अब जबकि जिहाद के लिये ब-नफ्से नफ़ीस निकलना फ़र्ज़े ऐयन है, इस सूरतेहाल में रुपया-पैसा और साज़ो-सामान इसका बदल नहीं हो सकता।

आयत 54

"और नहीं मानेअ हुई कोई चीज़ कि इनसे इनके नफ़क़ात (अमवाल का खर्च करना) को क़ुबूल किया जाता, मगर यह कि इन्होंने कुफ़्र किया है अल्लाह और उसके रसूल के साथ"

وَمَا مَنَعَهُمۡ اَنۡ تُقۡبَلَ مِنۡهُمۡ نَفَقٰتُهُمۡ اِلَّاۤ اَنَّهُمۡ كَفَرُوۡا بِاللّٰهِ وَبِرَسُوۡلِهٖ

"और नमाज़ के लिये नहीं आते मगर बहुत ही कसल मंदी से और खर्च नहीं करते मगर कराहत के साथ।"

وَلَا يَاۡتُوۡنَ الصَّلٰوةَ اِلَّا وَهُمۡ كُسَالٰى وَلَا يُنۡفِقُوۡنَ اِلَّا وَهُمۡ كٰرِهُوۡنَ ﴿۵۴﴾

यानि अब जो चंदा ये लोग पेश कर रहे हैं वह तो जान बचाने के लिये दे रहे हैं कि हमसे साज़ो-सामान ले लिया जाए और हमें इस मुहिम पर जाने से माफ़ रखा जाए।

आयत 55

"तो (ऐ नबी ﷺ!) आपको इनके अमवाल और इनकी औलाद से ताज्जुब ना हो।"

فَلَا تُعۡجِبۡكَ اَمۡوَالُهُمۡ وَلَاۤ اَوۡلَادُهُمۡ ؕ

इनको देख कर आप लोग ये ना समझें कि माल व दौलत और औलाद की कसरत इनके लिये अल्लाह की बड़ी नेअमतें हैं। ऐसा हरगिज़ नहीं है, बल्कि ऐसे लोगों को तो अल्लाह ऐसी नेअमतें इसलिये देता है कि इनका हिसाब इसी दुनिया में बेबाक़ हो जाए और आख़िरत में इनके लिये कुछ ना बचे। और ऐसा भी होता है कि बाज़ अवक़ात दुनिया की इन्हीं नेअमतों को अल्लाह तआला इन्सान के लिये बाइसे अज़ाब बना देता है।

"अल्लाह तो चाहता है कि इन्हीं चीज़ों के ज़रिये से इन्हें दुनियावी ज़िंदगी में अज़ाब दे"

اِنَّمَا يُرِيۡدُ اللّٰهُ لِيُعَذِّبَهُمۡ بِهَا فِى الۡحَيٰوةِ الدُّنۡيَا

अल्लाह तआला की तरफ़ से ऐसे हालात भी पैदा हो सकते हैं कि यही औलाद जिसको इन्सान बड़े लाड़-प्यार और अरमानों से पाल-पोस कर बड़ा करता है इसके लिये सोहाने रूह बन जाए और यही माल व दौलत

जिसे वह जान जोखों में दाल कर जमा करता है उसकी जान का वबाल साबित हो।

وَتَزْهَقَ اَنْفُسُهُمْ وَهُمْ كٰفِرُوْنَ ﴿۵۵﴾

"और इनकी जानें निकले इसी कुफ़्र की हालत में।"

अल्लाह तआला चाहता है कि ये लोग दुनिया की ज़िंदगी में अपनी दौलत ही से लिपटे रहें और अपनी औलाद की मोहब्बत में इस क़दर मगन रहें कि जीते जी इन्हें आँखे खोल कर हक़ को देखने और पहचानने की फ़ुरसत ही नसीब ना हो, और इसी हालत में ये लोग आख़री अज़ाब के मुस्तहिक़ बन जाएँ।

आयत 56

وَيَحْلِفُوْنَ بِاللّٰهِ اِنَّهُمْ لَمِنْكُمْ ؕ

"और वह क़समें खा-खा कर कहते हैं कि हम भी आप लोगों के साथ हैं।"

हम भी मुसलमान हैं, आप लोगों के साथी हैं, हमारी बात का ऐतबार कीजिये।

وَمَا هُمْ مِّنْكُمْ وَلٰكِنَّهُمْ قَوْمٌ يَّفْرَقُوْنَ ﴿۵۶﴾

"लेकिन (ऐ मुसलमानों! हक़ीक़त में) ये लोग तुम में से नहीं हैं, बल्कि असल में ये डरे हुए लोग हैं।"

असल में ये लोग इस्लाम के ग़लबे के तस्सवुर से खौफ़ज़दा हैं और खौफ़ के मारे अपने आप को मुसलमान ज़ाहिर कर रहे हैं।

आयत 57

لَوْ يَجِدُوْنَ مَلْجَاً اَوْ مَغٰرٰتٍ اَوْ مُدَّخَلًا لَّوَلَّوْا اِلَيْهِ وَهُمْ يَجْمَحُوْنَ ﴿۵۷﴾

"अगर ये पा लें कहीं कोई पनाहगाह या कोई ग़ार या कोई सर छुपाने की जगह, तो ये उसकी तरफ़ भाग जाएँ अपनी रस्सियाँ तुड़ाते हुए।"

जैसे कोई जानवर खौफ़ के मारे अपनी रस्सी तुड़ा कर भागता है, इसी तरह की कैफ़ियत इन पर भी तारी है। इस इज़तरारी कैफ़ियत में अगर ज़ज़ीरा नुमाए अरब में इन्हें कहीं भी कोई पनाहगाह मिल जाती या किसी भी तरह का कोई ठिकाना जान बचाने के लिये नज़र आ जाता तो वह खौफ़ के मारे यहाँ से भाग गए होते।

आयत 58

وَمِنْهُمْ مَّنْ يَّلْمِزُكَ فِي الصَّدَقٰتِ ۚ

"और (ऐ नबी ﷺ) इनमें से वह भी हैं जो आप पर इल्ज़ाम लगाते हैं सदक़ात के बारे में।"

ज़कात व सदक़ात का माल रसूल अल्लाह ﷺ ख़ुद तक़सीम फ़रमाते थे। एक दफ़ा यूँ हुआ कि माल की तक़सीम के दौरान एक मुनाफ़िक़ ने आप ﷺ को टोक दिया: يَا مُحَمَّدُ اعْدِلْ "ऐ मोहम्मद ﷺ इन्साफ़ (के साथ तक़सीम) कीजिये!" उसकी मुराद यह थी कि आप नाइन्साफ़ी कर रहे हैं। इस पर हुज़ूर ﷺ को गुस्सा आया और आपने फ़रमाया: ((وَيْلَكَ وَمَنْ يَعْدِلُ اِذَا لَمْ اَكُنْ اَعْدِلُ))[24] "तुम बरबाद हो जाओ, अगर मैं अदल नहीं करूँगा तो कौन करेगा?"

فَاِنْ اُعْطَوْا مِنْهَا رَضُوْا وَاِنْ لَّمْ يُعْطَوْا مِنْهَآ اِذَا هُمْ يَسْخَطُوْنَ ﴿۵۸﴾

"तो अगर इसमें से इन्हें (ख़ातिर ख्वाह) दे दिया जाए तो ये राज़ी रहते हैं और अगर

इसमें से इन्हें (इस क़दर) ना दिया जाए तो फ़ौरन नाराज़ हो जाते हैं।"

आयत 59

وَلَوْ اَنَّهُمْ رَضُوْا مَآ اٰتٰىهُمُ اللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗ ۙ وَقَالُوْا حَسْبُنَا اللّٰهُ سَيُؤْتِيْنَا اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ وَرَسُوْلُهٗٓ اِنَّآ اِلَى اللّٰهِ رٰغِبُوْنَ ۝٥٩

"और अगर वह राज़ी रहते उस पर जो कुछ दिया उन्हें अल्लाह ने और उसके रसूल ने, और वह कहते कि अल्लाह हमारे लिये काफ़ी है, अनक़रीब अल्लाह और उसके रसूल हमें (फिर भी) अपने फ़ज़ल से नवाज़ते रहेंगे, यक़ीनन हम अल्लाह की तरफ़ रगबत करने वाले हैं (तो इनके हक़ में बेहतर होता)।"

अगर उन लोगों की सोच मुसबत (positive) होती और वह अल्लाह और उसके रसूल के बारे में अच्छा गुमान रखते तो उनके लिये बेहतर होता। अब वह मशहूर आयत आ रही है जिसमें ज़कात के मसारिफ़ बयान हुए हैं।

आयत 60

اِنَّمَا الصَّدَقٰتُ لِلْفُقَرَآءِ وَالْمَسٰكِيْنِ وَالْعٰمِلِيْنَ عَلَيْهَا

"सदक़ात तो बस मुफ़लिसों और मोहताजों और आमलीने सदक़ात के लिये हैं"

सदक़ात से मुराद यहाँ ज़कात है। وَالْعٰمِلِيْنَ عَلَيْهَا में महकमा-ए-ज़कात के छोटे-बड़े तमाम मुलाज़मीन शामिल हैं जो ज़कात इकट्ठी करने, उसका हिसाब रखने और उसे मुस्तहक़ीन में तक़सीम करने या उस महकमे में किसी भी हैसियत में मामूर हैं, इन सब मुलाज़मीन की तनख्वाहें इसी ज़कात में से दी जाएँगी।

وَالْمُؤَلَّفَةِ قُلُوْبُهُمْ

"और उनके लिये जिनकी तालीफ़ क़ुलूब मतलूब हो"

जब दीन की तहरीक और दावत चल रही हो तो मआशरे के बाज़ साहिबे हैसियत अफ़राद की तालीफ़े क़ुलूब के लिये ज़कात की रक़म इस्तेमाल की जा सकती है ताकि ऐसे लोगों को कुछ दे दिला कर उनकी मुखालफ़त का ज़ोर कम किया जा सके। फ़ु-क़हा के नज़दीक दीन के ग़ालिब हो जाने के बाद ये मुद्दत ख़त्म हो गई है, लेकिन अगर फ़िर कभी इस क़िस्म की सूरतेहाल दरपेश हो तो ये मद फ़िर से बहाल हो जाएगी।

وَفِي الرِّقَابِ وَالْغٰرِمِيْنَ

"और गरदनों के छुड़ाने में, और जिन पर तावान पड़ा हो (उनके लिये)"

ऐसा मक़रूज़ जो क़र्ज़ के बोझ से निकलने की क़ुदरत ना रखता हो या ऐसा शख्स जिस पर कोई तावान पड़ गया हो, ऐसे लोगों की गुलो खलासी के लिये ज़कात की रक़म से मदद की जा सकती है।

وَفِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ

"और अल्लाह की राह में"

यानि अल्लाह की राह में जिहाद में और दावत व अक़ामाते दीन की जद्दो-जहद में भी ये रक़म ख़र्च हो सकती है। लेकिन ज़कात व सदक़ात के सिलसिले में यह नुक्ता बहुत अहम है कि पहली तरजीह के तौर पर अव्वलीन मुस्तहक़ीन व गुराबा, यतामा, मसाकीन और बेवाएँ हैं जो वाक़ई मोहताज हों। अलबत्ता अगर ज़कात की कुछ रक़म ऐसे लोगों की मदद के बाद बच जाए तो वह दीन के दूसरे कामों में सर्फ़ की जा सकती है।

وَابْنِ السَّبِيْلِ ۭ فَرِيْضَةً مِّنَ اللّٰهِ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ۝٦٠

"और मुसाफ़िरों (की इमदाद) में। यह अल्लाह की तरफ़ से मुअय्यन हो गया है।

और अल्लाह सब कुछ जानने वाला,
हिकमत वाला है।"

{ فَرِيْضَةً مِّنَ اللهِ } के अल्फ़ाज़ अहकामे विरासत के सिलसिले में सूरतुन्निसा की आयत 11 में भी आए हैं।

आयात 61 से 66 तक

وَمِنْهُمُ الَّذِيْنَ يُؤْذُوْنَ النَّبِيَّ وَيَقُوْلُوْنَ هُوَ اُذُنٌ ؕ قُلْ اُذُنُ خَيْرٍ لَّكُمْ يُؤْمِنُ بِاللّٰهِ
وَيُؤْمِنُ لِلْمُؤْمِنِيْنَ وَرَحْمَةٌ لِّلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مِنْكُمْ ؕ وَالَّذِيْنَ يُؤْذُوْنَ رَسُوْلَ اللّٰهِ لَهُمْ
عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۝۶۱ يَحْلِفُوْنَ بِاللّٰهِ لَكُمْ لِيُرْضُوْكُمْ ۚ وَاللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗۤ اَحَقُّ اَنْ يُّرْضُوْهُ
اِنْ كَانُوْا مُؤْمِنِيْنَ ۝۶۲ اَلَمْ يَعْلَمُوْۤا اَنَّهٗ مَنْ يُّحَادِدِ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ فَاَنَّ لَهٗ نَارَ جَهَنَّمَ
خَالِدًا فِيْهَا ؕ ذٰلِكَ الْخِزْیُ الْعَظِيْمُ ۝۶۳ يَحْذَرُ الْمُنٰفِقُوْنَ اَنْ تُنَزَّلَ عَلَيْهِمْ سُوْرَةٌ
تُنَبِّئُهُمْ بِمَا فِيْ قُلُوْبِهِمْ ؕ قُلِ اسْتَهْزِءُوْا ۚ اِنَّ اللّٰهَ مُخْرِجٌ مَّا تَحْذَرُوْنَ ۝۶۴ وَلَئِنْ
سَاَلْتَهُمْ لَيَقُوْلُنَّ اِنَّمَا كُنَّا نَخُوْضُ وَنَلْعَبُ ؕ قُلْ اَبِاللّٰهِ وَاٰيٰتِهٖ وَرَسُوْلِهٖ كُنْتُمْ
تَسْتَهْزِءُوْنَ ۝۶۵ لَا تَعْتَذِرُوْا قَدْ كَفَرْتُمْ بَعْدَ اِيْمَانِكُمْ ؕ اِنْ نَّعْفُ عَنْ طَآئِفَةٍ
مِّنْكُمْ نُعَذِّبْ طَآئِفَةً ۢ بِاَنَّهُمْ كَانُوْا مُجْرِمِيْنَ ۝۶۶

आयत 61

وَمِنْهُمُ الَّذِيْنَ يُؤْذُوْنَ النَّبِيَّ وَيَقُوْلُوْنَ هُوَ اُذُنٌ ؕ

"और इनमें वह लोग भी हैं जो नबी (ﷺ) को ईज़ा पहुँचाते हैं और कहते हैं यह तो निरे कान हैं।"

यह तो निरे कान ही कान हैं। मुराद यह है कि हर एक की बात सुन लेते हैं और हम जो भी झूठा-सच्चा बहाना बनाते हैं उसे मान लेते हैं, गोया बिल्कुल ही बे-बसीरत हैं (मआज़ अल्लाह!) वह ऐसी बाते करके रसूल अल्लाह ﷺ की तौहीन करते थे और आपको अज़ीयत पहुँचाते थे।

قُلْ اُذُنُ خَيْرٍ لَّكُمْ يُؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَيُؤْمِنُ لِلْمُؤْمِنِيْنَ

"आप कहिये कि ये कान तुम्हारी बेहतरी के लिये हैं, वह यक़ीन रखते हैं अल्लाह पर और बात मान लेते हैं अहले ईमान की।"

यहाँ पर "يُؤْمِنُ" के साथ "ب" और "ل" के इस्तेमाल से मायनो का वाज़ेह फ़र्क़ मुलाहिज़ा हो। 'ب' يُؤْمِنُ اٰمَنَ के साथ ईमान लाने और 'ل' के साथ बात मानने और यक़ीन कर लेने के मायने में आता है। यानि हमारे रसूल ﷺ जानते हैं कि तुम झूठ बोल रहे हो मगर यह आप ﷺ की शराफ़त, नजाबत और मुरव्वत है कि तुम्हारी झूठी बातें सुन कर भी तुम्हें यह नहीं कहते कि तुम झूठ बोल रहे हो, और सब कुछ जानते हुए भी तुम्हारा पोल नहीं खोलते। ये तुम्हारी हिमाक़त की इन्तहा है कि तुम अपने ज़अम (ख्याल) में रसूल अल्लाह ﷺ को धोखा दे रहे हो। तुम लोगों को अल्लाह के रसूल ﷺ की बसीरत का कुछ भी अंदाज़ा नहीं है। आप ﷺ तो अल्लाह के रसूल हैं, जबकि एक बंदा-ए-मोमिन की बसीरत की भी कैफ़ियत ये है कि वह अल्लाह के नूर से देखता है। अज़रुए हदीसे नबवी ﷺ: ((اِتَّقُوْا فِرَاسَةَ الْمُؤْمِنِ فَاِنَّهٗ يَنْظُرُ بِنُوْرِ اللّٰهِ))[25]

وَرَحْمَةٌ لِّلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مِنْكُمْ ؕ

"और जो तुम में से वाक़ई मोमिन हैं उनके हक़ में रहमत हैं।"

وَالَّذِيْنَ يُؤْذُوْنَ رَسُوْلَ اللّٰهِ لَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۝۶۱

"और जो ईज़ा पहुँचाते हैं अल्लाह के रसूल (ﷺ) को उनके लिये बड़ा दर्दनाक अज़ाब है।"

आयत 62

يَحْلِفُوْنَ بِاللّٰهِ لَكُمْ لِيُرْضُوْكُمْ ۚ

"(ऐ मुसलमानों!) ये तुम्हारे के सामने अल्लाह की क़समें खाते हैं ताकि तुम्हे राज़ी करें।"

इस मुहिम की तैयारी के दौरान मुनाफ़िक़ीन का तरीक़ेकार यह था कि वह झूठे बहाने बना कर रसूल अल्लाह ﷺ से रुख्सत ले लेते, और फिर क़समें खा-खा कर मुसलमानों को भी यक़ीन दिलाने की कोशिश करते कि हम आपके मुख्लिस साथी हैं, आप लोग हम पर शक ना करें।

وَاللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗۤ اَحَقُّ اَنْ يُّرْضُوْهُ اِنْ كَانُوْا مُؤْمِنِيْنَ ۝۶۲

"अल्लाह और उसका रसूल इस बात के ज्यादा हक़दार हैं कि वह उन्हें राज़ी करें अगर वह वाक़िअतन मोमिन हैं।"

आयत 63

اَلَمْ يَعْلَمُوْۤا اَنَّهٗ مَنْ يُّحَادِدِ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ فَاَنَّ لَهٗ نَارَ جَهَنَّمَ خَالِدًا فِيْهَا ؕ ذٰلِكَ الْخِزْيُ الْعَظِيْمُ ۝۶۳

"क्या वह जानते नहीं कि जो कोई भी अल्लाह और उसके रसूल का मुक़ाबला करेगा तो उसके लिये जहन्नम की आग है, जिसमें वह हमेशा-हमेश रहेगा। यह बहुत बड़ी रुसवाई है।"

आयत 64

يَحْذَرُ الْمُنٰفِقُوْنَ اَنْ تُنَزَّلَ عَلَيْهِمْ سُوْرَةٌ تُنَبِّئُهُمْ بِمَا فِيْ قُلُوْبِهِمْ ؕ

"ये मुनाफ़िक़ डरते रहते हैं कि कहीं मुसलमानों पर कोई ऐसी सूरत नाज़िल ना हो जाए जो इनको हमारे दिलों की हालत बता दे।"

इनके दिलों में चूँकि चोर है इसलिये इन्हें हर वक़्त यह धड़का लगा रहता है कि कहीं वही के ज़रिये इनके झूठ का परदा चाक ना कर दिया जाए।

قُلِ اسْتَهْزِءُوْا ۚ اِنَّ اللّٰهَ مُخْرِجٌ مَّا تَحْذَرُوْنَ ۝۶۴

"आप कहिये कि अभी तुम इस्तेहज़ा करते रहो, यक़ीनन (एक वक़्त आयेगा कि) अल्लाह ज़ाहिर करके रहेगा जिससे तुम डर रहे हो।"

आयत 65

وَلَئِنْ سَاَلْتَهُمْ لَيَقُوْلُنَّ اِنَّمَا كُنَّا نَخُوْضُ وَنَلْعَبُ ؕ

"और अगर आप इनसे पूछेंगे तो कहेंगे कि हम तो यूँही बात-चीत और दिल्लगी कर रहे थे।"

रसूल अल्लाह ﷺ से फ़रमाया जा रहा है कि ये मुनाफ़िक़ीन जो आए दिन आप और मुसलमानों के ख़िलाफ़ हरज़ाह सराई करते रहते हैं, अगर आप इसके बारे में इनसे बाज़पुर्स (पूछताछ) करें तो फ़ौरन कहेंगे कि हमारी गुफ्तगू संजीदा नौइयत (serious type) की नहीं थी, हम तो वैसे ही हँसी-मज़ाक और दिल्लगी कर रहे थे।

فِيْهَا ؕ هِيَ حَسْبُهُمْ ۚ وَلَعَنَهُمُ اللّٰهُ ۚ وَلَهُمْ عَذَابٌ مُّقِيْمٌ ۝۶۸ كَالَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ
كَانُوْٓا اَشَدَّ مِنْكُمْ قُوَّةً وَّاَكْثَرَ اَمْوَالًا وَّاَوْلَادًا ؕ فَاسْتَمْتَعُوْا بِخَلَاقِهِمْ
فَاسْتَمْتَعْتُمْ بِخَلَاقِكُمْ كَمَا اسْتَمْتَعَ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ بِخَلَاقِهِمْ وَخُضْتُمْ كَالَّذِيْ
خَاضُوْا ؕ اُولٰٓئِكَ حَبِطَتْ اَعْمَالُهُمْ فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ ۚ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ
الْخٰسِرُوْنَ ۝۶۹ اَلَمْ يَاْتِهِمْ نَبَاُ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ قَوْمِ نُوْحٍ وَّعَادٍ وَّثَمُوْدَ ۙ وَقَوْمِ
اِبْرٰهِيْمَ وَاَصْحٰبِ مَدْيَنَ وَالْمُؤْتَفِكٰتِ ؕ اَتَتْهُمْ رُسُلُهُمْ بِالْبَيِّنٰتِ ۚ فَمَا كَانَ اللّٰهُ
لِيَظْلِمَهُمْ وَلٰكِنْ كَانُوْٓا اَنْفُسَهُمْ يَظْلِمُوْنَ ۝۷۰ وَالْمُؤْمِنُوْنَ وَالْمُؤْمِنٰتُ بَعْضُهُمْ
اَوْلِيَآءُ بَعْضٍ ۘ يَاْمُرُوْنَ بِالْمَعْرُوْفِ وَيَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ وَيُقِيْمُوْنَ الصَّلٰوةَ
وَيُؤْتُوْنَ الزَّكٰوةَ وَيُطِيْعُوْنَ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ ؕ اُولٰٓئِكَ سَيَرْحَمُهُمُ اللّٰهُ ؕ اِنَّ اللّٰهَ عَزِيْزٌ
حَكِيْمٌ ۝۷۱ وَعَدَ اللّٰهُ الْمُؤْمِنِيْنَ وَالْمُؤْمِنٰتِ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ
خٰلِدِيْنَ فِيْهَا وَمَسٰكِنَ طَيِّبَةً فِيْ جَنّٰتِ عَدْنٍ ؕ وَرِضْوَانٌ مِّنَ اللّٰهِ اَكْبَرُ ؕ ذٰلِكَ هُوَ
الْفَوْزُ الْعَظِيْمُ ۝۷۲

आयत 67

اَلْمُنٰفِقُوْنَ وَالْمُنٰفِقٰتُ بَعْضُهُمْ مِّنْۢ
بَعْضٍ

"मुनाफ़िक़ मर्द और मुनाफ़िक़ औरतें सब एक दूसरे में से हैं।"

इन सब मुनाफ़िक़ीन का आपस में गठजोड़ है, अन्दर से ये सब एक हैं।

يَاْمُرُوْنَ بِالْمُنْكَرِ وَيَنْهَوْنَ عَنِ لْمَعْرُوْفِ

"ये बदी का हुक्म देते हैं और नेकी से रोकते हैं"

قُلْ اَبِاللّٰهِ وَاٰيٰتِهٖ وَرَسُوْلِهٖ كُنْتُمْ
تَسْتَهْزِءُوْنَ ۝۶۵

"आप कहिये क्या तुम अल्लाह, उसकी आयात और उसके रसूल के साथ इस्तेहज़ा कर रहे थे?"

तो क्या अब *"बाज़ी-बाज़ी बारीशे बाबा हम बाज़ी!"* के मिस्दाक़ अल्लाह, उसकी आयात और उसका रसूल ﷺ भी तुम्हारे इस्तेहज़ा और तमस्खुर का तख्ता-ए-मश्क़ बनेंगे?

आयत 66

لَا تَعْتَذِرُوْا قَدْ كَفَرْتُمْ بَعْدَ اِيْمَانِكُمْ ؕ

"अब बहाने मत बनाओ, तुम कुफ़्र कर चुके हो अपने ईमान के बाद।"

اِنْ نَّعْفُ عَنْ طَآئِفَةٍ مِّنْكُمْ نُعَذِّبْ
طَآئِفَةً بِاَنَّهُمْ كَانُوْا مُجْرِمِيْنَ ۝۶۶

"अगर हम तुम्हारी एक जमाअत से दरगुज़र भी कर लेंगे तो किसी दूसरी जमाअत को अज़ाब भी देंगे, इसलिये कि वह मुजरिम हैं।"

यानि अब वह वक़्त आ रहा है कि तुम्हें तुम्हारे इन करतूतों के सबब सज़ाएँ भी मिलेंगी।

आयात 67 से 72 तक

اَلْمُنٰفِقُوْنَ وَالْمُنٰفِقٰتُ بَعْضُهُمْ مِّنْۢ بَعْضٍ ۘ يَاْمُرُوْنَ بِالْمُنْكَرِ وَيَنْهَوْنَ عَنِ
لْمَعْرُوْفِ وَيَقْبِضُوْنَ اَيْدِيَهُمْ ؕ نَسُوا اللّٰهَ فَنَسِيَهُمْ ؕ اِنَّ الْمُنٰفِقِيْنَ هُمُ
الْفٰسِقُوْنَ ۝۶۷ وَعَدَ اللّٰهُ الْمُنٰفِقِيْنَ وَالْمُنٰفِقٰتِ وَالْكُفَّارَ نَارَ جَهَنَّمَ خٰلِدِيْنَ

यानि अल्लाह के अहकाम के ख़िलाफ़ ये लोग “अम्रबिलमुनकर और नही अनिल मारूफ़” की पालिसी पर अमल कर रहे हैं। दूसरों से हमदर्दी जता कर उन्हें नेकी से रोकने की कोशिश करते हैं कि देखो अपने खून-पसीने की कमाई को इधर-उधर मत ज़ाया करो, बल्कि इसे अपने और अपने बच्चों के मुस्तक़बिल के लिये संभाल कर रखो।

“और अपने हाथों को बंद रखते हैं।” وَيَقْبِضُوْنَ اَيْدِيَهُمْ ؕ

यानि अल्लाह के रास्ते में ख़र्च नहीं करते।

“इन्होंने अल्लाह को भुला दिया तो अल्लाह ने (भी) इन्हें नज़रअंदाज़ कर दिया। यक़ीनन ये मुनाफ़िक़ ही नाफ़रमान हैं।” نَسُوا اللّٰهَ فَنَسِيَهُمْ ؕ اِنَّ الْمُنٰفِقِيْنَ هُمُ الْفٰسِقُوْنَ ۝٦٧

आयत 68

“अल्लाह ने वादा किया है इन मुनाफ़िक़ मर्दों, मुनाफ़िक़ औरतों और तमाम कुफ्फ़ार से जहन्नम की आग का, जिसमे वह हमेशा-हमेश रहेंगे।” وَعَدَ اللّٰهُ الْمُنٰفِقِيْنَ وَالْمُنٰفِقٰتِ وَالْكُفَّارَ نَارَ جَهَنَّمَ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا ؕ

“बस वही उनके लिये किफ़ायत करेगी। और अल्लाह ने इन पर लानत फ़रमा दी है और इनके लिये अज़ाब है क़ायम रहने वाला।” هِيَ حَسْبُهُمْ ۚ وَلَعَنَهُمُ اللّٰهُ ۚ وَلَهُمْ عَذَابٌ مُّقِيْمٌ ۝٦٨

ऐसा अज़ाब जो इनको मुसलसल दिया जाएगा और उसकी शिद्दत कभी कम ना होगी।

आयत 69

“(तुम मुनाफ़िक़ लोग) उन लोगों के मानिन्द हो जो तुमसे पहले थे” كَالَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ

“वह तुमसे कहीं बढ़ कर थे ताक़त में और कहीं ज्यादा थे माल और औलाद में।” كَانُوْٓا اَشَدَّ مِنْكُمْ قُوَّةً وَّاَكْثَرَ اَمْوَالًا وَّاَوْلَادًا ؕ

तुमसे पहले जो काफ़िर क़ौमें गुज़री हैं, मसलन क़ौमे आद, क़ौमे समूद वगैरह वह ताक़त, माल व दौलत और तादाद के लिहाज़ से तुमसे बहुत बढ़ कर थीं।

“तो उन्होंने अपने हिस्से से फ़ायदा उठा लिया और अब तुमने भी अपने हिस्से से फ़ायदा उठा लिया है” فَاسْتَمْتَعُوْا بِخَلَاقِهِمْ فَاسْتَمْتَعْتُمْ بِخَلَاقِكُمْ

यानि तुम्हारी मुद्दते मोहलत ख़त्म होने को है, अब तुम लोग बहुत जल्द अपने अंजाम को पहुँचने वाले हो।

“जैसे कि उन लोगों ने अपने हिस्से का फ़ायदा उठाया था जो तुमसे पहले थे” كَمَا اسْتَمْتَعَ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ بِخَلَاقِهِمْ

وَخُضۡتُمۡ كَالَّذِيۡ خَاضُوۡا ؕ

“और वैसी ही बहसों में तुम भी पड़े जैसी बहसों में वह पड़े थे।”

तुमने भी इसी तरह की रविश इख्तियार की जैसी उन्होंने इख्तियार की थी।

اُولٰٓئِكَ حَبِطَتۡ اَعۡمَالُهُمۡ فِى الدُّنۡيَا وَالۡاٰخِرَةِ‌ ۚ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الۡخٰسِرُوۡنَ ۝۶۹

“ये वह लोग हैं जिनके तमाम आमाल दुनिया और आख़िरत में ज़ाया हो गए। और यही लोग हैं खसारे में रहने वाले।”

आयत 70

اَلَمۡ يَاۡتِهِمۡ نَبَاُ الَّذِيۡنَ مِنۡ قَبۡلِهِمۡ قَوۡمِ نُوۡحٍ وَّعَادٍ وَّثَمُوۡدَ ۙ وَقَوۡمِ اِبۡرٰهِيۡمَ

“क्या इनके पास उन लोगों की ख़बरें नहीं आ चुकी हैं जो इनसे पहले थे? क़ौमे नूह, आद, समूद और क़ौमे इब्राहीम”

यह क़ुरान मजीद वाहिद मक़ाम है जहाँ क़ौमे इब्राहीम का तज़किरा इस अंदाज़ में आया है कि शायद आपकी क़ौम पर भी अज़ाब आया हो, लेकिन वाज़ेह तौर पर ऐसे किसी अज़ाब का ज़िक्र पूरे क़ुरान में कहीं नहीं है।

وَاَصۡحٰبِ مَدۡيَنَ وَالۡمُؤۡتَفِكٰتِ‌ ؕ

“और मदयन के लोगों और उन बस्तियों की (खबरें) जो उलट दी गईं।”

اَتَتۡهُمۡ رُسُلُهُمۡ بِالۡبَيِّنٰتِ‌ ۚ فَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيَظۡلِمَهُمۡ وَلٰـكِنۡ كَانُوۡۤا اَنۡفُسَهُمۡ يَظۡلِمُوۡنَ ۝۷۰

“उनके पास आये उनके रसूल वाज़ेह निशानियाँ (या अहकाम) लेकर। पस अल्लाह उन पर ज़ुल्म करने वाला नहीं था, बल्कि वह अपने ऊपर खुद ही ज़ुल्म ढहाते रहे।”

आयत 71

وَالۡمُؤۡمِنُوۡنَ وَالۡمُؤۡمِنٰتُ بَعۡضُهُمۡ اَوۡلِيَآءُ بَعۡضٍ‌ ۘ

“और ईमान वाले मर्द और ईमान वाली औरतें, ये सब एक दूसरे के साथी हैं।”

يَاۡمُرُوۡنَ بِالۡمَعۡرُوۡفِ وَيَنۡهَوۡنَ عَنِ الۡمُنۡكَرِ وَيُقِيۡمُوۡنَ الصَّلٰوةَ وَيُؤۡتُوۡنَ الزَّكٰوةَ وَيُطِيۡعُوۡنَ اللّٰهَ وَرَسُوۡلَهٗ‌ ؕ

“वह नेकी का हुक्म देते हैं, बदी से रोकते हैं, नमाज़ क़ायम करते हैं, ज़कात अदा करते हैं और अल्लाह और उसके रसूल की इताअत करते हैं।”

اُولٰٓئِكَ سَيَرۡحَمُهُمُ اللّٰهُ‌ ؕ اِنَّ اللّٰهَ عَزِيۡزٌ حَكِيۡمٌ ۝۷۱

“यही वह लोग हैं जिन पर अल्लाह रहमत फ़रमाएगा। यक़ीनन अल्लाह ज़बरदस्त, हिकमत वाला है।”

आयत 72

وَعَدَ اللّٰهُ الۡمُؤۡمِنِيۡنَ وَالۡمُؤۡمِنٰتِ جَنّٰتٍ تَجۡرِىۡ مِنۡ تَحۡتِهَا الۡاَنۡهٰرُ خٰلِدِيۡنَ فِيۡهَا وَمَسٰكِنَ طَيِّبَةً فِىۡ جَنّٰتِ عَدۡنٍ‌ ؕ

“अल्लाह ने वादा किया है मोमिन मर्दों और मोमिन औरतों से उन बाग़ात का जिनके नीचे नदियाँ बहती होंगी, वह उसमें हमेशा रहेंगे, और बहुत उम्दा

मकानात (का वादा) हमेशा रहने वाले बाग़ात में।"

وَرِضْوَانٌ مِّنَ اللّٰهِ اَكْبَرُ ؕ ذٰلِكَ هُوَ الْفَوْزُ الْعَظِيْمُ ۚ﴿۷۲﴾

"और अल्लाह की रज़ा तो सबसे बड़ी नेअमत है। यही तो है बहुत बड़ी कामयाबी।"

जन्नत की सारी नेअमतें अपनी जगह, मगर अहले जन्नत के लिये सबसे बड़ी नेअमत यह होगी कि अल्लाह उनसे राज़ी हो जाएगा।

आयात 73 से 80 तक

يٰۤاَيُّهَا النَّبِيُّ جَاهِدِ الْكُفَّارَ وَالْمُنٰفِقِيْنَ وَاغْلُظْ عَلَيْهِمْ ؕ وَمَاْوٰىهُمْ جَهَنَّمُ ؕ وَبِئْسَ
الْمَصِيْرُ ﴿۷۳﴾ يَحْلِفُوْنَ بِاللّٰهِ مَا قَالُوْا ۗ وَلَقَدْ قَالُوْا كَلِمَةَ الْكُفْرِ وَكَفَرُوْا بَعْدَ
اِسْلَامِهِمْ وَهَمُّوْا بِمَا لَمْ يَنَالُوْا ۚ وَمَا نَقَمُوْۤا اِلَّاۤ اَنْ اَغْنٰىهُمُ اللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗ مِنْ
فَضْلِهٖ ۚ فَاِنْ يَّتُوْبُوْا يَكُ خَيْرًا لَّهُمْ ۚ وَاِنْ يَّتَوَلَّوْا يُعَذِّبْهُمُ اللّٰهُ عَذَابًا اَلِيْمًا ۙ فِي الدُّنْيَا
وَالْاٰخِرَةِ ۚ وَمَا لَهُمْ فِي الْاَرْضِ مِنْ وَّلِيٍّ وَّلَا نَصِيْرٍ ﴿۷۴﴾ وَمِنْهُمْ مَّنْ عٰهَدَ اللّٰهَ لَئِنْ
اٰتٰىنَا مِنْ فَضْلِهٖ لَنَصَّدَّقَنَّ وَلَنَكُوْنَنَّ مِنَ الصّٰلِحِيْنَ ﴿۷۵﴾ فَلَمَّاۤ اٰتٰىهُمْ مِّنْ فَضْلِهٖ
بَخِلُوْا بِهٖ وَتَوَلَّوْا وَّهُمْ مُّعْرِضُوْنَ ﴿۷۶﴾ فَاَعْقَبَهُمْ نِفَاقًا فِيْ قُلُوْبِهِمْ اِلٰى يَوْمِ يَلْقَوْنَهٗ
بِمَاۤ اَخْلَفُوا اللّٰهَ مَا وَعَدُوْهُ وَبِمَا كَانُوْا يَكْذِبُوْنَ ﴿۷۷﴾ اَلَمْ يَعْلَمُوْۤا اَنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ
سِرَّهُمْ وَنَجْوٰىهُمْ وَاَنَّ اللّٰهَ عَلَّامُ الْغُيُوْبِ ۚ﴿۷۸﴾ اَلَّذِيْنَ يَلْمِزُوْنَ الْمُطَّوِّعِيْنَ مِنَ
الْمُؤْمِنِيْنَ فِي الصَّدَقٰتِ وَالَّذِيْنَ لَا يَجِدُوْنَ اِلَّا جُهْدَهُمْ فَيَسْخَرُوْنَ مِنْهُمْ ؕ سَخِرَ
اللّٰهُ مِنْهُمْ ۫ وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ﴿۷۹﴾ اِسْتَغْفِرْ لَهُمْ اَوْ لَا تَسْتَغْفِرْ لَهُمْ ؕ اِنْ تَسْتَغْفِرْ
لَهُمْ سَبْعِيْنَ مَرَّةً فَلَنْ يَّغْفِرَ اللّٰهُ لَهُمْ ؕ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ كَفَرُوْا بِاللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ ؕ وَاللّٰهُ لَا
يَهْدِي الْقَوْمَ الْفٰسِقِيْنَ ﴿۸۰﴾ ۚ

आयत 73

يٰۤاَيُّهَا النَّبِيُّ جَاهِدِ الْكُفَّارَ وَالْمُنٰفِقِيْنَ وَاغْلُظْ عَلَيْهِمْ ؕ

"ऐ नबी! जिहाद कीजिये कुफ़्फ़ार और मुनाफ़िक़ीन से, और इन पर सख़्ती कीजिये।"

यह आयत बिल्कुल इन्हीं अल्फ़ाज़ के साथ सूरतुल तहरीम में भी आई है जो अट्ठाईसवें पारे की आख़री सूरत है। यहाँ क़ाबिले गौर नुक्ता यह है कि इस आयत में जिहाद ब-माअनी क़िताल इस्तेमाल नहीं हुआ। मुनाफ़िक़ीन के साथ आपने कभी जंग नहीं की। लिहाज़ा यहाँ जिहाद से मुराद क़िताल से निचले दरजे की जद्दोजहद (دُوْنَ الْقِتَالِ) है कि ऐ नबी ﷺ! आप मुनाफ़िक़ीन की रेशादवानियों का तोड़ करने के लिये जिहाद करें, इनकी साज़िशों को नाकाम बनाने के लिये जद्दोजहद करें। चुनाँचे बाज़ रिवायात में आता है कि जब रसूल अल्लाह ﷺ गज़वा-ए-तबूक से वापस आ रहे थे तो इसी हवाले से आप ﷺ ने फ़रमाया था: ((رَجَعْنَا مِنَ الْجِهَادِ الْاَصْغَرِ اِلَى الْجِهَادِ الْاَكْبَرِ))[26] यानि हम छोटे जिहाद से बड़े जिहाद की तरफ़ लौट आए हैं। अब इसकी ताबीरें मुख्तलिफ़ की गई हैं कि उस ज़माने की सुपर पावर सल्तनते रोमा के ख़िलाफ़ जिहाद को आप ﷺ ने "जिहादे असगर" फ़रमाया और फ़िर फ़रमाया कि अब "जिहादे अकबर" तुम्हारे सामने है। आम तौर पर इस हदीस की तौजीह इस तरह की गई है कि नफ्स के ख़िलाफ़ जिहाद सबसे बड़ा जिहाद है। जैसा कि एक हदीस में आता है कि एक दफ़ा आप ﷺ से पूछा गया: اَيُّ الْجِهَادِ اَفْضَلُ यानि सबसे अफ़ज़ल जिहाद कौनसा है? तो जवाब में आप ﷺ ने फ़रमाया: ((اَنْ تُجَاهِدَ نَفْسَكَ وَهَوَاكَ فِيْ ذَاتِ اللّٰهِ عَزَّوَجَلَّ))[27] "ये कि तुम जिहाद करो अपने नफ्स और अपनी ख्वाहिशात के ख़िलाफ़ अल्लाह तआला की इताअत में।" लिहाज़ा इसी हदीस की

बुनियाद पर जिहादे अकबर वाली मज़कूरा हदीस की तशरीह इस तरह की गई है कि जिहाद बिलनफ्स दुश्मन के ख़िलाफ़ क़िताल से भी बड़ा जिहाद है। लेकिन मेरे नज़दीक इस हदीस का असल मफ़हूम समझने के लिये इसके मौक़े महल और पसमंज़र के हालात को पेशेनज़र रखना ज़रूरी है। मदीने के अन्दर मुनाफ़िक़ीन दरअसल मुसलमानों के हक़ में मारे आस्तीन थे। अब उनके ख़िलाफ़ रसूल अल्लाह ﷺ को जिहाद का हुक्म दिया जा रहा है, मगर यह मामला इतना आसान और सादा नहीं था। इन मुनाफ़िक़ीन के औस और ख़ज़रज के लोगों के साथ ताल्लुक़ात थे और उनके ख़िलाफ़ अक़दाम करने से अंदरूनी तौर पर कई तरह के मसाइल जन्म ले सकते थे। मगर इस आयत के नुज़ूल के बाद तबूक से वापस आकर आप ﷺ ने मुनाफ़िक़ीन के ख़िलाफ़ इस तरह के कई सख्त अक़दामात किये थे। जैसे आप ﷺ ने मस्जिद ज़रार को गिराने और जलाने का हुक्म दिया, और फिर इस पर अमल भी कराया। यह बहुत बड़ा अक़दाम था। मुनाफ़िक़ीन मस्जिद के तक़द्दुस के नाम पर लोगों को मुशतअल (उग्र) भी कर सकते थे। दरअसल यही वह बड़ा जिहाद था जिसकी तरफ़ मज़कूरा हदीस में इशारा मिलता है, क्योंकि इन हालात में अपनी सफ़ों के अन्दर छुपे हुए दुश्मनों के वार से बचना और उनके ख़िलाफ़ नबर्द आज़मा होना (निपटना) मुसलमानों के लिये वाक़ई बहुत मुश्किल मरहला था।

وَمَأْوٰىهُمْ جَهَنَّمُ ۗ وَبِئْسَ الْمَصِيْرُ

“और इनका ठिकाना जहन्नम है, और वह बहुत बुरी जगह है।”

आयत 74

يَحْلِفُوْنَ بِاللّٰهِ مَا قَالُوْا ۗ

“वह अल्लाह की क़सम खा कर कहते हैं कि उन्होंने यह बात नहीं की।”

यह जिस बात का ज़िक्र है उसकी तफ़सील अट्ठाईसवें पारे की सूरतुल मुनाफ़िक़ीन में आएगी। बहरहाल यहाँ सिर्फ़ इतना जान लेना ज़रूरी है कि तबूक से वापसी के सफ़र पर अब्दुल्लाह बिन अबी के मुँह से किसी नौजवान मुसलमान ने ग़लत बात सुनी तो उसने आकर रसूल अल्लाह ﷺ से उसका ज़िक्र कर दिया। आप ﷺ ने तलब फ़रमा कर बाज़पुर्स की तो वह साफ़ मुकर गया कि इस नौजवान ने ख्वाह मख्वाह फ़ितना उठाने की कोशिश की है।

وَلَقَدْ قَالُوْا كَلِمَةَ الْكُفْرِ

“हालाँकि उन्होंने कहा है कुफ़्र का कलमा”

अब्दुल्लाह बिन अबी के मुकर जाने पर यह आयत नाज़िल हुई। अल्लाह तआला ने उस नौजवान को सच्चा क़रार दिया और उस मुनाफ़िक़ के झूठ का परदा चाक कर दिया।

وَكَفَرُوْا بَعْدَ اِسْلَامِهِمْ وَهَمُّوْا بِمَا لَمْ يَنَالُوْا ۚ

“और वह कुफ़्र कर चुके अपने इस्लाम के बाद, और उन्होंने इरादा किया था उस शय का जो वह हासिल ना कर सके।”

यह जिस वाक़िये की तरफ़ इशारा है वह भी गज़वा-ए-तबूक से वापसी के सफ़र में पेश आया था। पहाड़ी रास्ते में एक मौक़े पर रसूल अल्लाह ﷺ का गुज़र एक ऐसी तंग घाटी से हुआ जहाँ से एक वक़्त में सिर्फ़ एक ऊँट गुज़र सकता था। इस मौक़े पर आप ﷺ काफ़िले से अलैहदा थे और आप ﷺ के साथ सिर्फ़ दो सहाबा हज़रत हुज़ैफ़ा बिन यमान रज़ि. और हज़रत अम्मार बिन यासिर रज़ि. थे। इस तंग जगह पर कुछ मुनाफ़िक़ीन ने रात की तारीकी से फ़ायदा उठाते हुए आप ﷺ पर हमला कर दिया। उन्होंने पहचाने जाने के डर से ढाटे बाँध रखे थे और चाहते थे कि हुज़ूर ﷺ को (नाऊज़ुबिल्लाह) शहीद कर दें। बहरहाल आप ﷺ के जाँनिसार सहाबा रज़ि. ने हमलावारों को मार भगाया और वह अपने नापाक मंसूबे में कामयाब ना हो सके। इस मौक़े पर रसूल अल्लाह ﷺ ने अपने इन दो

सहाबा को हमलावारों में से हर एक के नाम बता दिए और उनके अलावा भी तमाम मुनाफ़िक़ीन के नाम बता दिए। मगर साथ ही आप ﷺ ने इन दोनों हज़रात को ताकीद फ़रमा दी कि वह ये नाम किसी को ना बताएँ और आप ﷺ के इस राज़ को अपने पास ही महफ़ूज़ रखें। इसी वजह से हुज़ैफ़ा बिन यमान रज़ि. सहाबा में "साहिबु सिर्रिन नबिय्यु ﷺ" (नबी ﷺ के राज़दान) के लक़ब से मशहूर हो गए थे।

وَمَا نَقَمُوْٓا اِلَّآ اَنْ اَغْنٰىهُمُ اللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗ مِنْ فَضْلِهٖ

"और ये लोग अपने अनाद का मज़ाहिरा नहीं कर रहे मगर इसी लिये कि अल्लाह और उसके रसूल ने इन्हें गनी कर दिया है अपने फ़ज़ल से।"

यानि अल्लाह तआला के फ़ज़ल और उसके रसूल ﷺ की मेहरबानी से ये लोग माले ग़नीमत और ज़कात व सदक़ात में से बा-फ़रागत हिस्सा पाते रहे।

فَاِنْ يَّتُوْبُوْا يَكُ خَيْرًا لَّهُمْ ۚ

"अब भी अगर ये तौबा कर लें तो इनके लिये बेहतर है।"

وَاِنْ يَّتَوَلَّوْا يُعَذِّبْهُمُ اللّٰهُ عَذَابًا اَلِيْمًا ۙ فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ

"और अगर ये पीठ मोडेंगे तो अल्लाह इन्हें बहुत दर्दनाक अज़ाब देगा दुनिया में भी और आखिरत में भी।"

وَمَا لَهُمْ فِي الْاَرْضِ مِنْ وَّلِيٍّ وَّلَا نَصِيْرٍ ۝

"और पूरी ज़मीन में इनका ना कोई दोस्त होगा और ना कोई मददगार।"

अब वह तीन आयात आ रही हैं जिनका हवाला मेरी तक़ारीर में अक्सर आता रहता है। इनमें मदीने के मुनाफ़िक़ीन की एक ख़ास क़िस्म का तज़किरा है, मगर मुसलमाने पाकिस्तान के लिये इन आयात का मुताअला बतौरे ख़ास मक़ामे इबरत भी है और लम्हा-ए-फिक्रिया भी।

आयत 75

وَمِنْهُمْ مَّنْ عٰهَدَ اللّٰهَ لَىِٕنْ اٰتٰىنَا مِنْ فَضْلِهٖ لَنَصَّدَّقَنَّ وَلَنَكُوْنَنَّ مِنَ الصّٰلِحِيْنَ ۝

"और इनमें वह लोग भी हैं जिन्होंने अल्लाह से अहद किया था कि अगर वह हमें अपने फ़ज़ल से नवाज़ देगा तो हम ख़ूब सदक़ा व खैरात करेंगे और नेक बन जाएँगे।"

आयत 76

فَلَمَّآ اٰتٰىهُمْ مِّنْ فَضْلِهٖ بَخِلُوْا بِهٖ وَتَوَلَّوْا وَّهُمْ مُّعْرِضُوْنَ ۝

"फ़िर जब अल्लाह ने इन्हें नवाज़ दिया अपने फ़ज़ल से (गनी कर दिया) तो इन्होंने उस दौलत के साथ बुख्ल किया और पीठ मोड़ ली और ऐराज़ किया।"

आयत 77

فَاَعْقَبَهُمْ نِفَاقًا فِيْ قُلُوْبِهِمْ

"तो अल्लाह ने सज़ा के तौर पर डाल दिया इनके दिलों में निफ़ाक़"

अल्लाह से वादा करके उससे फिर जाने की दुनिया में ये नक़द सज़ा है कि अल्लाह तआला ऐसे लोगों के दिलों में निफ़ाक़ पैदा फ़रमा देते हैं, और बदक़िस्मती से यही रोग आज मुसलमानाने पाकिस्तान के दिलों में पैदा हो चुका है। गोया पाकिस्तानी क़ौम बहैसियत मजमुई इस सज़ा की मुस्तहिक़ हो चुकी है। मुसलमानाने बर्रेसगीर ने तहरीके पाकिस्तान के दौरान

अल्लाह से एक वादा किया था और यह वादा एक नारा बन कर बच्चे-बच्चे की ज़बान पर आ गया था: "पाकिस्तान का मतलब क्या? ला इलाहा इल्लल्लाह!" गोया दुनिया के नक़्शे पर यह नया मुल्क इस्लाम के नाम पर बना, इस्लाम के लिये बना। इस ज़िमन में हिन्दुस्तान के मुसलमानों ने वोट देकर अपना फ़र्ज़े किफ़ाया अदा कर दिया कि तुम जाकर पाकिस्तान में इस्लाम का निज़ाम क़ायम करो, हम पर जो गुज़रेगी सो गुज़रेगी। मगर मुसलमानाने पाकिस्तान ने इस सिलसिले में अब तक क्या किया है? कहाँ है इस्लाम और कहाँ है ला इलाहा इल्लल्लाह? ये पाकिस्तानी क़ौम की अल्लाह के साथ इज्तमाई बेवफ़ाई और बदअहदी की मिसाल है। इस बदअहदी का नतीजा ये हुआ कि अल्लाह ने तीन क़िस्म के निफ़ाक़ इस क़ौम पर मुसल्लत कर दिये। एक बाहमी निफ़ाक़, जिसके बाइश ये क़ौम अब क़ौम नहीं रही फ़िरक़ों में बट चुकी है और इसमें मुख्तलिफ़ अस्बियतें पैदा हो चुकी हैं। सूबाइयत, मज़हबी फ़िरक़ा वारियत वगैरह ने बाहमी इत्तेहाद पारा-पारा कर दिया है। दूसरे जब यह निफ़ाक़ हमारे दिलों का रोग बना तो इससे शख्सी किरदार और फ़िर क़ौमी किरदार का बेड़ा ग़र्क हो गया। इसके बारे में एक मुत्तफ़िक़ अलैह हदीस मुलाहिज़ा कीजिये। हज़रत अबु हुरैरा रज़ि. रिवायत करते हैं कि रसूल अल्लाह ﷺ ने इरशाद फ़रमाया:

آيَةُ الْمُنَافِقِ ثَلَاثٌ [وَفِيْ رِوَايَةٍ لِمُسْلِمٍ : وَاِنْ صَامَ وَصَلّٰى وَزَعَمَ اَنَّهٗ مُسْلِمٌ] اِذَا حَدَّثَ كَذَبَ ، وَاِذَا وَعَدَ اَخْلَفَ ، وَاِذَا اوؤْتُمِنَ خَانَ

"मुनाफ़िक़ की तीन निशानियाँ हैं [और मुस्लिम की एक रिवायत में ये अल्फ़ाज़ भी हैं: "अगरचे रोज़ा रखता हो, नमाज़ पढ़ता हो और अपने आप को मुसलमान समझता हो।"] (1) जब बोले झूठ बोले (2) जब वादा करे तो ख़िलाफ़ वरज़ी करे (3) जब अमीन बनाया जाए तो ख्यानत करे।"

इस हदीस को कसौटी समझ कर अपनी क़ौम के किरदार को परख लीजिये। जो जितना बड़ा है उतना ही बड़ा झूठा हैं, उतना ही बड़ा वादा ख़िलाफ़ है और उतना ही बड़ा खाइन है (इल्ला माशाअल्लाह!)

तीसरा निफ़ाक़ जो इस क़ौम के हिस्से में आया वह बहुत ही बड़ा है और वह है आइन का निफ़ाक़। आप जानते हैं कि किसी मुल्क की अहम तरीन दस्तावेज़ उसका दस्तूर होता है, जबकि इस मुल्क के आइन को भी मुनाफ़िक़त का पुलिन्दा बना कर रख दिया गया है। हमारे आइन में एक हाथ से इस्लाम दाख़िल किया जाता है और दूसरे हाथ से निकाल लिया जाता है। अल्फ़ाज़ देखो तो इस्लाम ही इस्लाम है, तामील देखो तो इस्लाम कहीं नज़र नहीं आता। ज़रा इन अल्फ़ाज़ को देखें, आइन में कितनी बड़ी बात लिख दी गई है: No ligislation will be done repugnant to the Quran and the Sunnah. यानि क़ुरान व सुन्नत के ख़िलाफ़ कोई क़ानून साज़ी नहीं हो सकती। इन अल्फ़ाज़ पर ग़ौर करें तो मालूम होता है कि सूरतुल हुजरात की पहली आयत का तरजुमा करके दस्तूर में लिख दिया गया है, लेकिन मुल्क और मआशरे के अन्दर इसके अमली पहलु पर नज़र डालें तो क़ुरान व सुन्नत के अहकाम पर अमल होता कहीं भी नज़र नहीं आता। गोया यह अल्फ़ाज़ सिर्फ़ आईनी और क़ानूनी तकाज़ा पूरा करने के लिये लिख दिये गए हैं, इन पर अमल करने का कोई इरादा नहीं है। बस एक इस्लामी नज़रियाती कौन्सिल बना दी गई है जो अपनी सिफारिशात पेश करती रहती है। ये सिफारिशात सालाना रिपोर्टस के तौर पर बाक़ायदगी से पेश होती रहती हैं, मगर इनकी कोई तामील नहीं होती। इस तरह फ़ेडरल शरीअत कोर्ट भी दिखावे का एक इदारा है। बड़े-बड़े उलमा इसके तहत बड़ी-बड़ी तनख्वाहें और मराआत ले रहे हैं, मगर अमली पहलु देखो तो दस्तूरे पाकिस्तान उनके दायरा-ए-अमल से ही खारिज़ है। इसी तरह अदालती क़वानीन, आईली क़वानीन, माली क़वानीन वगैरह सब फ़ेडरल शरीअत कोर्ट के दायरा-ए-इख्तियार से बाहर हैं। गर्ज़ दस्तूर की सतह पर इतनी बड़ी मुनाफ़िक़त शायद पूरी दुनिया में कहीं ना हो। बहरहाल ये है एक हल्की सी झलक पाकिस्तानी क़ौम की उस सज़ा की जो इन्हें वादा खिलाफ़ी के जुर्म के नतीजे में दी गई है।

إِلَىٰ يَوْمِ يَلْقَوْنَهُ

"(और यह निफ़ाक़ अब रहेगा) उस दिन तक जिस दिन ये लोग मुलाक़ात करेंगे उससे"

इस निफ़ाक़ से अब उनकी जान रोज़े क़यामत तक नहीं छुटेगी। ये काँटा उनके दिलों से निकलेगा नहीं।

بِمَآ أَخْلَفُوا اللَّهَ مَا وَعَدُوهُ وَبِمَا كَانُوا يَكْذِبُونَ ﴿٧٧﴾

"बसबब उस वादा खिलाफ़ी के जो इन्होंने अल्लाह से की और बसबब उस झूठ के जो वह बोलते रहे।"

आयत 78

أَلَمْ يَعْلَمُوٓا أَنَّ اللَّهَ يَعْلَمُ سِرَّهُمْ وَنَجْوَىٰهُمْ وَأَنَّ اللَّهَ عَلَّٰمُ الْغُيُوبِ ﴿٧٨﴾

"क्या इन्हें मालूम नहीं है कि अल्लाह जानता है इनके भेदों को और इनकी सरगोशियों को, और यह कि अल्लाह तमाम गैब का जानने वाला है।"

आयत 79

الَّذِينَ يَلْمِزُونَ الْمُطَّوِّعِينَ مِنَ الْمُؤْمِنِينَ فِي الصَّدَقَٰتِ

"जो ताअन करते हैं दिल की खुशी से नेकी करने वाले अहले ईमान पर (उनके) सदक़ात के बारे में"

जब रसूल अल्लाह ﷺ ने तबूक की मुहिम के लिये इन्फ़ाक़ फ़ी सबीलिल्लाह की तरगीब दी तो मुसलमानों की तरफ़ से ईसार और इख्लास के अजीब व ग़रीब मज़ाहिर देखने में आये। अबु अक़ील रज़ि. एक अंसारी सहाबी थे, उनके पास देने को कुछ नहीं था। उन्होंने रात भर एक यहूदी के यहाँ मज़दूरी की और सारी रात कुंवे से पानी निकाल-निकाल कर उसके बाग़ को सैराब करते रहे। सुबह उन्हें मज़दूरी के तौर पर कुछ खजूरें मिलीं। उन्होंने उनमें से आधी खजूरें तो घर में बच्चों के लिये छोड़ दीं और बाक़ी आधी हुज़ूर ﷺ की ख़िदमत में लाकर पेश कर दीं। आप ﷺ उस सहाबी के ख़ुलूस व इख्लास और हुस्ने अमल से बहुत खुश हुए और फ़रमाया कि ये खजूरें सब माल व असबाब पर भारी हैं। लिहाज़ा आप ﷺ की हिदायत के मुताबिक़ उन्हें सामान के पूरे ढेर के ऊपर फ़ैला दिया गया। लेकिन वहाँ जो मुनाफ़िक़ीन थे उन्होंने हज़रत अबु अक़ील रज़ि. का मज़ाक उड़ाया और फ़िक़रे कसे कि जी हाँ, क्या कहने! बहुत बड़ी क़ुरबानी दी है! इन खजूरों के बगैर तो ये मुहिम कामयाब हो ही नहीं सकती थी, वगैरह-वगैरह।

وَالَّذِينَ لَا يَجِدُونَ إِلَّا جُهْدَهُمْ فَيَسْخَرُونَ مِنْهُمْ سَخِرَ اللَّهُ مِنْهُمْ وَلَهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ ﴿٧٩﴾

"और जिनके पास अपनी मेहनत व मशक्क़त के सिवा कुछ है ही नहीं (और वह उसमें से भी ख़र्च करते हैं) तो वह (मुनाफ़िक़ीन) उनका मज़ाक उड़ाते हैं। अल्लाह उनका मज़ाक उड़ाता है, और उनके लिये दर्दनाक अज़ाब है।"

आयत 80

اسْتَغْفِرْ لَهُمْ أَوْ لَا تَسْتَغْفِرْ لَهُمْ إِن تَسْتَغْفِرْ لَهُمْ سَبْعِينَ مَرَّةً فَلَن يَغْفِرَ اللَّهُ لَهُمْ

"(ऐ नबी ﷺ!) आप इनके लिये अस्तगफ़ार करें या इनके लिये अस्तगफ़ार ना करें। अगर आप सत्तर मरतबा भी इनके लिये अस्तगफ़ार करेंगे तब भी अल्लाह इन्हें हरगिज़ माफ़ नहीं फ़रमाएगा।"

यह आयत सूरतुन्निसा की आयत 145 { اِنَّ الْمُنٰفِقِيْنَ فِي الدَّرْكِ الْاَسْفَلِ مِنَ النَّارِ ۚ } के बाद मुनाफ़िक़ीन के हक़ में सख्त तरीन आयत है।

ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ كَفَرُوْا بِاللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ ۭ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْفٰسِقِيْنَ ۝۸۰

"ये इसलिये कि ये लोग अल्लाह और उसके रसूल के साथ कुफ़्र कर चुके हैं, और अल्लाह ऐसे फ़ासिक़ों को हिदायत नहीं देता।"

आयात 81 से 89 तक

فَرِحَ الْمُخَلَّفُوْنَ بِمَقْعَدِهِمْ خِلٰفَ رَسُوْلِ اللّٰهِ وَكَرِهُوْٓا اَنْ يُّجَاهِدُوْا بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَقَالُوْا لَا تَنْفِرُوْا فِي الْحَرِّ ۭ قُلْ نَارُ جَهَنَّمَ اَشَدُّ حَرًّا ۭ لَوْ كَانُوْا يَفْقَهُوْنَ ۝۸۱ فَلْيَضْحَكُوْا قَلِيْلًا وَّلْيَبْكُوْا كَثِيْرًا ۚ جَزَاۗءًۢ بِمَا كَانُوْا يَكْسِبُوْنَ ۝۸۲ فَاِنْ رَّجَعَكَ اللّٰهُ اِلٰى طَاۗىِٕفَةٍ مِّنْهُمْ فَاسْتَاْذَنُوْكَ لِلْخُرُوْجِ فَقُلْ لَّنْ تَخْرُجُوْا مَعِيَ اَبَدًا وَّلَنْ تُقَاتِلُوْا مَعِيَ عَدُوًّا ۭ اِنَّكُمْ رَضِيْتُمْ بِالْقُعُوْدِ اَوَّلَ مَرَّةٍ فَاقْعُدُوْا مَعَ الْخٰلِفِيْنَ ۝۸۳ وَلَا تُصَلِّ عَلٰٓى اَحَدٍ مِّنْهُمْ مَّاتَ اَبَدًا وَّلَا تَقُمْ عَلٰي قَبْرِهٖ ۭ اِنَّهُمْ كَفَرُوْا بِاللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ وَمَاتُوْا وَهُمْ فٰسِقُوْنَ ۝۸۴ وَلَا تُعْجِبْكَ اَمْوَالُهُمْ وَاَوْلَادُهُمْ ۭ اِنَّمَا يُرِيْدُ اللّٰهُ اَنْ يُّعَذِّبَهُمْ بِهَا فِي الدُّنْيَا وَتَزْهَقَ اَنْفُسُهُمْ وَهُمْ كٰفِرُوْنَ ۝۸۵ وَاِذَآ اُنْزِلَتْ سُوْرَةٌ اَنْ اٰمِنُوْا بِاللّٰهِ وَجَاهِدُوْا مَعَ رَسُوْلِهِ اسْتَاْذَنَكَ اُولُوا الطَّوْلِ مِنْهُمْ وَقَالُوْا ذَرْنَا نَكُنْ مَّعَ الْقٰعِدِيْنَ ۝۸۶ رَضُوْا بِاَنْ يَّكُوْنُوْا مَعَ الْخَوَالِفِ وَطُبِعَ عَلٰي قُلُوْبِهِمْ فَهُمْ لَا يَفْقَهُوْنَ ۝۸۷ لٰكِنِ الرَّسُوْلُ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مَعَهٗ جٰهَدُوْا بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ ۚ وَاُولٰۗىِٕكَ لَهُمُ الْخَيْرٰتُ ۭ وَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْمُفْلِحُوْنَ ۝۸۸ اَعَدَّ اللّٰهُ لَهُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا ۭ ذٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيْمُ ۝۸۹

आयत 81

فَرِحَ الْمُخَلَّفُوْنَ بِمَقْعَدِهِمْ خِلٰفَ رَسُوْلِ اللّٰهِ وَكَرِهُوْٓا اَنْ يُّجَاهِدُوْا بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ

"बहुत ख़ुश हो गए पीछे रह जाने वाले अपने बैठे रहने पर अल्लाह के रसूल के (जाने के) बाद, और उन्होंने नापसंद किया कि वह जिहाद करते अपनी जानों और मालों के साथ अल्लाह की राह में"

وَقَالُوْا لَا تَنْفِرُوْا فِي الْحَرِّ ۭ

"और (दूसरों से भी) कहने लगे कि इस गरमी में मत निकलो।"

ये लोग ख़ुद भी अल्लाह के रस्ते में ना निकले और दूसरों को भी रोकने की कोशिश में रहे कि हम तो रुख्सत ले आए हैं, तुम भी होश के नाख़ून लो, इस क़दर शदीद गरमी में सफ़र के लिये मत निकलो।

قُلْ نَارُ جَهَنَّمَ اَشَدُّ حَرًّا ۭ لَوْ كَانُوْا يَفْقَهُوْنَ ۝۸۱

"(ऐ नबी ﷺ! इनसे) कह दीजिये जहन्नम की आग इससे कहीं ज़्यादा गरम है, काश इन लोगों को फ़हम हासिल होता।"

आयत 82

فَلْيَضْحَكُوْا قَلِيْلًا وَّلْيَبْكُوْا كَثِيْرًا ۚ جَزَآءًۢ بِمَا كَانُوْا يَكْسِبُوْنَ ﴿٨٢﴾

"तो इन्हें चाहिये कि हँसे कम और रोएँ ज़्यादा, बदला उसका जो कमाई इन्होंने की है।"

आयत 83

فَاِنْ رَّجَعَكَ اللّٰهُ اِلٰى طَآئِفَةٍ مِّنْهُمْ

"पस (ऐ नबी ﷺ) अगर अल्लाह आपको लौटा कर ले जाए इनके किसी गिरोह के पास"

मज़मून से ज़ाहिर हो रहा है कि ये आयत मक़ामे तबूक पर नाज़िल हुई है। सूरत के इस दूसरे हिस्से के पहले चार रुकुओं (छठे रुकूअ से लेकर नौवें रुकूअ तक) के बारे में तो यक़ीन से कहा जा सकता है कि वह गज़वा-ए-तबूक पर रवानगी से क़ब्ल नाज़िल हुए थे। इनके बाद की आयात मुख्तलिफ़ मौक़ों पर नाज़िल हुईं, कुछ जाते हुए रास्ते में, कुछ तबूक में क़याम के दौरान और कुछ वापस आते हुए रास्ते में।

فَاسْتَاْذَنُوْكَ لِلْخُرُوْجِ

"फ़िर वह आपसे इजाज़त माँगे (आपके साथ) निकलने के लिये"

यानि किसी मुहिम पर, किसी और दुश्मन के ख़िलाफ़ आप ﷺ के साथ जिहाद में शरीक होना चाहें:

فَقُلْ لَّنْ تَخْرُجُوْا مَعِيَ اَبَدًا

"तो कह दीजियेगा कि अब तुम मेरे साथ कभी नही निकलोगे"

गज़वा-ए-तबूक की मुहिम में तुम्हारा आख़री इम्तिहान हो चुका है और उसमें तुम लोग नाकाम हो चुके हो।

وَّلَنْ تُقَاتِلُوْا مَعِيَ عَدُوًّا ۭ اِنَّكُمْ رَضِيْتُمْ بِالْقُعُوْدِ اَوَّلَ مَرَّةٍ

"और अब मेरे साथ होकर तुम किसी दुश्मन के साथ जंग नहीं करोगे। तुम पहली मरतबा राज़ी हो गए थे बैठे रहने पर"

जब जिहाद के लिये नफ़ीर आम हुई और सब पर निकलना फ़र्ज़ क़रार पाया तो तुम अपने घरों में बैठे रहने पर राज़ी हो गए।

فَاقْعُدُوْا مَعَ الْخٰلِفِيْنَ ﴿٨٣﴾

"तो (अब हमेशा के लिये) बैठे रहो पीछे रहने वालों के साथ।"

आयत 84

وَلَا تُصَلِّ عَلٰٓى اَحَدٍ مِّنْهُمْ مَّاتَ اَبَدًا وَّلَا تَقُمْ عَلٰي قَبْرِهٖ ۭ

"और (ऐ नबी ﷺ) इनमें से कोई मर जाए तो उसकी नमाज़े जनाज़ा कभी भी अदा ना करें और उसकी क़ब्र पर भी खड़े ना हों।"

यह गोया अब उनकी रुसवाई का सामान हो रहा है। अब तक तो मुनाफ़िक़त पर परदे पड़े हुए थे मगर इस आयत के नुज़ूल के बाद रसूल अल्लाह ﷺ जब किसी की नमाज़े जनाज़ा पढ़ने से इन्कार फ़रमाते थे तो सबको मालूम हो जाता था कि वह मुनाफ़िक़ मरा है।

اِنَّهُمْ كَفَرُوْا بِاللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ وَمَاتُوْا وَهُمْ فٰسِقُوْنَ ﴿٨٤﴾

"यक़ीनन उन्होंने कुफ़्र किया है अल्लाह और उसके रसूल के साथ और वह मरे हैं इसी हाल में कि वह नाफ़रमान थे।"

आयत 85

وَلَا تُعۡجِبۡكَ اَمۡوَالُهُمۡ وَاَوۡلَادُهُمۡ ؕ

"और आपको पसन्द ना आये उनके अमवाल और उनकी औलाद।"

यानि आप इनके माल और औलाद को वक़्अत मत दीजिये (माल और औलाद से उम्मीद मत रखिये)। ये आयत इसी सूरत में 55 नंबर पर मामूली फ़र्क़ के साथ पहले भी आ चुकी है।

اِنَّمَا يُرِيۡدُ اللّٰهُ اَنۡ يُّعَذِّبَهُمۡ بِهَا فِى الدُّنۡيَا وَتَزۡهَقَ اَنۡفُسُهُمۡ وَهُمۡ كٰفِرُوۡنَ ۝۸۵

"अल्लाह तो यही चाहता है कि इन्हें अज़ाब दे इन्हीं चीज़ों के ज़रिये से दुनिया में और इनकी जानें निकलें इसी हालत-ए-कुफ़्र में।"

आयत 86

وَاِذَاۤ اُنۡزِلَتۡ سُوۡرَةٌ اَنۡ اٰمِنُوۡا بِاللّٰهِ وَجَاهِدُوۡا مَعَ رَسُوۡلِهِ اسۡتَاۡذَنَكَ اُولُوا الطَّوۡلِ مِنۡهُمۡ

"और जब कोई सूरत नाज़िल होती है कि ईमान लाओ अल्लाह पर और जिहाद करो उसके रसूल के साथ मिलकर तो रुख्सत माँगते हैं आपसे म-क़ुदरत वाले भी"

وَقَالُوۡا ذَرۡنَا نَكُنۡ مَّعَ الۡقٰعِدِيۡنَ ۝۸۶

"और कहते हैं कि हमें छोड़ दीजिये कि हम बैठे रहने वालों में शामिल हो जाएँ।"

आयत 87

رَضُوۡا بِاَنۡ يَّكُوۡنُوۡا مَعَ الۡخَوَالِفِ

"वह इस पर राज़ी हो गए कि पीछे रहने वाली औरतों में शामिल हो जाएँ"

इस अंदाज़े बयान में उन पर गहरा तंज़ है। यानि जंग करना मर्दों का काम है जबकि ख्वातीन और बच्चे ऐसे मौक़े पर पीछे घरों में रह जाते हैं। चुनाँचे अब जब तमाम मर्दों पर लाज़िम है कि वह गज़वा-ए-तबूक के लिये निकलें, तो ये मुनाफ़िक़ीन तरह-तरह के बहानो से रुख्सत चाहते हैं। गोया इन्होंने पीछे घरों में रह जाने वाली औरतों का किरदार अपने लिये पसंद कर लिया है।

وَطُبِعَ عَلٰى قُلُوۡبِهِمۡ فَهُمۡ لَا يَفۡقَهُوۡنَ ۝۸۷

"और उनके दिलों पर मुहर कर दी गई है, पस अब वह समझ नहीं सकते।"

आयत 88

لٰكِنِ الرَّسُوۡلُ وَالَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا مَعَهٗ جٰهَدُوۡا بِاَمۡوَالِهِمۡ وَاَنۡفُسِهِمۡ ؕ

"लेकिन (इसके बरअक्स) रसूल और वह लोग जो आपके साथ ईमान लाए, उन्होंने जिहाद किया अल्लाह की राह में अपने अमवाल से भी और अपनी जानों से भी।"

وَاُولٰٓئِكَ لَهُمُ الۡخَيۡرٰتُ ۖ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الۡمُفۡلِحُوۡنَ ۝۸۸

"और यही वह लोग हैं जिनके लिये भलाईयाँ हैं, और यही लोग हैं फ़लाह पाने वाले।"

फ़लाह महज़ एक लफ्ज़ ही नहीं बल्कि कुरान की एक जामेअ इस्तलाह (term) है। इस इस्तलाह पर तफ़सीली गुफ़्तगू इंशाअल्लाह सूरतुल मोमिनून के आग़ाज़ में होगी।

الْفٰسِقِيْنَ ۝٩٦ اَلْاَعْرَابُ اَشَدُّ كُفْرًا وَّنِفَاقًا وَّاَجْدَرُ اَلَّا يَعْلَمُوْا حُدُوْدَ مَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ عَلٰى رَسُوْلِهٖ ؕ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ۝٩٧ وَمِنَ الْاَعْرَابِ مَنْ يَّتَّخِذُ مَا يُنْفِقُ مَغْرَمًا وَّيَتَرَبَّصُ بِكُمُ الدَّوَآئِرَ ؕ عَلَيْهِمْ دَآئِرَةُ السَّوْءِ ؕ وَاللّٰهُ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ۝٩٨ وَمِنَ الْاَعْرَابِ مَنْ يُّؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَيَتَّخِذُ مَا يُنْفِقُ قُرُبٰتٍ عِنْدَ اللّٰهِ وَصَلَوٰتِ الرَّسُوْلِ ؕ اَلَآ اِنَّهَا قُرْبَةٌ لَّهُمْ ؕ سَيُدْخِلُهُمُ اللّٰهُ فِيْ رَحْمَتِهٖ ؕ اِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝

आयत 89

اَعَدَّ اللّٰهُ لَهُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا ؕ ذٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيْمُ ۝٨٩

"अल्लाह ने इनके लिये बाग़ात तैयार कर रखे हैं जिनके दामन में (या जिनके नीचे) नदियाँ बहती होंगी, जिनमें वह हमेशा-हमेश रहेंगे। यही है बहुत बड़ी कामयाबी।"

आयात 90 से 99 तक

وَجَآءَ الْمُعَذِّرُوْنَ مِنَ الْاَعْرَابِ لِيُؤْذَنَ لَهُمْ وَقَعَدَ الَّذِيْنَ كَذَبُوا اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ ؕ سَيُصِيْبُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۝٩٠ لَيْسَ عَلَى الضُّعَفَآءِ وَلَا عَلَى الْمَرْضٰى وَلَا عَلَى الَّذِيْنَ لَا يَجِدُوْنَ مَا يُنْفِقُوْنَ حَرَجٌ اِذَا نَصَحُوْا لِلّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ ؕ مَا عَلَى الْمُحْسِنِيْنَ مِنْ سَبِيْلٍ ؕ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝٩١ وَّلَا عَلَى الَّذِيْنَ اِذَا مَآ اَتَوْكَ لِتَحْمِلَهُمْ قُلْتَ لَآ اَجِدُ مَآ اَحْمِلُكُمْ عَلَيْهِ ۖ تَوَلَّوْا وَّاَعْيُنُهُمْ تَفِيْضُ مِنَ الدَّمْعِ حَزَنًا اَلَّا يَجِدُوْا مَا يُنْفِقُوْنَ ۝٩٢ اِنَّمَا السَّبِيْلُ عَلَى الَّذِيْنَ يَسْتَاْذِنُوْنَكَ وَهُمْ اَغْنِيَآءُ ۚ رَضُوْا بِاَنْ يَّكُوْنُوْا مَعَ الْخَوَالِفِ ۙ وَطَبَعَ اللّٰهُ عَلٰى قُلُوْبِهِمْ فَهُمْ لَا يَعْلَمُوْنَ ۝٩٣ يَعْتَذِرُوْنَ اِلَيْكُمْ اِذَا رَجَعْتُمْ اِلَيْهِمْ ؕ قُلْ لَّا تَعْتَذِرُوْا لَنْ نُّؤْمِنَ لَكُمْ قَدْ نَبَّاَنَا اللّٰهُ مِنْ اَخْبَارِكُمْ ؕ وَسَيَرَى اللّٰهُ عَمَلَكُمْ وَرَسُوْلُهٗ ثُمَّ تُرَدُّوْنَ اِلٰى عٰلِمِ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُوْنَ ۝٩٤ سَيَحْلِفُوْنَ بِاللّٰهِ لَكُمْ اِذَا انْقَلَبْتُمْ اِلَيْهِمْ لِتُعْرِضُوْا عَنْهُمْ ؕ فَاَعْرِضُوْا عَنْهُمْ ؕ اِنَّهُمْ رِجْسٌ ۖ وَّمَاْوٰىهُمْ جَهَنَّمُ ۚ جَزَآءًۢ بِمَا كَانُوْا يَكْسِبُوْنَ ۝٩٥ يَحْلِفُوْنَ لَكُمْ لِتَرْضَوْا عَنْهُمْ ۚ فَاِنْ تَرْضَوْا عَنْهُمْ فَاِنَّ اللّٰهَ لَا يَرْضٰى عَنِ الْقَوْمِ

आयत 90

وَجَآءَ الْمُعَذِّرُوْنَ مِنَ الْاَعْرَابِ لِيُؤْذَنَ لَهُمْ

"और आए आपके पास बहाने बनाने वाले बद्दू भी कि उनको रुख़सत दे दी जाए"

'आराब' जमा है 'अराबी' की यानि बद्दू, देहाती, बादया नशीन लोग। जिहाद के लिये इस नफ़ीरे आम का इतलाक़ मदीने के ऐतराफ़ व जवानिब की आबादियों में बसने वाले मुसलमानों पर भी होता था। अब उनका ज़िक्र हो रहा है कि उनमें से भी लोग आ-आ कर बहाने बनाने लगे कि उन्हें इस मुहिम पर जाने से माफ़ रखा जाए।

وَقَعَدَ الَّذِيْنَ كَذَبُوا اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ

"और बैठे रहे वो लोग जिन्होंने झूठ कहा था अल्लाह से और उसके रसूल से।"

उन्होंने जो वादे किये थे वह झूठे निकले या जो उज़्र (बहाने) वह लोग रुख़सत के लिये पेश कर रहे थे वह सब बे-बुनियाद थे।

"अनक़रीब दर्दनाक अज़ाब पहुँचेगा उन लोगों को जो इनमें से कुफ़्र पर अड़े रहेंगे।"

سَيُصِيبُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۝٩٠

आयत 91

"कुछ गुनाह (और इल्ज़ाम) नहीं ज़ईफों पर, ना बीमारों पर, और ना ही उन लोगों पर जिनके पास खर्च करने के लिये कुछ नहीं"

لَيْسَ عَلَى الضُّعَفَآءِ وَلَا عَلَى الْمَرْضٰى وَلَا عَلَى الَّذِيْنَ لَا يَجِدُوْنَ مَا يُنْفِقُوْنَ حَرَجٌ

आख़िर इतना तवील सफ़र करने के लिये ज़रूरी था कि आदमी तंदरुस्त व तवाना हो, उसके पास सवारी का इंतेज़ाम हो, रास्ते में खाने-पीने और दूसरी ज़रूरियात के लिये सामान मुहैय्या हो, लेकिन अगर कोई शख्स ज़ईफ़ है, बीमार है, या इस क़दर नादार है कि सफ़र के अखराजात के लिये उसके पास कुछ भी नहीं तो अल्लाह की नज़र में वह वाक़िअतन मजबूर व माज़ूर है। लिहाज़ा ऐसे लोगों से कोई मुआखज़ा नहीं। उनको इस बात का कोई इल्ज़ाम नहीं दिया जा सकता।

"जबकि वह अल्लाह और उसके रसूल के साथ मुख़लिस हों।"

اِذَا نَصَحُوْا لِلّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ

"ऐसे मोहसिनीन पर कोई इल्ज़ाम नहीं, और अल्लाह ग़फ़ूर और रहीम है।""

مَا عَلَى الْمُحْسِنِيْنَ مِنْ سَبِيْلٍ ۭ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝٩١

यानि मंदरजा बाला (ऊपर लिखी हुई) वजूहात में से किसी वजह से कोई शख्स वाक़ई माज़ूर है मगर सच्चा और पक्का मोमिन है, खुलूसे दिल से अल्लाह और उसके रसूल का वफ़ादार है, उसका दीन दरजा-ए-अहसान तक पहुँचा हुआ है, तो ऐसे साहिबे ईमान और मोहसिन लोगों पर कोई मलामत नहीं।

आयत 92

"और ना ही उन पर (कोई इल्ज़ाम है) जो आए आपके पास कि आप उनके लिये सवारी का इंतेज़ाम कर दें तो आपने फ़रमाया मेरे पास भी कोई चीज़ नहीं जिस पर मैं तुम लोगों को सवार कर सकूँ"

وَّلَا عَلَى الَّذِيْنَ اِذَا مَآ اَتَوْكَ لِتَحْمِلَهُمْ قُلْتَ لَآ اَجِدُ مَآ اَحْمِلُكُمْ عَلَيْهِ

"(तो मजबूरन) वह लौट गए और उनकी आँखों से आँसू जारी थे, इस रंज से कि उनके पास कुछ नहीं जिसे वह ख़र्च कर सकें।"

تَوَلَّوْا وَّاَعْيُنُهُمْ تَفِيْضُ مِنَ الدَّمْعِ حَزَنًا اَلَّا يَجِدُوْا مَا يُنْفِقُوْنَ ۝٩٢

यानि वह लोग जो दिलो-जान से चाहते थे कि इस मुहिम में शरीक हों, मगर वसाइल की कमी की वजह से शिरकत नहीं कर पा रहे थे, अपनी इस महरूमी पर वह वाक़िअतन सदमे और रंजो-गम से हलकान हो रहे थे। एक तरफ़ ऐसे मोमिनीन सादिक़ीन थे और दूसरी तरफ़ वह साहिबे हैसियत (اُولُوا الطَّوْلِ) लोग जिनके पास सब कुछ मौजूद था, वसाइल व ज़राए की कमी नहीं थी, तंदरुस्त व तवाना थे, लेकिन इस सब कुछ के बावजूद वह अल्लाह की राह में निकलने को तैयार नहीं थे।

आयत 93

إِنَّمَا السَّبِيلُ عَلَى الَّذِينَ يَسْتَأْذِنُونَكَ وَهُمْ أَغْنِيَاءُ

"इल्ज़ाम तो उन लोगों पर है जो आपसे रुख्सत माँगते हैं जबकि वह गनी (मालदार) हैं।"

رَضُوا بِأَن يَكُونُوا مَعَ الْخَوَالِفِ

"वह राज़ी हो गए इस पर कि हो जाएँ पीछे रहने वाली औरतों के साथ"

وَطَبَعَ اللَّهُ عَلَىٰ قُلُوبِهِمْ فَهُمْ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٩٣﴾

"और अल्लाह ने उनके दिलों पर मोहर कर दी है, पस वह सही इल्म से बे-बहरा (unbelievable) हो चुके हैं।"

आयत 94

يَعْتَذِرُونَ إِلَيْكُمْ إِذَا رَجَعْتُمْ إِلَيْهِمْ

"बहाने बनाएँगे वह तुम्हारे पास आकर जब तुम लोग उनके पास लौट कर जाओगे।"

يَعْتَذِرُوْنَ चूँकि फ़अल मुज़ारअ है इसलिये इसका तरजुमा हाल (present) में भी हो सकता है और मुस्तक़बिल (future) में भी। अगर तो ये आयात तबूक से वापसी के सफ़र के दौरान नाज़िल हुई हैं तो तरजुमा वह होगा जो ऊपर किया गया है, लेकिन अगर इनका नुज़ूल रसूल अल्लाह ﷺ के मदीने तशरीफ़ लाने के बाद हुआ है तो तरजुमा यूँ होगा: "बहाने बना रहे हैं वह तुम्हारे पास आकर जब तुम लोग उनके पास लौट कर आ गए हो।"

قُلْ لَّا تَعْتَذِرُوا لَن نُّؤْمِنَ لَكُمْ قَدْ نَبَّأَنَا اللَّهُ مِنْ أَخْبَارِكُمْ

"आप कह दीजिये (या कह दीजियेगा) कि बहाने मत बनाओ, हम तुम्हारी बात नहीं मानेंगे, अल्लाह ने हमें पूरी तरह मुत्तलाअ कर दिया है तुम्हारी खबरों से।"

मुहिम पर जाने से क़ब्ल तो हुज़ूर ﷺ अपनी तबई शराफ़त और मुरव्वत के बाइस मुनाफ़िक़ीन के झूठे बहानों पर भी सकूत फ़रमाते रहे थे, लेकिन अब चूँकि ब-ज़रिया-ए-वही उनके झूठ के सारे परदे चाक कर दिए गए थे इसलिये फ़रमाया जा रहा है कि ऐ नबी ﷺ! अब आप डंके की चोट उनसे कह दीजिये कि अब हम तुम्हारी किसी बात पर यक़ीन नहीं करेंगे, क्योंकि अब अल्लाह तआला ने तुम्हारी बातिनी कैफ़ियात से हमें मुत्तलाअ कर दिया है।

وَسَيَرَى اللَّهُ عَمَلَكُمْ وَرَسُولُهُ

"अब अल्लाह और उसका रसूल तुम्हारे अमल को देखेंगे"

यानि आईन्दा तुम्हारे तर्ज़े अमल और रवैय्ये (attitude) का जायज़ा लिया जाएगा।

ثُمَّ تُرَدُّونَ إِلَىٰ عَالِمِ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ فَيُنَبِّئُكُم بِمَا كُنتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿٩٤﴾

"फ़िर तुम्हें लौटा दिया जाएगा उस (अल्लाह) की तरफ़ जो गायब और हाज़िर का जानने वाला है, फ़िर वह तुम्हें बता देगा जो कुछ तुम करते रहे थे।"

आयत 95

سَيَحْلِفُوْنَ بِاللّٰهِ لَكُمْ اِذَا انْقَلَبْتُمْ اِلَيْهِمْ لِتُعْرِضُوْا عَنْهُمْ ؕ

"अभी ये तुम्हारे सामने अल्लाह की क़समें खायेंगे (या खा रहे हैं) जबकि तुम लोग उनकी तरफ़ लौट कर जाओगे (या आ गए हो) ताकि आप उनसे चश्म पोशी बरतें।"

فَاَعْرِضُوْا عَنْهُمْ ؕ اِنَّهُمْ رِجْسٌ وَّمَاْوٰىهُمْ جَهَنَّمُ ۚ جَزَآءًۢ بِمَا كَانُوْا يَكْسِبُوْنَ ۝۹۵

"तो (ठीक है) आप उनसे ऐराज़ बरतें। ये नापाक लोग हैं और इनका ठिकाना आग़ है, बदला उसका जो कमाई ये करते रहे हैं।"

आयत 96

يَحْلِفُوْنَ لَكُمْ لِتَرْضَوْا عَنْهُمْ ۚ

"ये क़समें खायेंगे (या खा रहे हैं, ऐ मुसलमानों!) तुम्हारे सामने ताकि तुम इनसे राज़ी हो जाओ।"

अब ये उन मुनाफ़िक़ीन की दुनियादारी के लिहाज़ से मजबूरी थी। एक मआशरे के अन्दर सबका इकठ्ठे रहना-सहना था। औस और ख़ज़रज के अन्दर उनकी रिश्तेदारियाँ थीं। ऐसे माहौल में वह समझते थे कि अगर मुसलमानों के दिल उनकी तरफ़ से साफ़ ना हुए तो वह उस मआशरे के अन्दर एक तरह से अछूत बन कर रह जायेंगे। इसलिये वह मुसलमानों के अन्दर अपना ऐतमाद फिर से बहाल करने के लिये हर तरह से दौड़-धूप कर रहे थे, मुसलमानों से मुलाक़ातें करते थे, उनको अपनी मजबूरियाँ बताते थे और उनके सामने क़समें खा-खा कर अपने इख्लास का यक़ीन दिलाने की कोशिश करते थे।

فَاِنْ تَرْضَوْا عَنْهُمْ فَاِنَّ اللّٰهَ لَا يَرْضٰى عَنِ الْقَوْمِ الْفٰسِقِيْنَ ۝۹۶

"तो अगर तुम इनसे राज़ी हो भी गए तो अल्लाह इन नाफ़रमानों से राज़ी होने वाला नहीं है।"

आयत 97

اَلْاَعْرَابُ اَشَدُّ كُفْرًا وَّنِفَاقًا وَّاَجْدَرُ اَلَّا يَعْلَمُوْا حُدُوْدَ مَاۤ اَنْزَلَ اللّٰهُ عَلٰى رَسُوْلِهٖ ؕ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ۝۹۷

"ये बद्दू लोग कुफ़्र व निफ़ाक़ में ज़्यादा सख्त हैं और ज़्यादा इस लायक़ हैं कि नावाक़िफ़ हों उस चीज़ की हदूद से जो अल्लाह ने अपने रसूल पर नाज़िल फ़रमाई है। और अल्लाह सब कुछ जानने वाला, कमाल हिकमत वाला है।"

यानि अहले मदीना तो मुसलसल रसूल अल्लाह ﷺ की सोहबत से फैज़याब हो रहे थे, आप ﷺ से जुमा के खुतबात सुनते थे और आप ﷺ की नसीहत का एक सिलसिला शबो-रोज़ उनके दरमियान चलता रहता था। मगर इन बादियानशीन लोगों को तालीम व तअल्लम के ऐसे मौक़े मयस्सर नहीं थे। लिहाज़ फ़ितरी और मन्तक़ी तौर पर कुफ़्र व शिर्क और निफ़ाक़ की शिद्दत इन लोगों में निसबतन ज़्यादा थी।

आयत 98

وَمِنَ الْاَعْرَابِ مَنْ يَّتَّخِذُ مَا يُنْفِقُ مَغْرَمًا

"और इन बद्दुओं में ऐसे लोग भी हैं कि जो कुछ उन्हें ख़र्च करना पड़ता है उसे वह तावान समझते हैं"

यानि ज़कात, उश्र वगैरह की अदायगी जो इस्लामी निज़ामे हुकूमत के तहत उन पर आयद हुई है ये लोग उसको तावान समझते हुए बड़ी नागवारी से अदा करते हैं, इसलिये कि इससे पहले उस इलाक़े में ना तो

कोई ऐसा निज़ाम था और ना ही ये लोग महसुलात वगैरह अदा करने के आदी थे।

وَّيَتَرَبَّصُ بِكُمُ الدَّوَآئِرَ ؕ

"और वह मुन्तज़िर हैं तुम लोगों पर किसी गर्दिशे ज़माने के।"

ये लोग बड़ी बेसब्री से इंतेज़ार कर रहे हैं कि गर्दिशे ज़माने के बाइस मुसलमानों के ख़िलाफ़ कुछ ऐसे हालात पैदा हो जाएँ जिनसे मदीने की यह इस्लामी हुकूमत ख़त्म हो जाए और वह इन पाबंदियों से आज़ाद हो जाएँ।

عَلَيۡهِمۡ دَآئِرَةُ السَّوۡءِ ؕ وَاللّٰهُ سَمِيۡعٌ عَلِيۡمٌ ۝۹۸

"(असल में) बुरी गर्दिश खुद इनके ऊपर मुसल्लत है। और अल्लाह सब कुछ सुनने वाला, जानने वाला है।"

इनकी मुनाफ़िक़त जो इनके दिलों का रोग बन चुकी है, वही असल में बुराई है जो इन पर मुसल्लत है।

आयत 99

وَمِنَ الۡاَعۡرَابِ مَنۡ يُّؤۡمِنُ بِاللّٰهِ وَالۡيَوۡمِ الۡاٰخِرِ وَيَتَّخِذُ مَا يُنۡفِقُ قُرُبٰتٍ عِنۡدَ اللّٰهِ وَصَلَوٰتِ الرَّسُوۡلِ ؕ

"और इन बद्दुओं में वह लोग भी हैं जो ईमान रखते हैं अल्लाह पर और यौमे आख़िरत पर, और जो वह ख़र्च करते हैं (अल्लाह की राह में) उसको समझते हैं अल्लाह के क़ुर्ब और रसूल की दुआओं का ज़रिया।"

यानि ये बादियानशीन लोग सबके सब ही कुफ़्र और निफ़ाक़ पर कारबंद और इन्फ़ाक़ फ़ी सबीलिल्लाह को तावान समझने वाले नहीं हैं, बल्कि इनमें सच्चे मोमिन भी हैं, जो ना सिर्फ़ अल्लाह के रास्ते में शौक़ से खर्च करते हैं बल्कि इस इन्फ़ाक़ को तक़र्रुब इललल्लाह का ज़रिया समझते हैं। इन्हें यक़ीन है कि दीन के लिये माल ख़र्च करने से अल्लाह के रसूल की दुआएँ भी उनके शामिल हाल हो जाएँगी।

اَلَاۤ اِنَّهَا قُرۡبَةٌ لَّهُمۡ ؕ سَيُدۡخِلُهُمُ اللّٰهُ فِىۡ رَحۡمَتِهٖ ؕ اِنَّ اللّٰهَ غَفُوۡرٌ رَّحِيۡمٌ ۝

"आगाह हो जाओ, यह (उनका इन्फ़ाक़) वाक़िअतन उनके लिये बाइसे तक़र्रुब है, अनक़रीब अल्लाह उन्हें अपनी रहमत में दाख़िल करेगा। यक़ीनन अल्लाह माफ़ फरमाने वाला, रहम फ़रमाने वाला है।"

आयात 100 से 110 तक

وَالسّٰبِقُوۡنَ الۡاَوَّلُوۡنَ مِنَ الۡمُهٰجِرِيۡنَ وَالۡاَنۡصَارِ وَالَّذِيۡنَ اتَّبَعُوۡهُمۡ بِاِحۡسَانٍ ۙ رَّضِىَ اللّٰهُ عَنۡهُمۡ وَرَضُوۡا عَنۡهُ وَاَعَدَّ لَهُمۡ جَنّٰتٍ تَجۡرِىۡ تَحۡتَهَا الۡاَنۡهٰرُ خٰلِدِيۡنَ فِيۡهَاۤ اَبَدًا ؕ ذٰلِكَ الۡفَوۡزُ الۡعَظِيۡمُ ۝۱۰۰ وَمِمَّنۡ حَوۡلَكُمۡ مِّنَ الۡاَعۡرَابِ مُنٰفِقُوۡنَ ۛؕ وَمِنۡ اَهۡلِ الۡمَدِيۡنَةِ ۛؔ مَرَدُوۡا عَلَى النِّفَاقِ ۟ لَا تَعۡلَمُهُمۡ ؕ نَحۡنُ نَعۡلَمُهُمۡ ؕ سَنُعَذِّبُهُمۡ مَّرَّتَيۡنِ ثُمَّ يُرَدُّوۡنَ اِلٰى عَذَابٍ عَظِيۡمٍ ۝۱۰۱ۚ وَاٰخَرُوۡنَ اعۡتَرَفُوۡا بِذُنُوۡبِهِمۡ خَلَطُوۡا عَمَلًا صَالِحًا وَّاٰخَرَ سَيِّئًا ؕ عَسَى اللّٰهُ اَنۡ يَّتُوۡبَ عَلَيۡهِمۡ ؕ اِنَّ اللّٰهَ غَفُوۡرٌ رَّحِيۡمٌ ۝۱۰۲ خُذۡ مِنۡ اَمۡوَالِهِمۡ صَدَقَةً تُطَهِّرُهُمۡ وَتُزَكِّيۡهِمۡ بِهَا وَصَلِّ عَلَيۡهِمۡ ؕ اِنَّ صَلٰوتَكَ سَكَنٌ لَّهُمۡ ؕ وَاللّٰهُ سَمِيۡعٌ عَلِيۡمٌ ۝۱۰۳ اَلَمۡ يَعۡلَمُوۡۤا اَنَّ اللّٰهَ هُوَ يَقۡبَلُ التَّوۡبَةَ عَنۡ عِبَادِهٖ وَيَاۡخُذُ الصَّدَقٰتِ وَاَنَّ اللّٰهَ هُوَ التَّوَّابُ الرَّحِيۡمُ ۝۱۰۴ وَقُلِ اعۡمَلُوۡا فَسَيَرَى اللّٰهُ عَمَلَكُمۡ وَرَسُوۡلُهٗ وَالۡمُؤۡمِنُوۡنَ ؕ وَسَتُرَدُّوۡنَ اِلٰى عٰلِمِ الۡغَيۡبِ وَالشَّهَادَةِ فَيُنَبِّئُكُمۡ بِمَا كُنۡتُمۡ تَعۡمَلُوۡنَ ۝۱۰۵ۚ وَاٰخَرُوۡنَ مُرۡجَوۡنَ لِاَمۡرِ اللّٰهِ اِمَّا يُعَذِّبُهُمۡ وَاِمَّا يَتُوۡبُ عَلَيۡهِمۡ ؕ وَاللّٰهُ عَلِيۡمٌ حَكِيۡمٌ ۝۱۰۶ وَالَّذِيۡنَ اتَّخَذُوۡا مَسۡجِدًا ضِرَارًا وَّكُفۡرًا وَّتَفۡرِيۡقًاۢ بَيۡنَ

الْمُؤْمِنِيْنَ وَاِرْصَادًا لِّمَنْ حَارَبَ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ مِنْ قَبْلُ ؕ وَلَيَحْلِفُنَّ اِنْ اَرَدْنَاۤ اِلَّا الْحُسْنٰى ؕ وَاللّٰهُ يَشْهَدُ اِنَّهُمْ لَكٰذِبُوْنَ ۝ لَا تَقُمْ فِيْهِ اَبَدًا ؕ لَمَسْجِدٌ اُسِّسَ عَلَى التَّقْوٰى مِنْ اَوَّلِ يَوْمٍ اَحَقُّ اَنْ تَقُوْمَ فِيْهِ ؕ فِيْهِ رِجَالٌ يُّحِبُّوْنَ اَنْ يَّتَطَهَّرُوْا ؕ وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُطَّهِّرِيْنَ ۝ اَفَمَنْ اَسَّسَ بُنْيَانَهٗ عَلٰى تَقْوٰى مِنَ اللّٰهِ وَرِضْوَانٍ خَيْرٌ اَمْ مَّنْ اَسَّسَ بُنْيَانَهٗ عَلٰى شَفَا جُرُفٍ هَارٍ فَانْهَارَ بِهٖ فِيْ نَارِ جَهَنَّمَ ؕ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِى الْقَوْمَ الظّٰلِمِيْنَ ۝ لَا يَزَالُ بُنْيَانُهُمُ الَّذِيْ بَنَوْا رِيْبَةً فِيْ قُلُوْبِهِمْ اِلَّاۤ اَنْ تَقَطَّعَ قُلُوْبُهُمْ ؕ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ۝

अब अहले ईमान के माबैन हिफ्ज़े मरातब का मज़मून आ रहा है, क्योंकि किसी भी मआशरे में तमाम इंसान बराबर नहीं होते:

ख़ुदा पंज अन्गशत यकसाँ ना कर्द
ना हर ज़न-ज़न अस्त व ना हर मर्द-मर्द!

मदीने के उस मआशरे में भी सब लोग नज़रियाती तौर पर बराबर नहीं थे, हत्ता कि जो मुनाफ़िक़ीन थे वह भी सब एक जैसे मुनाफ़िक नहीं थे। चूँकि इंसानी फ़ितरत तो तबदील नहीं होती इसलिये आइन्दा भी जब कभी किसी मुसलमान मआशरे में कोई दीनी तहरीक उठेगी तो उसी तरह सूरते हाल पेश आयेगी। तहरीक के अरकान के दरमियान दर्जाबंदी का एक वाज़ेह और ग़ैर मुबह्हम अदराक नागुज़ीर होगा। लिहाज़ा ये दर्जाबंदी हिकमते क़ुरानी का एक बहुत अहम मौज़ू है और इस ऐतबार से ये आयात बहुत अहम हैं।

आयत 100

وَالسّٰبِقُوْنَ الْاَوَّلُوْنَ مِنَ الْمُهٰجِرِيْنَ وَالْاَنْصَارِ وَالَّذِيْنَ اتَّبَعُوْهُمْ بِاِحْسَانٍ

"और पहले पहल सबक़त करने वाले मुहाजरीन और अंसार में से, और वह जिन्होंने उनकी पैरवी की नेकोकारी के साथ"

رَّضِيَ اللّٰهُ عَنْهُمْ وَرَضُوْا عَنْهُ وَاَعَدَّ لَهُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ تَحْتَهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَاۤ اَبَدًا ؕ

"अल्लाह उनसे राज़ी हो गया और वह अल्लाह से राज़ी हो गए, और उसने उनके लिये वह बाग़ात तैयार किये हैं जिनके नीचे नदियाँ बहती होंगी, उनमें वह हमेशा-हमेश रहेंगे।"

ذٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيْمُ ۝

"यही है बहुत बड़ी कामयाबी।"

इस दरजा बंदी के मुताबिक़ अहले ईमान के ये दो मरातब बुलंदतरीन हैं। यानि सबसे ऊपर السّٰبِقُوْنَ الْاَوَّلُوْنَ और इसके बाद इनके पैरोकार। (इससे पहले एक दरजा बंदी हम सूरतुन्निसा की आयत 69 में अम्बिया, सिद्दिक़ीन, शुहदाअ और सालेहीन के मरातिब में भी देख चुके हैं। मगर वह दरजा बंदी किसी और ऐतबार से है जिसकी तफ़सील का यह मौक़ा नहीं)। बुनियादी तौर पर इन दोनों गिरोहों के लोग नेक सीरत हैं जो फ़ितरते सलीमा और अक़्ले सलीम से नवाज़े गए हैं। अलबत्ता इनकी आपस की दरजा बंदी में जो फ़र्क़ है वह इनकी तबियत और हिम्मत के फ़र्क़ के बाइस है। इनमें से दरजा अव्वल (السّٰبِقُوْنَ الْاَوَّلُوْنَ) पर फ़ाएज़ दरअसल वह लोग हैं जो हक़ को सामने आते ही फ़ौरन क़ुबूल कर लेते हैं। हक़ इनके लिये इस क़दर कीमती मताअ है कि उसकी क़ुबूलियत में ज़रा सी ताखीर भी इन्हें गवारा नहीं होती। वह इतने बाहिम्मत लोग होते हैं कि क़ुबूले हक़ का फ़ैसला करते हुए वह उसके नतीजे व अवाक़ब (अंजाम) के बारे में सोच-विचार में नहीं पड़ते। वह इस ख्याल को ख़ातिर में नहीं लाते कि इसके बाद इन्हें क्या कुछ छोड़ना होगा और क्या कुछ भुगतना पड़ेगा। ना वह लोग यह देखते हैं कि उनके आगे इस रास्ते पर पहले से कोई चल भी रहा है या नहीं, और अगर नहीं चल रहा तो किसी और के आने का इंतेज़ार कर लें, सबसे पहले, अकेले वह क्यूँकर इस पुरख़तर वादी में कूद पड़ें! वह इन सब पहलुओं पर सोचने में वक़्त ज़ाया नहीं करते, हक़ को क़ुबूल करने में कोई समझौता नहीं करते,

किसी मसलिहत को ख़ातिर में नहीं लाते, अक़्ल के दलाएल की मन्तिक़ में नहीं पड़ते और "हरचे बादाबाद, मा कशी दर आब अन्दा खतीम" के मिस्दाक़ आतिश-ए-इबतला में कूद जाते हैं। बक़ौले इक़बाल:

बे ख़तर कूद पड़ा आतिश-ए-नमरूद में इश्क
अक़्ल है कि महवे तमाशाए लबे बाम अभी!

दूसरे दरजे में वह लोग हैं जो इन السّٰبِقُوْنَ الْاَوَّلُوْنَ के इत्तबाअ में दाई-ए-हक़ की पुकार पर लब्बैक कहते हैं। ये भी सलीमुल फ़ितरत लोग होते हैं, हक़ को पहली नज़र में पहचानने की सलाहियत रखते हैं और इसकी क़ुबूलियत के लिये आमादा भी होते हैं, मगर इनमे हिम्मत क़दरे कम होती है। ये "हरचे बादाबाद" वाला नारा बुलंद नहीं कर सकते और चाहते हैं कि यह नई पगडंडी ज़रा रास्ते की शक्ल इख्तियार कर ले, हमारे आगे कोई दो-चार लोग चलते हुए नज़र आएँ, तो हम भी उनके पीछे चल पड़ेंगे। यानि इसमें मामला नीयत के किसी ख़लल का नहीं, सिर्फ़ हिम्मत की कमी का है। और वह भी इसलिये कि इनकी तबाअ ही इस नहज पर बनाई गई हैं, जैसे हुज़ूर ﷺ ने फ़रमाया: ((اَلنَّاسُ مَعَادِنُ كَمَعَادِنِ الْفِضَّةِ وَالذَّهَبِ))[28] "इंसान (मअदनियात की) कानों की तरह है, जैसे चांदी और सोने की कानें होती हैं।" यानि जिस तरह मअदनियात की क़िस्में होती हैं उसी तरह इंसानों की भी मुख्तलिफ़ अक़साम हैं। ज़ाहिर है आप सोने की कच धात (ore) को साफ़ करेंगे तो ख़ालिस सोना हासिल होगा। चांदी की ore को ख्वाह कितना ही साफ़ करलें वह सोना नहीं बन सकती। इसी तरह इंसानों के तबाअ में जो बुनियादी फ़र्क़ होता है उसके सबब सब इंसान बराबर नहीं हो सकते।

बहरहाल यहाँ पर अल्लाह तआला ने "السّٰبِقُوْنَ الْاَوَّلُوْنَ" और उनके इत्तबाअ में हक़ को क़ुबूल करने वालों का ज़िक्र एक साथ किया है, क्योंकि इन मुत्तबिईन (इत्तबाअ करने वालों) ने भी हक़ को हक़ समझ कर क़ुबूल किया है, पूरी नेक नियती से क़ुबूल किया है और सिर्फ़ अल्लाह की रज़ा के लिये क़ुबूल किया है। इस सिलसिले में कोई और गर्ज़, कोई और आमिल, कोई और मफ़ाद इनके पेशे नज़र नहीं था। बस थोड़ी सी हिम्मत की कमी थी जिसकी वजह से वह सबक़त ना ले सके, मगर दूसरे दरजे पर फ़ाएज़ हो गए।

अब यहाँ एक अहम बात यह नोट करने की है कि "السّٰبِقُوْنَ الْاَوَّلُوْنَ" महाजरीन में से भी हैं और अन्सार में से भी, और फिर इनमें इनके अपने-अपने मुत्तबिईन हैं। अन्सार चूँकि कहीं दस साल बाद ईमान लाये थे, इसलिये अगर ज़मानी ऐतबार से देखा जाए तो गिरोहे महाजरीन में से जो असहाबे मुत्तबिईन क़रार पाए हैं वह अन्सार के "السّٰبِقُوْنَ الْاَوَّلُوْنَ" से भी पहले ईमान लाये थे, मगर इस दरजा बंदी और मरातब में वह उनसे पीछे ही रहे। इसलिये कि यहाँ पहले या बाद में आने का ऐतबार ज़मानी लिहाज़ से नहीं, बल्कि यह मिज़ाज का मामला है और उस पहले रद्दे अमल का मामला है जो किसी के मिज़ाज से उस वक़्त ज़हूर पज़ीर हुआ जब उसने पहली दफ़ा हक़ को पहचाना। लिहाज़ा अगरचे अहले मदीना (जो बाद में अन्सार कहलाए) बहुत बाद में ईमान लाए थे मगर इनमें भी वह लोग " السّٰبِقُوْنَ الْاَوَّلُوْنَ" ही क़रार पाए थे जिन्होंने हक़ को पहचान कर फ़ौरन लब्बैक कहा, फ़िर ना नताएज की परवाह की और ना कोई मसलिहत उनके आड़े आई।

आयत 101

وَمِمَّنْ حَوْلَكُمْ مِّنَ الْاَعْرَابِ مُنٰفِقُوْنَ ۛ

"और जो तुम्हारे आस-पास के बादिया नशीन हैं इनमें मुनाफ़िक़ भी हैं।"

आला तरीन मरातब वाले असहाब के ज़िक्र के बाद अब बिल्कुल निचली सतह के लोगों का तज़किरा हो रहा है।

وَمِنْ اَهْلِ الْمَدِيْنَةِ ۛ مَرَدُوْا عَلَى النِّفَاقِ ۖ

"और अहले मदीना में भी, जो निफ़ाक़ पर अड़ चुके हैं"

ये वह लोग हैं जिनके निफ़ाक़ का मर्ज़ अब आख़री मरहले में पहुँच कर ला ईलाज हो चुका है और अब इस मर्ज़ से इनके शिफ़ायाब होने का कोई

इम्कान नहीं है। मुनाफ़िक़त के मर्ज़ की भी टी. बी. की तरह तीन stages होती हैं। झूठे बहाने बनाना इस मर्ज़ की इब्तदा हैं, जबकि बात-बात पर झूठी क़समें खाना दूसरी स्टेज की अलामत है, और जब यह मर्ज़ तीसरी और आख़री स्टेज पर पहुँचता है तो इसकी वाज़ेह अलामत मुनाफिक़ीन की अहले ईमान के साथ ज़िद और दुश्मनी की सूरत में ज़ाहिर होती है। इसलिये कि अहले ईमान तो दीन के तमाम मुतालबात ख़ुशी-ख़ुशी पूरे करते हैं, जिस मुहिम से बचने के लिये मुनाफिक़ीन बहाने तराशने में मसरूफ़ होते हैं अहले ईमान बिला हील व हुज्जत उसके लिये दिलो जान से हाज़िर होते हैं। मोमिनीन सादिक़ीन का यह रवैय्या मुनाफिक़ीन के लिये एक अज़ाब से कम नहीं होता, जिसके बाइस आए दिन उनकी सबकी होती है और आए दिन उनकी मुनाफ़िक़त की पोल खुलती रहती है। यही वजह है कि मुनाफिक़ीन को मुसलमानों से नफ़रत और अदावत हो जाती है और यही इस मर्ज़ की आख़री स्टेज है।

لَا تَعْلَمُهُمْ ؕ نَحْنُ نَعْلَمُهُمْ ؕ سَنُعَذِّبُهُمْ مَّرَّتَيْنِ

"आप इन्हें नहीं जानते, हम इन्हें जानते हैं। हम इन्हें दोहरा अज़ाब देंगे"

मुनाफिक़ीने मदीना तो हर रोज़ नए अज़ाब से गुज़रते थे। हर रोज़ कहीं ना कहीं अल्लाह की राह में निकलने का मुतालबा होता था और हर रोज़ उन्हें झूठी क़समें खा-खा कर, बहाने बना-बना कर जान छुडानी पड़ती थी। इस लिहाज़ से उनकी ज़िंदगी मुसलसल अज़ाब में थी।

ثُمَّ يُرَدُّوْنَ اِلٰى عَذَابٍ عَظِيْمٍ ۚ

"फ़िर वह लौटा दिए जाएँगे एक बहुत बड़े अज़ाब की तरफ़।"

दुनिया का अज़ाब कितना भी हो आख़िरत के अज़ाब के मुक़ाबले में तो कुछ भी नहीं। लिहाज़ा दुनिया के अज़ाब झेलते-झेलते एक दिन उन्हें बहुत बड़े अज़ाब का सामना करने के लिये पेश होना पड़ेगा।

السّٰبِقُوْنَ الْاَوَّلُوْنَ, इन के मुत्तबिईन और फिर मुनाफिक़ीन के ज़िक्र के बाद अब कुछ ऐसे लोगों का ज़िक्र होने जा रहा है जो इन दोनों इन्तहाओं के दरमियान हैं। इन लोगों का ज़िक्र भी दो अलग-अलग दरजों में हुआ है। इनमें पहले जिस गिरोह का ज़िक्र आ रहा है वह अगरचे मुख्लिस मुसलमान थे मगर इनमें हिम्मत की कमी थी। चलना भी चाहते थे मगर चल नहीं पाते थे। किसी क़दर चलते भी थे मगर कभी कोताही भी हो जाती थी। हिम्मत करके आगे बढ़ते थे लेकिन कभी कसल मंदी और सुस्ती का ग़लबा भी हो जाता था।

आयत 102

وَاٰخَرُوْنَ اعْتَرَفُوْا بِذُنُوْبِهِمْ

"और कुछ दूसरे लोग हैं जो अपने गुनाहों का ऐतराफ़ करते हैं"

वह अपनी कोताहियों को छुपाने के लिये झूठ नहीं बोलते, झूठी क़समें नहीं खाते, झूठे बहाने नहीं बनाते, बल्कि खुले आम ऐतराफ़ कर लेते हैं कि हमसे गलती हो गई, मामलाते ज़िंदगी की मसरूफ़ियात और अहलो अयाल की मशगूलियात ने हमें इस क़दर उलझाया कि हम दीनी फ़राइज़ की अदायगी में कोताही का इरतकाब कर बैठे। जब गलती का ऐसा खुला ऐतराफ़ हो गया तो निफ़ाक़ का अहतमाल जाता रहा। लिहाज़ा उन्हें तौबा की तौफ़ीक़ मिल गई।

خَلَطُوْا عَمَلًا صَالِحًا وَّاٰخَرَ سَيِّئًا ؕ

"इन्होंने अच्छे और बुरे आमाल को गड़मड़ कर दिया है।"

नेक आमाल भी करते हैं मगर कभी कोई गलती भी कर बैठते हैं। ईसार व इन्फ़ाक़ भी करते हैं मगर दुनियादारी के झमेलों में उलझ कर कहीं कोई तक़सीर भी हो जाती है।

عَسَى اللّٰهُ اَنۡ يَّتُوۡبَ عَلَيۡهِمۡ ؕ اِنَّ اللّٰهَ غَفُوۡرٌ رَّحِيۡمٌ ۝۱۰۲

"उम्मीद है कि अल्लाह इनकी तौबा को क़ुबूल फ़रमायेगा। यक़ीनन अल्लाह बख़्शने वाला, निहायत रहम करने वाला हैं।"

एक रिवायत के मुताबिक़ यह आयत हज़रत अबु लुबाबा रज़ि. और उनके चंद साथियों के बारे में नाज़िल हुई। उन लोगों से सुस्ती और दुनियादारी की मसरूफियात के बाइस यह कोताही हुई कि वह गज़वा-ए-तबूक पर ना जा सके, मगर जल्द ही उन्हें अहसास हो गया कि उनसे बहुत बड़ी गलती सरज़द हो गई है। चुनाँचे उन्होंने शदीद अहसासे नदामत के बाइस रसूल अल्लाह ﷺ के वापस मदीना तशरीफ़ लाने से पहले अपने आप को मस्जिदे नबवी के सतूनों से बाँध लिया कि अब या तो हुज़ूर ﷺ तशरीफ़ लाकर हमारी तौबा की क़ुबूलियत का ऐलान फ़रमाएंगे और हमें अपने दस्ते मुबारक से खोलेंगे या फिर हम यहीं बंधे-बंधे अपनी जानें दे देंगे। हुज़ूर ﷺ की वापसी पर ये आयात नाज़िल हुईं तो आप ﷺ ने तशरीफ़ ले जाकर उन्हें खोला और ख़ुशख़बरी सुनाई कि उनकी तौबा क़ुबूल हो गई है। तौबा करने और तौबा की क़ुबूलियत का यह वही असूल था जो हम सूरतुन्निसा में पढ़ आये हैं: { اِنَّمَا التَّوۡبَةُ عَلَى اللّٰهِ لِلَّذِيۡنَ يَعۡمَلُوۡنَ السُّوۡٓءَ بِجَهَالَةٍ ثُمَّ يَتُوۡبُوۡنَ مِنۡ قَرِيۡبٍ فَاُولٰٓئِكَ يَتُوۡبُ اللّٰهُ عَلَيۡهِمۡ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ عَلِيۡمًا حَكِيۡمًا } यानि कोई गलती या कोताही सरज़द होने के फ़ौरन बाद इंसान के अन्दर ईमानी जज़्बात लौट आएँ, उसे अहसासे नदामत हो, और वह तौबा कर ले तो अल्लाह तआला ने ऐसी तौबा को क़ुबूल करने का ज़िम्मा लिया है। मगर इन असहाब रज़ि. को यह ऐज़ाज़ नसीब हुआ कि इनकी तौबा की क़ुबूलियत के बारे में ख़ुसूसी हुक्म नाज़िल हुआ।

आयत 103

خُذۡ مِنۡ اَمۡوَالِهِمۡ صَدَقَةً تُطَهِّرُهُمۡ وَتُزَكِّيۡهِمۡ بِهَا

"इनके अमवाल में से सदक़ात क़ुबूल फरमा लीजिये, इस (सदक़े) के ज़रिये से आप इन्हें पाक करेंगे और इनका तज़किया करेंगे"

रिवायत में आता है कि यह असहाब रज़ि. अपने अमवाल के साथ ख़ुद हुज़ूर ﷺ की ख़िदमत में हाज़िर हुए थे कि तौबा की क़ुबूलियत के शुकराने के तौर पर हम अल्लाह की राह में ये अमवाल पेश करते हैं। चूँकि ये लोग मुख्लिस मोमिन थे, सिर्फ़ सुस्ती और कमज़ोरी के बाइस कोताही हुई थी, इसलिये अल्लाह तआला ने कमाल मेहरबानी से आप ﷺ को ये सदक़ात क़ुबूल करने की इजाज़त फ़रमाई। जबकि मुनाफिक़ीन के सदक़ात क़ुबूल करने से आप ﷺ को मना फ़रमा दिया गया था।

وَصَلِّ عَلَيۡهِمۡ ؕ اِنَّ صَلٰوتَكَ سَكَنٌ لَّهُمۡ ؕ

"और इनके लिये दुआ कीजिये, यक़ीनन आपकी दुआ इनके हक़ में सुकून बख़्श है।"

आप ﷺ की दुआ उनके लिये बाइसे इत्मिनान होगी और उन्हें तसल्ली हो जाएगी कि उनकी ख़ता माफ़ हो गई है और उनकी तौबा क़ुबूल की जा चुकी है।

وَاللّٰهُ سَمِيۡعٌ عَلِيۡمٌ ۝۱۰۳

"और अल्लाह सब कुछ सुनने वाला, जानने वाला है।"

आयत 104

اَلَمۡ يَعۡلَمُوۡۤا اَنَّ اللّٰهَ هُوَ يَقۡبَلُ التَّوۡبَةَ عَنۡ عِبَادِهٖ وَيَاۡخُذُ الصَّدَقٰتِ

"क्या वह नहीं जानते कि अल्लाह अपने बन्दों की तौबा क़ुबूल फ़रमाता है और

उनके सदक़ात को क़ुबूलियत अता फ़रमाता है"

यानि अल्लाह के बन्दों को मालूम होना चाहिये कि वह अल तव्वाब भी है और अपने बन्दों के सदक़ात को शर्फ़े क़ुबूलियत भी बख्शता है। रसूल अल्लाह ﷺ ने सदक़ा व खैरात वगैरह के माल को अपने लिये और अपनी औलाद के लिये हराम क़रार दिया है। मगर अल्लाह का अपने बन्दों पर यह ख़ास अहसान है कि वह "अल गनी" है, बे नियाज़ है, उसे किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं, मगर फिर भी वह अपने बन्दों से उनके नफ़क़ात व सदक़ात को क़ुबूल फ़रमाता है।

وَاَنَّ اللّٰهَ هُوَ التَّوَّابُ الرَّحِيْمُ ۝

"और यह कि वह बहुत ही तौबा क़ुबूल फ़रमाने वाला, और रहम फ़रमाने वाला है।"

आयत 105

وَقُلِ اعْمَلُوْا فَسَيَرَى اللّٰهُ عَمَلَكُمْ وَرَسُوْلُهٗ وَالْمُؤْمِنُوْنَ ۭ

"और आप इनसे कह दीजिये कि तुम अमल करो, अब अल्लाह और उसका रसूल और अहले ईमान तुम्हारे अमल को देखेंगे।"

अब फिर से मेहनत करो, सरफ़रोशी और जान फशानी का मुज़ाहिरा करो, आइन्दा तुम्हारे आमाल का जायज़ा लिया जायेगा कि मुतालबाते दीन के बारे में तुम्हारा क्या रवैय्या है और यह कि फिर से कोई कोताही, लग्ज़िश वगैरह तो नहीं होने पा रही।

وَسَتُرَدُّوْنَ اِلٰى عٰلِمِ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُوْنَ ۝ۚ

"और अनक़रीब तुम्हे लौटा दिया जायेगा उसकी तरफ़ जो हर ग़ायब और और हाज़िर का जानने वाला है, फिर वह तुम्हें बता देगा जो कुछ तुम करते रहे थे।"

क़यामत के दिन तुम्हें अल्लाह तआला के हुज़ूर पेश होना है, जो तुम्हारे सारे किये-धारे से तुमको आगाह कर देगा। वहाँ तुम्हारे सारे आमाल तुम्हारे सामने पेश कर दिए जाएँगे। इस बारे में सूरतुल ज़िल्ज़ाल (आयत 7 व 8) में यूँ फ़रमाया गया: {فَمَنْ يَّعْمَلْ مِثْقَالَ ذَرَّةٍ خَيْرًا يَّرَهٗ} {وَمَنْ يَّعْمَلْ مِثْقَالَ ذَرَّةٍ شَرًّا يَّرَهٗ} "तो जिसने ज़र्रा भर नेकी की होगी वह उसे (ब-चश्म खुद) देख लेगा। और जिसने ज़र्रा भर बुराई की होगी वह उसे (ब-चश्म खुद) देख लेगा। इसके बाद वहाँ दूध का दूध और पानी का पानी हो जायेगा।

आयत 106

وَاٰخَرُوْنَ مُرْجَوْنَ لِاَمْرِ اللّٰهِ اِمَّا يُعَذِّبُهُمْ وَاِمَّا يَتُوْبُ عَلَيْهِمْ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ۝

"और कुछ दूसरे लोग हैं जिनके मामले को अल्लाह के फ़ैसले तक मौअख्खर कर दिया गया है, चाहे उन्हें अज़ाब दे और चाहे तो उनकी तौबा क़ुबूल फ़रमा ले। और अल्लाह सब कुछ जानने वाला, हिकमत वाला है।"

ये ज़ुअफ़ाअ (कमज़ोरों) में से दूसरी क़िस्म के लोगों का ज़िक्र है, जिनका मामला मौअख्खर (postponed) कर दिया गया था। ये तीन असहाब थे: कअब बिन मालिक, हिलाल बिन उमैय्या और मरारा बिन अलरबीअ रज़ि., इनमें से एक सहाबी हज़रत कअब बिन मालिक अंसारी रज़ि. ने अपना वाक़िया बड़ी तफ़सील से बयान किया है जो कुतुब अहादीस और तफ़ासीर में मन्क़ूल है। मौलाना मौदूदी रहि. ने भी तफ़हीमुल क़ुरान में बुख़ारी शरीफ़ के हवाले से यह तवील हदीस नक़ल की है। यह बहुत सबक़

आमोज़ और इबरत अंगेज़ वाक़िया है। इसे पढ़ने के बाद मदीना के उस मआशरे, हुज़ूर ﷺ के ज़ेरे तरबियत अफ़राद के अंदाज़े फ़िक्र और जमाती ज़िंदगी के नज़म व ज़ब्त की जो तस्वीर हमारे सामने आती है वह हैरानकुन भी है और ईमान अफ़रोज़ भी।

ये तीनो हज़रात सच्चे मुसलमान थे, मुहिम पर जाना भी चाहते थे मगर सुस्ती की वजह से ताखीर हो गई और इस तरह वह जाने से रह गए। हज़रत कअब बिन मालिक रज़ि. ख़ुद फ़रमाते हैं कि मैं उस ज़माने में बहुत सेहतमंद और ख़ुशहाल था, मेरी ऊँटनी भी बहुत तवाना और तेज़ रफ़्तार थी। जब सुस्ती की वजह से मैं लश्कर के साथ रवाना ना हो सका तो भी मेरा ख्याल था कि मैं आज-कल में रवाना हो जाऊँगा और रास्ते में लश्कर से जा मिलूंगा। मैं इसी तरह सोचता रहा और रवाना ना हो सका। हत्ता कि वक़्त निकल गया और फिर एक दिन अचानक मुझे यह अहसास हुआ कि अब ख्वाह मैं कितनी भी कोशिश कर लूँ, लश्कर के साथ नहीं मिल सकता।

जब रसूल अल्लाह ﷺ तबूक से वापस तशरीफ़ लाए तो आप ﷺ ने पीछे रह जाने वालों को बुलाकर बाज़पुर्स शुरू की। मुनाफिक़ीन आप ﷺ के सामने क़समे खा-खा कर बहाने बनाते रहे और आप ﷺ उनकी बातों को मानते रहे। जब कअब बिन मालिक रज़ि. की बारी आई तो हुज़ूर ﷺ ने उनको देख कर तबस्सुम फ़रमाया। ज़ाहिर बात है कि हुज़ूर ﷺ जानते थे कि कअब बिन मालिक रज़ि. सच्चे मोमिन हैं। आप ﷺ ने उनसे दरयाफ्त फ़रमाया कि तुम्हें किस चीज़ ने रोका था? उन्होंने साफ़ कह दिया कि लोग झूठी क़समे खा-खा कर छुट गए हैं, अल्लाह ने मुझे भी ज़बान दी है, मैं भी बहुत सी बाते बना सकता हूँ, मगर हक़ीकत यह है कि मुझे कोई उज़्र मानेअ नहीं था। मैं इन दिनों जितना सेहतमन्द था उतना पहले कभी ना था, जितना गनी और ख़ुशहाल था पहले कभी ना था। मुझे कोई उज़्र मानेअ नहीं था सिवाय इसके कि शैतान ने मुझे वरगलाया और ताखीर हो गई। इनके बाक़ी दो साथियों ने भी इसी तरह सच बोला और कोई बहाना ना बनाया।

इन तीनो हज़रात के बारे में नबी अकरम ﷺ ने हुक्म दिया कि कोई शख्स इन तीनों से बात ना करे और यूँ इनका मुकम्मल तौर पर मआशरती मुक़ातआ (social boycott) हो गया, जो पूरे पचास दिन जारी रहा। हज़रत कअब रज़ि. फ़रमाते हैं इस दौरान एक दिन इन्होंने अपने चचाज़ाद भाई और बचपन के दोस्त से बात करना चाही तो उसने भी जवाब ना दिया। जब इन्होंने उससे कहा कि अल्लाह के बन्दे तुम्हें तो मालूम है कि मैं मुनाफ़िक़ नहीं हूँ तो उसने जवाब में सिर्फ़ इतना कहा कि अल्लाह और उसका रसूल ही बेहतर जानते हैं। चालीस दिन बाद हुज़ूर ﷺ के हुक्म पर इन्होंने अपनी बीवी को भी अलैहदा कर दिया। इसी दौरान वाली-ए-गस्सान की तरफ़ से इन्हें एक ख़त भी मिला, जिसमें लिखा था कि हमने सुना है कि आपके साथी आप पर ज़ुल्म ढहा रहे हैं, आप बाईज्ज़त आदमी हैं, आप ऐसे नहीं हैं कि आपको ज़लील किया जाए, लिहाज़ा आप हमारे पास आ जाएँ, हम आपकी क़दर करेंगे और अपने यहाँ आला मरातब से नवाजेंगे। यह भी एक बहुत बड़ी आज़माइश थी, मगर इन्होंने वह ख़त तन्नूर में झोंक कर शैतान का यह वार भी नाकाम बना दिया। इनकी इस सज़ा के पचासवें दिन इनकी माफ़ी और तौबा की क़ुबूलियत के बारे में हुक्म नाज़िल हुआ (आयत 118) और इस तरह अल्लाह ने इन्हें इस आज़माइश और इबतला में सुर्ख रू फ़रमाया। बायकाट के इख्तताम पर हर फ़र्द की तरफ़ से इन हज़रात के लिये ख़ुलूस व मोहब्बत के ज़ज्बात का जिस तरह से इज़हार हुआ और फिर इन तीनों असहाब रज़ि. ने अपनी आज़माइश और इबतला के दौरान इख्लास और इस्तक़ामत की दास्तान जिस खूबसूरती से रक़म की, यह एक दीनी जमाती ज़िंदगी की मिसाली तस्वीर है।

आयत 107

وَالَّذِيْنَ اتَّخَذُوْا مَسْجِدًا ضِرَارًا وَّ كُفْرًا وَّتَفْرِيْقًۢا بَيْنَ الْمُؤْمِنِيْنَ وَاِرْصَادًا لِّمَنْ حَارَبَ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ مِنْ قَبْلُ ؕ

"और वह लोग जिन्होंने एक मस्जिद बनाई है ज़रर (नुक़सान) और कुफ़्र के लिये और अहले ईमान में तफ़रीक़ पैदा करने के लिये और उन लोगों को घात फ़राहम करने के लिये जो पहले से अल्लाह और उसके रसूल से जंग कर रहे हैं।"

ज़िरारन बाब-ए-मुफ़ाअला है, यानि उन्होंने मस्जिद बनाई है ज़िद्दम-ज़िददा, मुक़ाबले में और दावते हक़ को नुक़सान पहुँचाने के लिये। यह मस्जिद मुनाफिक़ीन ने मस्जिदे क़ुबा के क़रीबी इलाक़े में बनाई थी। इसकी तामीर के पीछे अबु आमिर राहिब का हाथ था। इस शख्स का ताल्लुक़ क़बीला खज़रज से था। वह ज़माना-ए-जाहिलियत में ईसाईयत क़ुबूल करके राहिब बन गया था और अरब में अहले किताब के बहुत बड़े आलिम के तौर पर जाना जाता था। जैसा कि वरक़ा बिन नौफ़ल, जो कुरैशी थे और उन्होंने भी बुतपरस्ती छोड़ कर ईसाईयत इख्तियार कर ली थी, और अपने ज़माने के इतने बड़े आलिम थे कि तौरात इब्रानी ज़बान में लिखा करते थे। वह बहुत नेक और सलीमुल फ़ितरत इंसान थे। जब हज़रत खदीजा रज़ि. हुज़ूर ﷺ को लेकर उनके पास गईं तो उन्होंने आप ﷺ की तस्दीक़ की और बताया कि आप ﷺ के पास वही नामूस आया है, जो हज़रत मूसा और हज़रत ईसा (अलै०) के पास आता था। उन्होंने तो यहाँ तक कहा था कि काश मैं उस वक़्त तक ज़िन्दा रहूँ जब आपकी क़ौम आपको यहाँ से निकाल देगी। हुज़ूर ﷺ ने जब हैरत से पूछा कि क्या ये लोग मुझे यहाँ से निकाल देंगे? तो उन्होंने बताया कि हाँ! मामला ऐसा ही है, आपकी दावत के नतीजे में आपकी क़ौम आपकी दुश्मन बन जाएगी।

मगर अबु आमिर राहिब का रवैय्या इसके बरअक्स था। वह रसूल अल्लाह ﷺ का शदीद-तरीन दुश्मन बन गया। क़ुरैशे मक्का की बदर में शिकस्त के बाद यह शख्स मक्का में जाकर आबाद हो गया और अहले मक्का को हुज़ूर ﷺ और मुसलमानों के ख़िलाफ़ उकसाता रहा। चुनाँचे गज़वा-ए-ओहद के पीछे भी इसी शख्स की साज़िशें कारफ़रमा थीं, बल्कि मैदाने ओहद में जब दोनों लश्कर आमने-सामने हुए तो इसने लश्कर से बाहर निकल कर अन्सारे मदीना को ख़िताब करके उन्हें वरगलाने की कोशिश भी की थी। इसके बाद भी तमाम जंगों में यह मुसलमानों के ख़िलाफ़ बरसरे पैकार रहा, मगर हुनैन की जंग के बाद जब उसे महसूस हुआ कि अब ज़ज़ीरा नुमाए अरब में उसके लिये कोई जगह नहीं रही तो वह मायूस होकर शाम चला गया और वहाँ जाकर भी मुसलमानों के ख़िलाफ़ साज़िशों में मसरूफ़ रहा। इसके लिये उसने मुनाफिक़ीने मदीना के साथ मुसलसल राब्ता रखा और उसी के कहने पर मुनाफिक़ीन ने मस्जिदे ज़रार तामीर की जो नाम को तो मस्जिद थी मगर हक़ीक़त में साज़िशी अनासिर की कमीनगाह और फ़ितने का एक मरकज़ थी।

وَلَيَحْلِفُنَّ اِنْ اَرَدْنَاۤ اِلَّا الْحُسْنٰى ؕ وَاللّٰهُ يَشْهَدُ اِنَّهُمْ لَكٰذِبُوْنَ ۝

"और वह क़समें खा-खा कर कहेंगे कि हमने तो नेकी ही का इरादा किया था, मगर अल्लाह गवाही देता है कि ये बिल्कुल झूठे हैं।"

अब जवाब तलबी पर ये मुनाफिक़ीन क़समे खा-खा कर अपनी सफ़ाई पेश करने की कोशिश करेंगे कि हमारी कोई बुरी नीयत नहीं थी, हमारा इरादा तो नेकी और भलाई ही का था, असल में दूसरी मस्जिद ज़रा दूर पड़ती थी जिसकी वजह से हम तमाम नमाज़ें जमात के साथ अदा नहीं कर सकते थे, इसलिये हमने सोचा कि अपने मोहल्ले में एक मस्जिद बना लें ताकि तमाम नमाज़ें आसानी से बा-जमात अदा कर सकें, वगैरह-वगैरह।

आयत 108

لَا تَقُمْ فِيْهِ اَبَدًا ؕ

"(ऐ नबी ﷺ!) आप उसमें कभी खड़े ना हों।"

मस्जिद बनाने के बाद ये मुनाफिक़ीन हुज़ूर ﷺ के पास ये दरख्वास्त लेकर आए थे कि आप ﷺ मस्जिद में तशरीफ़ ले आएँ तो बड़ी बरकत होगी। मगर अल्लाह तआला ने आप ﷺ को बरवक़्त रोक दिया कि आप ﷺ वहाँ तशरीफ़ ना ले जाएँ।

لَمَسْجِدٌ اُسِّسَ عَلَى التَّقْوٰى مِنْ اَوَّلِ يَوْمٍ اَحَقُّ اَنْ تَقُوْمَ فِيْهِ

"यक़ीनन वह मस्जिद जिसकी बुनियाद पहले दिन से ही तक़वे पर रखी गई थी, वह ज़्यादा मुस्तहिक़ है कि आप उसमें खड़े हों (नमाज़ पढ़ें)।"

इससे मुराद मस्जिदे क़ुबा है जो क़रीब ही थी और जिसकी बुनियाद रसूल अल्लाह ﷺ ने अपने दस्ते मुबारक से रखी थी। यह मुक़ाम उस वक़्त के मदीने की आबादी से तीन मील के फासले पर था। जब आप ﷺ हिजरत करके मदीना तशरीफ़ ले गए तो यह आप ﷺ का पहला पड़ाव था। आपने इस मुक़ाम पर क़याम फ़रमाया था और यहाँ इस मस्जिद की बुनियाद रखी थी।

فِيْهِ رِجَالٌ يُّحِبُّوْنَ اَنْ يَّتَطَهَّرُوْا ؕ وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُطَّهِّرِيْنَ ۝

"इसमें वह लोग हैं जो पसंद करते हैं कि वह बहुत पाक रहें। और अल्लाह ऐसे लोगों को पसंद करता है जो बहुत ज़्यादा पाक रहते हैं।"

मस्जिदे क़ुबा वाले मुसलमानों से पूछा गया कि आप लोगों के किस अमल की वजह से अल्लाह तआला ने आपकी तहारत की तारीफ़ फ़रमाई है? तो उन्होंने जवाब दिया कि हम लोग क़ज़ा-ए-हाजत के बाद ढ़ेले भी इस्तेमाल करते हैं और फ़िर पानी से भी तहारत हासिल करते हैं। चुनाँचे आम तौर पर यही समझा गया है कि अल्लाह तआला ने यहाँ तहारत के इस मैयार की तारीफ़ फ़रमाई है।

आयत 109

اَفَمَنْ اَسَّسَ بُنْيَانَهٗ عَلٰى تَقْوٰى مِنَ اللّٰهِ وَرِضْوَانٍ خَيْرٌ

"तो क्या भला जिसने अपनी इमारत की बुनियाद रखी हो अल्लाह के तक़वे और उसकी रज़ा पर, वह बेहतर है"

اَمْ مَّنْ اَسَّسَ بُنْيَانَهٗ عَلٰى شَفَا جُرُفٍ هَارٍ فَانْهَارَ بِهٖ فِىْ نَارِ جَهَنَّمَ ؕ

"या वह कि जिसने अपनी तामीर की बुनियाद रखी एक ऐसी खाई के किनारे पर जो गिरा चाहती है, तो वह उसको लेकर गिर गई जहन्नम में?"

यानि जब इंसान कोई इमारत तामीर करना चाहता है तो उसके लिये किसी मज़बूत और ठोस जगह का इन्तखाब करता है। अगर वह किसी खोख़ली जगह पर या किसी खाई वगैरह के किनारे पर इमारत तामीर करेगा तो जल्द या बदेर वह इमारत गिर कर ही रहेगी। दरअसल ये मुनाफिक़ीन की तदबीरों और साजिशों की मिसाल दी गई है कि इनकी मिसाल ऐसी है जैसे वह जहन्नम की गहरी खाई के किनारे पर अपनी इमारतें तामीर कर रहे हों, चुनाँचे वह किनारा भी गिर कर रहेगा और खुद इनको और इनकी तामीरात को भी जहन्नम में गिराएगा।

وَاللّٰهُ لَا يَهْدِى الْقَوْمَ الظّٰلِمِيْنَ ۝

"और अल्लाह ऐसे जालिमों को राहयाब नहीं करता।"

आयत 110

لَا يَزَالُ بُنْيَانُهُمُ الَّذِیْ بَنَوْا رِیْبَةً فِیْ قُلُوْبِهِمْ اِلَّاۤ اَنْ تَقَطَّعَ قُلُوْبُهُمْ ؕ وَاللّٰهُ عَلِیْمٌ حَكِیْمٌ ۝

"यह इमारत जो इन्होंने बनाई है इनके दिलों में शक़ूक़ व शुबहात पैदा किये रखेगी, इल्ला यह कि इनके दिलों के टुकड़े कर दिए जाएँ। और अल्लाह सब कुछ जानने वाला, हिकमत वाला है।"

इन मुनाफिक़ीन के दिलों के अन्दर मुनाफ़क़त की जड़ें इतनी गहरी जा चुकी हैं कि इसके असरात का ज़ाएल होना अब मुमकिन नहीं रहा। इसकी मिसाल यूँ समझिये कि अगर किसी के पूरे जिस्म में कैंसर फ़ैल चुका हो तो मामूली ऑपरेशन करने से वह ठीक नहीं हो सकता, क्योंकि कैंसर के असरात तो जिस्म के एक-एक रेशे में सरायत कर चुके हैं। अब अगर सारे जिस्म को टुकड़े-टुकड़े कर दिया जाए तब शायद उसकी जड़ों को निकालना मुमकिन हो। लिहाज़ा इन मुनाफिक़ीन के दिल हमेशा शक़ूक़ व शुबहात के अंधेरों में ही डूबे रहेंगे, इन्हें ईमान व यक़ीन की रौशनी कभी नसीब नहीं होगी, इल्ला ये कि इन के दिल टुकड़े-टुकड़े कर दिये जाएँ।

अब अगली दो आयात में बहुत अहम मज़मून आ रहा है।

आयात 111, 112

اِنَّ اللّٰهَ اشْتَرٰی مِنَ الْمُؤْمِنِیْنَ اَنْفُسَهُمْ وَاَمْوَالَهُمْ بِاَنَّ لَهُمُ الْجَنَّةَ ؕ یُقَاتِلُوْنَ فِیْ سَبِیْلِ اللّٰهِ فَیَقْتُلُوْنَ وَیُقْتَلُوْنَ ۟ وَعْدًا عَلَیْهِ حَقًّا فِی التَّوْرٰىةِ وَالْاِنْجِیْلِ وَالْقُرْاٰنِ ؕ وَمَنْ اَوْفٰی بِعَهْدِهٖ مِنَ اللّٰهِ فَاسْتَبْشِرُوْا بِبَیْعِكُمُ الَّذِیْ بَایَعْتُمْ بِهٖ ؕ وَذٰلِكَ هُوَ الْفَوْزُ الْعَظِیْمُ ۝ اَلتَّآىِٕبُوْنَ الْعٰبِدُوْنَ الْحٰمِدُوْنَ السَّآىِٕحُوْنَ الرّٰكِعُوْنَ السّٰجِدُوْنَ الْاٰمِرُوْنَ بِالْمَعْرُوْفِ وَالنَّاهُوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ وَالْحٰفِظُوْنَ لِحُدُوْدِ اللّٰهِ ؕ وَبَشِّرِ الْمُؤْمِنِیْنَ ۝

आयत 111

اِنَّ اللّٰهَ اشْتَرٰی مِنَ الْمُؤْمِنِیْنَ اَنْفُسَهُمْ وَاَمْوَالَهُمْ بِاَنَّ لَهُمُ الْجَنَّةَ ؕ

"यक़ीनन अल्लाह ने ख़रीद ली हैं अहले ईमान से उनकी जानें भी और उनके माल भी इस क़ीमत पर कि उनके लिये जन्नत है।"

यह दो तरफ़ा सौदा है जो एक साहिबे ईमान बन्दे का अपने रब के साथ हो जाता है। बंदा अपने जान व माल बेचता है और अल्लाह उसके जान व माल को जन्नत के एवज़ (बदले में) ख़रीद लेता है।

یُقَاتِلُوْنَ فِیْ سَبِیْلِ اللّٰهِ فَیَقْتُلُوْنَ وَیُقْتَلُوْنَ ۟

"वह जंग करते हैं अल्लाह की राह में, फिर क़त्ल करते भी हैं और क़त्ल होते भी हैं।"

जैसे जंग-ए-बदर में मुसलमानों ने सत्तर काफ़िरों को जहन्नम रसीद किया, और मैदाने ओहद में सत्तर अहले ईमान शहीद हो गए।

وَعْدًا عَلَیْهِ حَقًّا فِی التَّوْرٰىةِ وَالْاِنْجِیْلِ وَالْقُرْاٰنِ

"यह वादा अल्लाह के ज़िम्मे है सच्चा, तौरात, इन्जील और क़ुरान में।"

यहाँ बैयनल सतूर (between the lines) में दरअसल यह यक़ीन दिहानी कराई गई है कि यह सौदा अगरचे उधार का सौदा है मगर यह एक पुख्ता अहद है जिसको पूरा करना अल्लाह के ज़िम्मे है। इसलिये इसके बारे में कोई वसवसा तुम्हारे दिलों में ना आने पाए। दरअसल यह उस सोच का जवाब है जो तबीअ बशरी (ह्यूमन नेचर) की कमज़ोरी के सबब इंसानी ज़हन में आती है। इंसान को बुनियादी तौर पर "नौ नक़द ना तेरह उधार" वाला फ़लसफ़ा ही अच्छा लगता है कि कामयाब सौदा तो वही होता है जो एक हाथ दो और दूसरे हाथ लो के असूल के मुताबिक़ हो। मगर यहाँ

तो दुनियावी ज़िंदगी में सब कुछ क़ुर्बान करने की तरगीब दी जा रही है और इसके ईनाम के लिये वादा-ए-फ़र्दा का इंतेज़ार करने को कहा जा रहा है कि इस क़ुर्बानी का ईनाम मरने के बाद आख़िरत में मिलेगा। लिहाज़ा एक आम इंसान उस "जन्नत मौऊदा (वादा की हुई जन्नत)" का हल्का सा तसव्वुर ही अपने ज़हन में ला सकता है। इस सिलसिले में यक़ीन की पुख्तगी तो सिर्फ़ ख्वास को ही नसीब होती है। चुनाँचे अहले ईमान को उधार के इस सौदे पर इत्मिनान दिलाया जा रहा है कि अल्लाह की तरफ़ से इस वादे की तौसीक़ (validation) तीन दफ़ा हो चुकी है, तौरात में, इन्जील में और फिर क़ुरान मजीद में भी।

وَمَنْ اَوْفٰى بِعَهْدِهٖ مِنَ اللّٰهِ فَاسْتَبْشِرُوْا بِبَيْعِكُمُ الَّذِيْ بَايَعْتُمْ بِهٖ ۭ وَذٰلِكَ هُوَ الْفَوْزُ الْعَظِيْمُ

"और अल्लाह से बढ़ कर अपने अहद को वफ़ा करने वाला कौन है? पस ख़ुशियाँ मनाओ अपनी इस बय (ख़रीद) पर जिसका सौदा तुमने उसके साथ किया है। और यही है बड़ी कामयाबी।"

بَايَعْتُمْ بِهٖ यानी आपस में जो सौदा तुमने किया। मुबाइयत बाब-ए-मुफ़ाअला يُبَايِعُ بَايَعَ (आपस में सौदा करना) सलासी मुजर्रद بَاعَ يَبِيْعُ (बेचना) से है। यहीं से लफ्ज़ "बैयत" निकला है। एक बंदा जो बैयत करता है उसमें वह अपने आपको अल्लाह के हवाले करता है। लिहाज़ा हुज़ूर ﷺ के हाथ पर सहाबा रज़ि. ने जो बैयत की, उसका मतलब यही था कि उन्होंने खुद को अल्लाह के सुपुर्द कर दिया। अल्लाह तो चूँकि सामने मौजूद नहीं था इसलिये बज़ाहिर यह बैयत हुज़ूर ﷺ के हाथ मुबारक पर हुई थी, मगर अल्लाह ने इसे अपनी तरफ़ मंसूब करते हुए फ़रमाया कि ऐ नबी (ﷺ) जो लोग आपसे बैयत करते हैं दरअसल वह अल्लाह से ही बैयत करते हैं और वक़्त बैयत उनके हाथों के ऊपर एक तीसरा ग़ैर मरई हाथ अल्लाह का भी मौजूद होता है। (अल फ़तह:10)

ये सौदा और ये बैय जिसका ज़िक्र आयत ज़ेरे नज़र में हुआ है ईमान का लाज़मी तक़ाज़ा है। दुआ है कि अल्लाह तआला हम में से हर एक को ये सौदा करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए कि हम अल्लाह के हाथ अपनी जानें और अपने अमवाल बेच दें। अब इस सौदे के असरात अमली तौर पर जब इंसानी शख्सियत पर मुरत्तब होंगे तो उसमें से आमाले सालेहा का ज़हूर होगा। लिहाज़ा इस कैफ़ियत का नक़्शा आईन्दा आयत में खींचा गया है।

आयत 112

اَلتَّاۗىِٕبُوْنَ الْعٰبِدُوْنَ الْحٰمِدُوْنَ السَّاۗىِٕحُوْنَ الرّٰكِعُوْنَ السّٰجِدُوْنَ

"तौबा करने वाले, (अल्लाह की) बंदगी करने वाले, (अल्लाह की) हम्द करने वाले, दुनियवी आसाइशों से लाताल्लुक़ रहने वाले, रुकूअ करने वाले, सज्दा करने वाले"

سَاۗىِٕحُوْنَ के मायने हैं "सियाहत (सफ़र) करने वाले।" लेकिन इससे मुराद महज़ सैर व सियाहत नहीं बल्कि इबादत व रियाज़त के लिये घरबार छोड़ कर निकल खड़े होना है। पिछली उम्मतों में रूहानी तरक्क़ी के लिये लोग लज्ज़ाते दुनियवी को तर्क करके और इंसानी आबादियों से लाताल्लुक़ होकर जंगलों में चले जाते थे और रहबानियत इख्तियार कर लेते थे, मगर हमारे दीन में ऐसी सियाहत और रहबानियत की इजाज़त नहीं। चुनाँचे हुज़ूर ﷺ ने फ़रमाय: ((لاَ رَہْبَانِیَّۃَ فِی الْاِسْلَامِ وَلَا سِیَاحَۃَ))[29] "इस्लाम में ना रहबानियत है ना सियाहत।" साबक़ा अदयान (पहले धर्मों) के बरअक्स इस्लाम ने सियाहत और रहबानियत का जो तसव्वुर मुतआरफ़ कराया है इसके लिये अबु अमामा बाहली रज़ि. से मरवी यह हदीस मुलाहिज़ा कीजिये कि रसूल अल्लाह ﷺ ने इरशाद फ़रमाया:

اِنَّ لِكُلِّ اُمَّةٍ سِيَاحَةً وَاِنَّ سِيَاحَةَ اُمَّتِي الْجِهَادُ فِيْ سَبِيْلِ اللهِ ' وَاِنَّ لِكُلِّ اُمَّةٍ رَہْبَانِيَّةٌ وَرَهْبَانِيَّةُ اُمَّتِي الرِّبَاطُ فِيْ نُحُوْرِ الْعَدُوِّ

"हर उम्मत के लिये सियाहत का एक तरीक़ा था और मेरी उम्मत की सियाहत जिहाद फ़ी सबिलिल्लाह है, और हर उम्मत की एक रहबानियत थी, जबकि मेरी उम्मत की रहबानियत दुश्मन के सामने डट कर खड़े होना है।"[30]

एक सहाबी रज़ि. ने अर्ज़ किया कि या रसूल अल्लाह मुझे सियाहत की इजाज़त दीजिये तो आप ﷺ ने फ़रमाया: ((اِنَّ سِیَاحَۃَ اُمَّتِی الْجِھَادُ فِیْ سَبِیْلِ اللّٰہِ))[31] गोया हमारी उम्मत के लिये 'सियाहत' का इतलाक़ जिहाद व क़िताल के लिये घर से निकलने और इस रास्ते में सऊबतें (सामान) उठाने पर होगा।

ये छ: औसाफ़ (गुण) जो ऊपर गिनवाए गए हैं इनका ताल्लुक़ इंसानी शख्सियत के नज़रियाती पहलु से है। अब इसके बाद तीन ऐसी ख़ुसूसियात का ज़िक्र होने जा रहा है जो इंसान की अमली जद्दो-जहद से मुताल्लिक़ हैं और दावत व तहरीक की सूरत में मआशरे पर असर अंदाज़ होती हैं।

اٰمِرُوْنَ بِالْمَعْرُوْفِ وَالنَّاهُوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ وَالْحٰفِظُوْنَ لِحُدُوْدِ اللّٰهِ ؕ وَبَشِّرِ الْمُؤْمِنِيْنَ ﴿۱۱۲﴾

"नेकी का हुक्म देने वाले, बदी से रोकने वाले, अल्लाह की हुदूद की हिफाज़त करने वाले। और (ऐ नबी ﷺ) आप इन अहले ईमान को बशारत दे दीजिये।"

अम्र बिल मारूफ़ (अच्छे काम का हुक्म देना) गोया दीन के लिये अमली जद्दो-जहद का नुक़्ता-ए-आग़ाज़ है। यह जद्दो-जहद जब आगे बढ़ कर नही अनिल मुन्कर बिल यद (बुराई को हाथ से रोकने) के मरहले तक पहुँचती है तो फिर इन ख़ुदाई फौजदारों की ज़रूरत पड़ती है जिनको यहाँ { وَالْحٰفِظُوْنَ لِحُدُوْدِ اللّٰهِ ؕ} का लक़ब दिया गया है। ये लोग अगर पूरी तरह मुनज्ज़म (organized) हों तो अपनी तन्ज़ीमी (संगठनात्मक) ताक़त के बल पर खड़े होकर ऐलान करें कि अब हम अपने मआशरे में मुनकरात (बुराई) का सिक्का नहीं चलने देंगे और किसी को अल्लाह की हुदूद को तोड़ने की इजाज़त नहीं देंगे। अल्लाह हुम्मा रब्बना अजअलना मिन्हुम! मन्हजे इन्क़लाबे नबवी ﷺ में इस मरहले के ज़िमन में आज इज्तेहाद की ज़रूरत है कि मौजूदा हालात में नही अनिल मुन्कर बिल यद के लिये इज्तमाई और मुनज्ज़म जद्दो-जहद की सूरत क्या होगी।

आयात 113 से 118

مَا كَانَ لِلنَّبِيِّ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْۤا اَنْ يَّسْتَغْفِرُوْا لِلْمُشْرِكِيْنَ وَلَوْ كَانُوْۤا اُولِيْ قُرْبٰى مِنْۢ بَعْدِ مَا تَبَيَّنَ لَهُمْ اَنَّهُمْ اَصْحٰبُ الْجَحِيْمِ ﴿۱۱۳﴾ وَمَا كَانَ اسْتِغْفَارُ اِبْرٰهِيْمَ لِاَبِيْهِ اِلَّا عَنْ مَّوْعِدَةٍ وَّعَدَهَاۤ اِيَّاهُ ۚ فَلَمَّا تَبَيَّنَ لَهٗۤ اَنَّهٗ عَدُوٌّ لِّلّٰهِ تَبَرَّاَ مِنْهُ ؕ اِنَّ اِبْرٰهِيْمَ لَاَوَّاهٌ حَلِيْمٌ ﴿۱۱۴﴾ وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُضِلَّ قَوْمًۢا بَعْدَ اِذْ هَدٰىهُمْ حَتّٰى يُبَيِّنَ لَهُمْ مَّا يَتَّقُوْنَ ؕ اِنَّ اللّٰهَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمٌ ﴿۱۱۵﴾ اِنَّ اللّٰهَ لَهٗ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ؕ يُحْيٖ وَيُمِيْتُ ؕ وَمَا لَكُمْ مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ مِنْ وَّلِيٍّ وَّلَا نَصِيْرٍ ﴿۱۱۶﴾ لَقَدْ تَّابَ اللّٰهُ عَلَى النَّبِيِّ وَالْمُهٰجِرِيْنَ وَالْاَنْصَارِ الَّذِيْنَ اتَّبَعُوْهُ فِيْ سَاعَةِ الْعُسْرَةِ مِنْۢ بَعْدِ مَا كَادَ يَزِيْغُ قُلُوْبُ فَرِيْقٍ مِّنْهُمْ ثُمَّ تَابَ عَلَيْهِمْ ؕ اِنَّهٗ بِهِمْ رَءُوْفٌ رَّحِيْمٌ ۙ﴿۱۱۷﴾ وَّعَلَى الثَّلٰثَةِ الَّذِيْنَ خُلِّفُوْا ؕ حَتّٰۤى اِذَا ضَاقَتْ عَلَيْهِمُ الْاَرْضُ بِمَا رَحُبَتْ وَضَاقَتْ عَلَيْهِمْ اَنْفُسُهُمْ وَظَنُّوْۤا اَنْ لَّا مَلْجَاَ مِنَ اللّٰهِ اِلَّاۤ اِلَيْهِ ؕ ثُمَّ تَابَ عَلَيْهِمْ لِيَتُوْبُوْا ؕ اِنَّ اللّٰهَ هُوَ التَّوَّابُ الرَّحِيْمُ ﴿۱۱۸﴾

आयत 113

مَا كَانَ لِلنَّبِيِّ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْۤا اَنْ يَّسْتَغْفِرُوْا لِلْمُشْرِكِيْنَ وَلَوْ كَانُوْۤا اُولِيْ قُرْبٰى

"नबी और अहले ईमान के लिये यह रवा नहीं कि वह इस्तगफार करें मुशरिकीन के लिये ख्वाह वह उनके क़राबतदार ही हों"

مِنْۢ بَعْدِ مَا تَبَيَّنَ لَهُمْ اَنَّهُمْ اَصْحٰبُ الْجَحِيْمِ

"इसके बाद जबकि उन पर वाज़ेह हो चुका कि वह लोग जहन्नमी हैं।"

आयत 114

وَمَا كَانَ اسْتِغْفَارُ اِبْرٰهِيْمَ لِاَبِيْهِ اِلَّا عَنْ مَّوْعِدَةٍ وَّعَدَهَآ اِيَّاهُ ۚ

"और नहीं था इस्तगफार करना इब्राहिम अलै. का अपने वालिद के हक़ में मगर एक वादे की बुनियाद पर जो उन्होंने उससे किया था।"

जब हज़रत इब्राहिम अलै. के वालिद ने आपको घर से निकाला था तो जाते हुए आपने यह वादा किया था, उस वादे का ज़िक्र सूरह मरियम में इस तरह किया गया है: {قَالَ سَلٰمٌ عَلَيْكَ ۚ سَاَسْتَغْفِرُ لَكَ رَبِّيْ ۭ اِنَّهٗ كَانَ بِيْ حَفِيًّا} "मैं अपने रब से आपके लिये बख्शीश की दरख्वास्त करूँगा, बेशक वह मुझ पर बड़ा मेहरबान है।"

فَلَمَّا تَبَيَّنَ لَهٗٓ اَنَّهٗ عَدُوٌّ لِّلّٰهِ تَبَرَّاَ مِنْهُ ۭ اِنَّ اِبْرٰهِيْمَ لَاَوَّاهٌ حَلِيْمٌ

"और जब आप पर वाज़ेह हो गया कि वह अल्लाह का दुश्मन है तो आपने इससे ऐलाने बेज़ारी कर दिया। यक़ीनन इब्राहिम बहुत दर्दे दिल रखने वाले और हलीमुल तबीअ थे।"

हज़रत इब्राहिम अलै. वादे के मुताबिक़ अपने वालिद की ज़िंदगी में उसके लिये दुआ करते रहे कि जब तक वह ज़िन्दा था तो उम्मीद थी कि शायद अल्लाह तआला उसे हिदायत की तौफ़ीक़ दे दे, लेकिन जब उसकी मौत वाक़ेअ हो गई तो आपने इस्तगफार बंद कर दिया कि ज़िंदगी में जब वह कुफ़्र पर ही अड़ा रहा और इसी हालत में उसकी मौत वाक़ेअ हो गई तो साबित हो गया कि अब उसके लिये तौबा का दरवाज़ा बंद हो गया है।

आयत 115

وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُضِلَّ قَوْمًۢا بَعْدَ اِذْ هَدٰىهُمْ حَتّٰى يُبَيِّنَ لَهُمْ مَّا يَتَّقُوْنَ ۭ

"और अल्लाह का यह तरीक़ा नहीं है कि किसी क़ौम को गुमराह कर दे इसके बाद कि उन्हें हिदायत दी हो जब तक उन पर वाज़ेह ना कर दे कि उन्हें किस चीज़ से बचना है।"

यह गोया माफ़ी का ऐलान है उन लोगों के लिये जो इस हुक्म के नाज़िल होने से पहले अपने मुशरिक वालिदैन या रिश्तेदारों के लिये दुआ करते रहे थे।

اِنَّ اللّٰهَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمٌ

"यक़ीनन अल्लाह हर शय का जानने वाला है।"

आयत 116

اِنَّ اللّٰهَ لَهٗ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۭ يُحْيٖ وَيُمِيْتُ ۭ وَمَا لَكُمْ مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ مِنْ وَّلِيٍّ وَّلَا نَصِيْرٍ

"यक़ीनन अल्लाह ही के लिये है आसमानों और ज़मीन की बादशाही। वही ज़िन्दा रखता है और वही मौत देता है। और तुम्हारे लिये अल्लाह के सिवा नहीं है कोई हिमायती और ना कोई मददगार।"

आयत 117

لَقَدْ تَّابَ اللّٰهُ عَلَى النَّبِيِّ وَالْمُهٰجِرِيْنَ وَالْاَنْصَارِ الَّذِيْنَ اتَّبَعُوْهُ فِيْ سَاعَةِ الْعُسْرَةِ

"अल्लाह मेहरबान हुआ नबी (ﷺ) पर, और मुहाजरीन व अंसार पर भी, जिन्होंने आपका इत्तेबाअ किया (साथ दिया) मुश्किल वक़्त में"

यह तबूक की मुहिम की तरफ़ इशारा है। तारीख में यह मुहिम "जैश अल उसरह" के नाम से मशहूर है। यह वह ज़माना था जब खुश्क साली के बाइस मदीने में क़हत का समां था। इन हालात में इतने बड़े लश्कर का इतनी लम्बी मुसाफ़त पर वक़्त की सुपर पावर से नबर्द आज़मा होने (निपटने) के लिये जाना वाक़ई बहुत बड़ी आज़माइश थी। जो लोग इस आज़माइश में साबित क़दम रहे, यह उनके लिये रहमत व शफक्क़त का एक ऐलाने आम है।

مِنْۢ بَعْدِ مَا كَادَ يَزِيْغُ قُلُوْبُ فَرِيْقٍ مِّنْهُمْ

"इसके बाद कि उनमें से एक गिरोह के दिल में कुछ कजी आने लगी थी"

बर बनाए तबअ बशरी (as a human nature) कहीं ना कहीं, कभी ना कभी इंसान में कुछ कमज़ोरी आ ही जाती है। जैसे गज़वा-ए-ओहद में भी दो मुसलमान क़बाइल बनु हारसा और बनु सलमा के लोगों के दिलों में आरज़ी तौर पर थोड़ी सी कमज़ोरी आ गई थी।

ثُمَّ تَابَ عَلَيْهِمْ ۭ اِنَّهٗ بِهِمْ رَءُوْفٌ رَّحِيْمٌ ۙ

"फ़िर अल्लाह ने उन पर नज़र-ए-रहमत फ़रमाई। यक़ीनन वह उनके हक़ में बहुत मेहरबान, रहम फरमाने वाला है।"

وَّعَلَى الثَّلٰثَةِ الَّذِيْنَ خُلِّفُوْا ۭ

"और उन तीन पर भी (अल्लाह ने रहमत की निगाह की) जिनका मामला मौअख्खर कर दिया गया था।"

ये तीन सहाबा कअब बिन मालिक, हिलाल बिन उमैय्या और मरारह बिन रबीअ रज़ि. के लिये ऐलाने माफ़ी है। इन तीन असहाब रज़ि. का ज़िक्र आयत 106 में हुआ था और वहाँ इनके मामले को मौअख्खर कर दिया गया था। पचास दिन के मआशरती मक़ाताअ (social boycott) की सज़ा के बाद इनकी माफ़ी का भी ऐलान कर दिया गया और इन्हें इस हुक्म की सूरत में क़ुबूलियते तौबा की सनद अता हुई।

حَتّٰٓى اِذَا ضَاقَتْ عَلَيْهِمُ الْاَرْضُ بِمَا رَحُبَتْ وَضَاقَتْ عَلَيْهِمْ اَنْفُسُهُمْ وَظَنُّوْٓا اَنْ لَّا مَلْجَاَ مِنَ اللّٰهِ اِلَّآ اِلَيْهِ ۭ

"यहाँ तक कि ज़मीन अपनी तमाम तर कुशादगी के बावजूद इन पर तंग पड़ गई और इन पर अपनी जानें भी बोझ बन गईं और इन्हें यक़ीन हो गया कि अल्लाह के सिवा कोई और जाए पनाह है ही नहीं।"

यह ऐसी कैफ़ियत है कि कोई बच्चा माँ से पिटता है मगर इसके बाद उसी से लिपटता है। अल्लाह के बन्दों पर भी अगर अल्लाह की तरफ़ से सख्ती आती है, कोई सज़ा मिलती है तो ना सिर्फ़ वह उस सख्ती को ख़ुशदिली और सब्र से बरदाश्त करते हैं, बल्कि पनाह के लिये रुजूअ भी उसी की तरफ़ करते हैं, क्योंकि उन्हें यक़ीन होता है कि उन्हें पनाह मिलेगी तो उसी के हुज़ूर मिलेगी, उनके दुखों का मदावा (ईलाज) होगा तो उसी की जानिब से होगा। अल्लामा इक़बाल ने इस हक़ीक़त को कैसे ख़ूबसुरत अल्फ़ाज़ का जामा पहनाया है:

ना कहीं जहाँ में अमाँ मिली, जो अमाँ मिली तो कहाँ मिली
मेरे जुर्म-ए-खाना ख़राब को, तेरे अफ़्वे बन्दा नवाज़ में

ثُمَّ تَابَ عَلَيْهِمْ لِيَتُوْبُوْا ۭ اِنَّ اللّٰهَ هُوَ التَّوَّابُ الرَّحِيْمُ ۝

“तो उसने उनकी तौबा क़ुबूल फ़रमाई ताकि वह भी फ़िर मुतवज्जह हो जाएँ। यक़ीनन अल्लाह बहुत तौबा क़ुबूल करने वाला, बहुत ज़्यादा रहम करने वाला है।”

ताकि वह अल्लाह से अपने ताल्लुक़ को मज़बूत कर लें और अपनी कमज़ोरियों और कोताहियों को दूर कर लें।

आयात 119 से 122 तक

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَكُوْنُوْا مَعَ الصّٰدِقِيْنَ ۝ مَا كَانَ لِاَهْلِ الْمَدِيْنَةِ
وَمَنْ حَوْلَهُمْ مِّنَ الْاَعْرَابِ اَنْ يَّتَخَلَّفُوْا عَنْ رَّسُوْلِ اللّٰهِ وَلَا يَرْغَبُوْا بِاَنْفُسِهِمْ
عَنْ نَّفْسِهٖ ۭ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ لَا يُصِيْبُهُمْ ظَمَاٌ وَّلَا نَصَبٌ وَّلَا مَخْمَصَةٌ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَلَا
يَطَـُٔوْنَ مَوْطِئًا يَّغِيْظُ الْكُفَّارَ وَلَا يَنَالُوْنَ مِنْ عَدُوٍّ نَّيْلًا اِلَّا كُتِبَ لَهُمْ بِهٖ عَمَلٌ
صَالِحٌ ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُضِيْعُ اَجْرَ الْمُحْسِنِيْنَ ۝ وَلَا يُنْفِقُوْنَ نَفَقَةً صَغِيْرَةً وَّلَا
كَبِيْرَةً وَّلَا يَقْطَعُوْنَ وَادِيًا اِلَّا كُتِبَ لَهُمْ لِيَجْزِيَهُمُ اللّٰهُ اَحْسَنَ مَا كَانُوْا
يَعْمَلُوْنَ ۝ وَمَا كَانَ الْمُؤْمِنُوْنَ لِيَنْفِرُوْا كَاۗفَّةً ۭ فَلَوْلَا نَفَرَ مِنْ كُلِّ فِرْقَةٍ مِّنْهُمْ
طَاۗىِٕفَةٌ لِّيَتَفَقَّهُوْا فِي الدِّيْنِ وَلِيُنْذِرُوْا قَوْمَهُمْ اِذَا رَجَعُوْٓا اِلَيْهِمْ لَعَلَّهُمْ
يَحْذَرُوْنَ ۝

आयत 119

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَكُوْنُوْا مَعَ الصّٰدِقِيْنَ ۝

“ऐ अहले ईमान! अल्लाह का तक़वा इख्तियार करो और सच्चे लोगों की मईयत (साथ) इख्तियार करो।”

यह गोया जमाती जिंदगी इख्तियार करने का हुक्म है। नेक लोगों की सोहबत इख्तियार करने और जमाती ज़िंदगी से मुन्सलिक (attached) रहने के बहुत से फ़ायदे और बहुत सी बरकतें हैं, जैसा कि इससे पहले हम सूरतुल अनआम की आयत 71 में पढ़ आए हैं: { لَهٗٓ اَصْحٰبٌ يَّدْعُوْنَهٗٓ اِلَى الْهُدَى ائْتِنَا }। जमाती ज़िंदगी दरअसल एक क़ाफ़िले की मानिन्द है। क़ाफ़िले में दौराने सफ़र अगर किसी साथी की हिम्मत जवाब दे रही हो या कोई माज़ूरी (विकलांगता) आड़े आ रही हो तो दूसरे साथी उसे सहारा देने, हाथ पकड़ने और हिम्मत बंधाने के लिये मौजूद होते हैं।

आयत 120

مَا كَانَ لِاَهْلِ الْمَدِيْنَةِ وَمَنْ حَوْلَهُمْ مِّنَ الْاَعْرَابِ اَنْ يَّتَخَلَّفُوْا عَنْ رَّسُوْلِ اللّٰهِ وَلَا يَرْغَبُوْا بِاَنْفُسِهِمْ عَنْ نَّفْسِهٖ ۭ

“अहले मदीना और इनके इर्द-गिर्द के बद्दू लोगों के लिये रवा नहीं था कि वह अल्लाह के रसूल (ﷺ) को छोड़ कर पीछे बैठे रहते और ना यह कि अपनी जानों को आपकी जान से बढ़ कर अज़ीज़ रखते।”

गज़वा-ए-तबूक के लिये निकलते हुए मदीने के माहौल में “तपती राहें मुझको पुकारें, दामन पकड़े छाँव घनेरी” वाला मामला था। लिहाज़ा जब अल्लाह के रसूल ﷺ इन तपती राहों की तरफ़ कूच फ़रमा रहे थे तो किसी ईमान के दावेदार को यह ज़ेब नहीं देता था कि वह आपका साथ छोड़ कर पीछे रह जाए, आपकी जान से बढ़ कर अपनी जान की आफ़ियत की फ़िक्र करे और आपके सफ़र की सऊबतों पर अपनी आसाइशों को तरजीह दे।

ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ لَا يُصِيْبُهُمْ ظَمَاٌ وَّلَا نَصَبٌ وَّلَا مَخْمَصَةٌ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَلَا

“यह इसलिये कि उन्हें प्यास, मशक़्क़त और फ़ाक़े की (सूरत में) जो तकलीफ़ पहुँचती है अल्लाह की राह में, और जहाँ

يَطَــُٔوْنَ مَوْطِئًا يَّغِيْظُ الْكُفَّارَ وَلَا يَنَالُوْنَ مِنْ عَدُوٍّ نَّيْلًا اِلَّا كُتِبَ لَهُمْ بِهٖ عَمَلٌ صَالِحٌ

कहीं भी वह क़दम रखते हैं कुफ्फ़ार (के दिलों) को जलाते हुए और दुश्मन के मुक़ाबले में कोई भी कामयाबी हासिल करते हैं, तो उनके लिये इस (सब कुछ) के एवज़ नेकियों का अन्दारज़ होता रहता है।"

अहले ईमान जब अल्लाह के रास्ते में निकलते हैं तो उनकी हर मशक्क़त और हर तकलीफ़ के एवज़ अल्लाह तआला उनके नेकियों के ज़खीरे में मुसलसल इज़ाफ़ा फ़रमाते रहते हैं।

اِنَّ اللّٰهَ لَا يُضِيْعُ اَجْرَ الْمُحْسِنِيْنَ

"यक़ीनन अल्लाह नेक लोगों के अज्र को ज़ाया नहीं करता।"

आयत 121

وَلَا يُنْفِقُوْنَ نَفَقَةً صَغِيْرَةً وَّلَا كَبِيْرَةً وَّلَا يَقْطَعُوْنَ وَادِيًا اِلَّا كُتِبَ لَهُمْ

"और जो भी वह ख़र्च करते हैं कोई नफ़क़ा, छोटा हो या बड़ा और तय करते हैं कोई वादी तो (उनका एक-एक अमल) उनके लिये लिख लिया जाता है"

لِيَجْزِيَهُمُ اللّٰهُ اَحْسَنَ مَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ

"ताकि अल्लाह बदला दे उन्हें बहुत ही उम्दा उसका जो अमल वह करते रहे।"

आयत 122

وَمَا كَانَ الْمُؤْمِنُوْنَ لِيَنْفِرُوْا كَاۗفَّةً

"और अहले ईमान के लिये यह तो मुमकिन नहीं है कि वह सब के सब निकल आएँ।"

मदीना के मज़ाफात (आस-पास के इलाक़ों) में बसने वाले बद्दू क़बाइल का तज़किरा पिछली आयत (97) में हो चुका है। यह बद्दू लोग कुफ़्र व निफ़ाक़ में बहुत ज़्यादा सख्त थे और इसका सबब इल्मे दीन से इनकी नावाक़फ़ियत थी। इसलिये कि इन्हें हुज़ूर ﷺ की सोहबत से फैज़याब होने का मौक़ा नहीं मिल रहा था। अब इसके लिये यह तो मुमकिन नहीं था कि सारे बादिया नशीन लोग अपनी-अपनी आबादियाँ छोड़ते और मदीने में आकर आबाद हो जाते। चुनाँचे यहाँ इस मसले का हल बताया जा रहा है।

فَلَوْلَا نَفَرَ مِنْ كُلِّ فِرْقَةٍ مِّنْهُمْ طَاۗىِٕفَةٌ لِّيَتَفَقَّهُوْا فِي الدِّيْنِ

"तो ऐसा क्यों ना हुआ कि निकलता इनकी हर जमात में से एक गिरोह ताकि वह दीन का फ़हम हासिल करते"

यहाँ इस मुश्किल का हल यह बताया गया है कि हर इलाक़े और हर क़बीले से चंद लोग आएँ और सोहबते नबवी ﷺ से फैज़याब हों।

وَلِيُنْذِرُوْا قَوْمَهُمْ اِذَا رَجَعُوْٓا اِلَيْهِمْ لَعَلَّهُمْ يَحْذَرُوْنَ

"और वह अपने लोगों को ख़बरदार करते जब उनकी तरफ़ वापस लौटते ताकि वह भी नाफ़रमानी से बचते।"

यहाँ इस सिलसिले में बाक़ायदा एक निज़ाम वज़अ (set up) करने की हिदायत कर दी गई है कि मुख्तलिफ़ इलाक़ों से क़बाइल के नुमाइंदे आएँ, मदीने में क़याम करें, रसूल अल्लाह ﷺ की सोहबत में रहें, अकाबर (बड़े-बड़े बुज़ुर्ग) सहाबा रज़ि. की तरबियत से इस्तफ़ादा करें, अहकामे दीन को समझें और फिर अपने-अपने इलाक़ों में वापस जाकर इस तालीम को आम करें।

आयात 123 से 129 तक

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا قَاتِلُوا الَّذِيْنَ يَلُوْنَكُمْ مِّنَ الْكُفَّارِ وَلْيَجِدُوْا فِيْكُمْ غِلْظَةً ؕ
وَاعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ مَعَ الْمُتَّقِيْنَ ﴿۱۲۳﴾ وَاِذَا مَآ اُنْزِلَتْ سُوْرَةٌ فَمِنْهُمْ مَّنْ يَّقُوْلُ اَيُّكُمْ
زَادَتْهُ هٰذِهٖٓ اِيْمَانًا ۚ فَاَمَّا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا فَزَادَتْهُمْ اِيْمَانًا وَّهُمْ يَسْتَبْشِرُوْنَ ﴿۱۲۴﴾
وَاَمَّا الَّذِيْنَ فِيْ قُلُوْبِهِمْ مَّرَضٌ فَزَادَتْهُمْ رِجْسًا اِلٰى رِجْسِهِمْ وَمَاتُوْا وَهُمْ
كٰفِرُوْنَ ﴿۱۲۵﴾ اَوَلَا يَرَوْنَ اَنَّهُمْ يُفْتَنُوْنَ فِيْ كُلِّ عَامٍ مَّرَّةً اَوْ مَرَّتَيْنِ ثُمَّ لَا يَتُوْبُوْنَ
وَلَا هُمْ يَذَّكَّرُوْنَ ﴿۱۲۶﴾ وَاِذَا مَآ اُنْزِلَتْ سُوْرَةٌ نَّظَرَ بَعْضُهُمْ اِلٰى بَعْضٍ ؕ هَلْ
يَرٰىكُمْ مِّنْ اَحَدٍ ثُمَّ انْصَرَفُوْا ؕ صَرَفَ اللّٰهُ قُلُوْبَهُمْ بِاَنَّهُمْ قَوْمٌ لَّا يَفْقَهُوْنَ ﴿۱۲۷﴾
لَقَدْ جَآءَكُمْ رَسُوْلٌ مِّنْ اَنْفُسِكُمْ عَزِيْزٌ عَلَيْهِ مَا عَنِتُّمْ حَرِيْصٌ عَلَيْكُمْ
بِالْمُؤْمِنِيْنَ رَءُوْفٌ رَّحِيْمٌ ﴿۱۲۸﴾ فَاِنْ تَوَلَّوْا فَقُلْ حَسْبِيَ اللّٰهُ ۖ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ؕ عَلَيْهِ
تَوَكَّلْتُ وَهُوَ رَبُّ الْعَرْشِ الْعَظِيْمِ ﴿۱۲۹﴾

आयत 123

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا قَاتِلُوا الَّذِيْنَ يَلُوْنَكُمْ مِّنَ الْكُفَّارِ وَلْيَجِدُوْا فِيْكُمْ غِلْظَةً ؕ

"ऐ अहले ईमान! जंग करो इन काफ़िरों से जो तुमसे क़रीब हैं और वह तुम्हारे अन्दर सख्ती पाएँ।"

इस हुक्म में इशारा है कि रसूल अल्लाह ﷺ की दावत के बैयनल अक़वामी (international) और आफ़ाक़ी (universal) दौर का आग़ाज़ हो चुका है, अब इस दावत को चहार सू (चारों दिशा) फैलना है और दारुल इस्लाम की सरहदों को वसीअ (बड़ा) होना है। चुनाँचे हुक्म दिया जा रहा है कि इस्लामी हुकूमत की सरहदों पर जो कुफ्फ़ार बसते हैं उनसे क़िताल करो, और जैसे-जैसे ये सरहदें आगे बढती जाएँ तुम्हारे क़िताल का सिलसिला भी उनके साथ-साथ आगे बढ़ता चला जाए, हत्ता कि अल्लाह का दीन पूरी दुनिया पर ग़ालिब आ जाए। जैसे सूरतुल अनफ़ाल में जज़ीरा नुमाए अरब की हद तक क़िताल जारी रखने का हुक्म हुआ था: {وَقَاتِلُوْهُمْ حَتّٰى لَا تَكُوْنَ فِتْنَةٌ وَّيَكُوْنَ الدِّيْنُ كُلُّهٗ لِلّٰهِ} (आयत 39) यानि जब तक जज़ीरा नुमाए अरब से कुफ़्र व शिर्क का खात्मा नहीं हो जाता और अल्लाह का दीन इस पूरे इलाक़े में ग़ालिब नहीं हो जाता यह जंग जारी रहेगी। बहरहाल आयत ज़ेरे नज़र में गलबा-ए-दीन के लिये बैयनल अक़वामी सतह पर जद्दो-जहद के लिये अल्लाह का वाज़ेह हुक्म मौजूद है और इस सिलसिले में इस्लाम का चार्टर भी। इसी पर अमल करते हुए जज़ीरा नुमाए अरब से इस्लामी अफ़वाज जिहाद के लिये निकली थीं और फिर इस्लामी सरहदों का दायरा वसीअ होता गया।

وَاعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ مَعَ الْمُتَّقِيْنَ ﴿۱۲۳﴾

"और जान लो कि अल्लाह मुत्तक़ियों के साथ है।"

आयत 24

وَاِذَا مَآ اُنْزِلَتْ سُوْرَةٌ فَمِنْهُمْ مَّنْ يَّقُوْلُ اَيُّكُمْ زَادَتْهُ هٰذِهٖٓ اِيْمَانًا ۚ

"और जब कोई सूरत नाज़िल होती है तो इनमें से बाज़ (मुनाफ़िक़ीन आपस में) कहते हैं कि इसने तुम में से किसके ईमान में इज़ाफ़ा किया?"

इससे पहले सूरतुल अनफ़ाल (आयत 2) में अहले ईमान का ज़िक्र इस हवाले से हो चुका है कि जब इनको अल्लाह की आयात पढ़ कर सुनाई जाती हैं तो इनके ईमान में इज़ाफ़ा हो जाता है। मुनाफ़िक़ीन इस पर तन्ज और इस्तहज़ा (हँसी-मज़ाक) करते थे और जब भी कोई ताज़ा वही नाज़िल होती तो उसका तमस्खुर (मज़ाक) उड़ाते हुए एक-दूसरे से पूछते कि हाँ भई इस सूरत को सुन कर किस-किस के ईमान में इज़ाफा हुआ है?

فَاَمَّا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا فَزَادَتۡهُمۡ اِيۡمَانًا وَّهُمۡ يَسۡتَبۡشِرُوۡنَ ﴿۱۲۴﴾

"तो जो लोग वाक़ई ईमान वाले हैं वह उनके ईमान में तो यक़ीनन इज़ाफा करती है और वह ख़ुशियाँ मनाते हैं।"

अल्लाह का कलाम सुन कर हक़ीक़ी मोमिनीन के ईमान में यक़ीनन इज़ाफ़ा भी होता है और वह हर वही के नाज़िल होने पर ख़ुशियाँ भी मनाते हैं कि अल्लाह ने अपने कलाम से मज़ीद उन्हें नवाज़ा है और उनके ईमान को जिला बख़्शी है।

आयत 125

وَاَمَّا الَّذِيۡنَ فِىۡ قُلُوۡبِهِمۡ مَّرَضٌ فَزَادَتۡهُمۡ رِجۡسًا اِلٰى رِجۡسِهِمۡ وَمَاتُوۡا وَهُمۡ كٰفِرُوۡنَ ﴿۱۲۵﴾

"रहे वह लोग जिनके दिलों में रोग है तो वह उन (के अन्दर) की गंदगी पर मज़ीद गंदगी का इज़ाफ़ा कर देती है और वह मरते हैं इसी हाल में कि वह काफ़िर होते हैं।"

आयत 126

اَوَلَا يَرَوۡنَ اَنَّهُمۡ يُفۡتَنُوۡنَ فِىۡ كُلِّ عَامٍ مَّرَّةً اَوۡ مَرَّتَيۡنِ

"क्या ये (मुनाफ़िक़ीन) देखते नहीं हैं कि हर साल इन्हें आज़माया जाता है एक बार या दो बार"

क़िताल का मरहला हो या किसी और आज़माइश का मौक़ा, वक़्फ़े-वक़्फ़े से साल में एक या दो मरतबा मुनाफ़िक़ीन के इम्तिहान का सामान हो ही जाता है, जिससे उनकी मुनाफ़क़त का परदा चाक होता रहता है।

ثُمَّ لَا يَتُوۡبُوۡنَ وَلَا هُمۡ يَذَّكَّرُوۡنَ ﴿۱۲۶﴾

"फ़िर भी ना तो ये लोग तौबा करते हैं और ना ही नसीहत अख़ज़ करते हैं।"

आयत 127

وَاِذَا مَاۤ اُنۡزِلَتۡ سُوۡرَةٌ نَّظَرَ بَعۡضُهُمۡ اِلٰى بَعۡضٍ ؕ

"और जब कोई सूरत नाज़िल होती है तो ये लोग आपस में एक-दूसरे को देखते हैं"

जब क़िताल के बारे में अहकाम नाज़िल होते हैं तो रसूल अल्लाह ﷺ की महफ़िल में मौजूद मुनाफ़िक़ीन कनखियों से एक-दूसरे को इशारे करते हैं।

هَلۡ يَرٰىكُمۡ مِّنۡ اَحَدٍ ثُمَّ انۡصَرَفُوۡا ؕ

"कि तुम्हें कोई देख तो नहीं रहा, फिर वह वहाँ से ख़िसक जाते हैं।"

صَرَفَ اللّٰهُ قُلُوۡبَهُمۡ بِاَنَّهُمۡ قَوۡمٌ لَّا يَفۡقَهُوۡنَ ﴿۱۲۷﴾

"(दरअसल) अल्लाह ने इनके दिलों को फेर दिया है, इसलिये कि ये ऐसे लोग हैं जो समझ नहीं रखते।"

इस सूरत की आख़री दो आयात क़ुरान मज़ीद की अज़ीम-तरीन आयात में से हैं।

आयत 128

لَقَدۡ جَآءَكُمۡ رَسُوۡلٌ مِّنۡ اَنۡفُسِكُمۡ عَزِيۡزٌ عَلَيۡهِ مَا عَنِتُّمۡ

"(ऐ लोगो देखो!) आ चुका है तुम्हारे पास तुम ही में से एक रसूल, बहुत भारी गुज़रती है आप पर तुम्हारी तकलीफ़"

हक़ीक़त यह है कि हर वह शय जो तुम्हें मुसीबत और हलाकत से दो-चार करने वाली हो वह उनके दिल पर निहायत शाक़ (कठिन) है। आप ﷺ तुम्हें दुनिया और आख़िरत दोनों की हलाकतों और मुसीबतों से महफ़ूज़ और दोनों की सआदतों से बहरामंद देखना चाहते हैं।

حَرِيْصٌ عَلَيْكُمْ بِالْمُؤْمِنِيْنَ رَءُوْفٌ رَّحِيْمٌ ﴿١٢٨﴾

"तुम्हारे हक़ में आप (भलाई के) बहुत हरीस हैं, अहले ईमान के लिये शफ़ीक़ भी हैं, रहीम भी।"

आप ﷺ की शदीद ख्वाहिश है कि अल्लाह तआला तमाम खैर, सारी खूबियाँ और सारी भलाईयाँ तुम लोगों को अता फ़रमा दे।

आयत 129

فَاِنْ تَوَلَّوْا فَقُلْ حَسْبِيَ اللّٰهُ ۖ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ۭ

"फ़िर भी अगर ये लोग रूगरदानी करें तो (ऐ नबी ﷺ!) कह दीजिये कि मेरे लिये अल्लाह काफी है, उसके सिवा कोई माअबूद नहीं।"

عَلَيْهِ تَوَكَّلْتُ وَهُوَ رَبُّ الْعَرْشِ الْعَظِيْمِ ﴿١٢٩﴾

"उसी पर मैंने तवक्कुल किया और वह बहुत बड़े अर्श का मालिक है।"

अल्लाह तआला के अर्श की कैफ़ियत और अज़मत हमारे तस्सवुर में नहीं आ सकती।

❀بارک اللہ لی و لکم فی القرآن العظیم و نفعنی و ایا کم بالآیات والذکر الحکیم۔

❀ ❀